प्रकाशक :

साधन प्रकाशन

डैम्पियर नगर, मथुरा.

प्रथम संस्करण १९८९

कीमत : १५ रुपये

मुद्रक :

साधन प्रेस

डैम्पियर नगर, मथुरा.

दो शब्द

ग़ाफिल बरनी सत्संगी तो है ही—'साधन' के लखको में से भी एक हैं। उन्हे प्रथम दर्शन मे 'साधन' के लिए लेख लिखने की प्रेरणा तथा आदेश पूज्य पण्डित जी महाराज ने दिया था। तब से यथासम्भव वह लिखते रहते हैं। उन्होने गजले भी लिखी है, लेख भी।

प्रस्तुत संकलन मे पाँच सूफी सन्तो की जीवनी पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है, साथ ही—उनकी वाणी का चयन भी इस ढंग से किया गया है कि साधक मात्र के लिए उपयोगी बन गया है। यह पुस्तक पाठकों के लिए प्रेरणा का काम करेगी, ऐसा विश्वास है।

ओमप्रकाश मिश्र

१२ दिसम्बर १९८८

निवेदन

सूफी-सन्तो के जीवन-चरित्र पढते-पढते मेरे दिल में यह विचार आया कि जो भाई उर्दू-भाषा नही जानते वह तो इन ईश्वर-भक्तो के बारे मे जानने और आध्यात्मिक-लाभ उठाने से वंचित रह जाएँगे। इस विचार के आने के बाद मैं भिन्न-भिन्न पुस्तकों से सहायता लेकर सूफी-सन्तो के जीवन-चरित्र "साधन" पत्रिका मे प्रकाशनार्थ भेजता रहा जो गुरु महाराज की कृपा से प्रकाशित होते रहे। परन्तु चूंकि "साधन" में तीन-चार पृष्ठो से अधिक बड़ा जीवन-चरित्र लिखना मुझे उचित नही लगता था, इसलिए उन जीवन-चरित्रो को बहुत सक्षेप में लिखता था और उनके जीवन की बहुत-सी घटनाएँ छोड़नी पड़ती थी। उस समय यह परेशानी पेश आती थी कि किस घटना को लिखूं और किसको छोड़ूं, जबकि ईश्वर-भक्तो से सम्बन्धित हर घटना दिल के मन्दिर के किसी न किसी अँधेरे

को दूर करने वाली होती है। मेरा दिल यही चाहता रहता कि उनके जीवन की अधिक से अधिक घटनाएँ हिन्दी के पाठको तक पहुँचनी चाहिए—पता नही कौन-सी घटना किस मनुष्य के जीवन का मार्ग बदल दे और उसका कल्याण हो जाए। इसी विचार से यह पुस्तक हिन्दी-पाठको की सेवा में सादर समर्पित है।

अपने किसी विचार अथवा किसी अवस्था को बताने के लिए हमे शब्दो का सहारा लेना पड़ता है। इसके लिए दो बाते आवश्यक हैं। एक—उस विचार अथवा अवस्था के अनुरूप शब्द हमें आने चाहिए और दूसरी—उन शब्दों का अर्थ उस मनुष्य को आना चाहिए जिसे हम उस विचार अथवा अवस्था को बताना चाहते है। सांसारिक विचारो और अवस्थाओं को व्यक्त करना भी कभी-कभी बड़ा कठिन हो जाता है, सही-सही शब्द ही नही मिल पाते तब आध्यात्मिक-रहस्य सम्बन्धी विचारो और अवस्थाओं को व्यक्त करना तो करीब-करीब असम्भव-सा ही है। फिर भी महात्माओ ने, जिन्होने ईश्वर के रहस्यो का ज्ञान प्राप्त किया, ऐसे शब्दो का आविष्कार किया जो उन आध्यात्मिक विचारो और अवस्थाओं को पूर्णरूप से व्यक्त तो नही करते, परन्तु फिर भी उन विचारो और अवस्थाओ का सांकेतिक विवरण अवश्य प्रस्तुत करते हैं। अब यह उस मनुष्य के ज्ञान और समझ पर निर्भर करता है कि वह

इन इशारो को कहाँ तक समझ पाता है। इसी कारण बहुत से महात्मा अपने शिष्यो को पहले उन रहस्यो का दर्शन करा दिया करते थे और फिर उनका वर्णन करते थे, इससे उन रहस्यमयी बातो को समझने मे शिष्यो को कोई कठिनाई नहीं आती थी। परमपूज्य समर्थ गुरु महात्मा रामचन्द्र जी महाराज का भी यही तरीका था—ऐसा गुरु महाराज ने अपनी पुस्तको में लिखा है। इस पुस्तक मे वर्णित सूफी-सन्तो का जीवन-चरित्र लिखते हुए ऐसे ही आध्यात्मिक शब्दो का प्रयोग आध्यात्मिक रहस्यों का वर्णन करते समय किया गया है। यद्यपि हिन्दी मे उनका अर्थ दिया है और यथायोग्य हिन्दी शब्दो का प्रयोग भी किया गया है फिर भी जो बात समझाना चाहते है वह शब्दो द्वारा समझाई नही जा सकती—यह गूंगे के गुड़ के स्वाद-सी पहेली है। मेरी इस असमर्थता को ध्यान मे रख कर पाठक मुझे क्षमा करेगे—ऐसी मेरी प्रार्थना है।

इस पुस्तक मे जिन सूफी-सन्तो के जीवन-चरित्र लिखे गए हैं वह करीब १००० वर्ष पहले हुए हैं, अतः इतने समय पहले हुए महात्माओ का जीवन-चरित्र लिखने के लिए उस समय और उसके बाद लिखी गई पुस्तको और ग्रन्थो की सहायता ली जानी स्वाभाविक है। मैंने भी जिन पुस्तको और ग्रन्थो की सहायता ली है उनकी सूची पुस्तक के अन्त मे दे दी है। मैं उन पुस्तको और ग्रन्थो के लेखक-महापुरुषो का ऋणी

रहूँगा, क्योंकि यदि वह इन पुस्तकों और ग्रन्थों को न लिखते तो हम इन सूफी-सन्तो के बारे में कैसे तो कुछ जान पाते और कैसे कुछ लिखते। उनके चरणों में सादर प्रणाम्।

सूफी और सूफीमत की परिभाषा

सूफ़ी-सन्तों के जीवन-चरित्र पढ़ने से पहले यह आवश्यक है कि हमे यह ज्ञान हो जायं कि ईश्वर के कौन-से भक्त "सूफी" कहे जाते हैं और जिस मार्ग पर यह भक्त चले वह "सूफ़ीमत" क्या है। यह विषय बड़ा विषद है। परन्तु कुछ महान् सूफी-सन्तो द्वारा "सूफी" और "सूफीमत" की परिभाषाओ को लिखने से संक्षेप मे इसका वर्णन करने और समझने मे आसानी हो जाएगी। अतः कुछ प्रसिद्ध और सर्वमान्य परिभाषाएँ नीचे निवेदित है—

सन्त मारूफ़-अल-करख़ी (८१५ ई०)

—परमात्मा सम्बन्धी सत्य का जानना और सांसारिक वस्तुओं का त्याग ही सूफीमत है।

सन्त अबुल हुसैन अन्नूरी (६०७ ई०)

—सूफी को संसार से घृणा होती है और परमात्मा से प्रेम।

—नफ्स (वासनामय-मन) के सभी आनन्दों का परित्याग ही सूफीमत है।

—सूफी आत्माएँ मानवी अपवित्रता से मुक्त, मन की दूषित भावनाओं से पवित्र और इच्छाओ से रहित होती है।

—सूफी वह है जो न किसी की कैद मे हो और न कोई उसकी कैद में हो।

सन्त जुनैद बग़दादी (९९० ई०)

—सूफीमत का मतलब यह है कि परमात्मा तुम्हे अपने निज के स्वार्थ के लिए जीवन धारण न करने दे और तुम्हे ऐसा कर दे कि तुम उसी के लिए जियो।

सन्त अबू अली कुजवीनी

—सूफीमत सुन्दर व्यवहार है।

सन्त अबू सहल सालुकी

—विधि-निषेधो से बचना ही सूफीमत है।

सन्त बिशर अल हाफ़ी (मृत्यु ८४१ ई०)

—सूफी वह है जो परमात्मा के सहारे अपने हृदय को पवित्र रखता है।

सन्त अबू सईद फजलुल्ला

—एकाग्र चित्त से परमात्मा में ध्यान लगाना ही सूफी-मत है।

सन्त अबू बक्र शिब्ली

—सूफीमत परम त्याग है। अर्थात् इस संसार में अथवा परलोक मे परमात्मा के सिवाय अन्य किसी ओर ध्यान नही जाने देना ही इसकी विशेषता है।

सन्त जून-नून मिसरी

—सूफी वह है जो वचन के अनुसार और अनुरूप ही कर्म करता है। उसका मौन ही उस अवस्था का परिचय देता है और जो सांसारिक बन्धनो को दूर कर देता है।

सन्त हिजवीरी

—सच्चा सूफी वही है जो अपवित्रता को पीछे छोड़ आया है।

सन्त अल कुशैरी

वाह्य और आन्तरिक जीवन की पवित्रता ही सूफी का धर्म है।

कुछ अन्य प्रसिद्ध परिभाषाएं

—सूफियो की विशेषता है कि उनका हृदय पवित्र होता है और उनके कर्म भी पवित्र होते है।

—सूफीमत यह है कि सूफी द्वारा ऐसे कार्यो का प्रतिपादन हो जो केवल परमात्मा को ही ज्ञात हो और वह सदैव परमात्मा के संग मे इस तरह रहता हो जो केवल परमात्मा को ही ज्ञात हो।

—सूफीमत पूर्णरूप से आत्मानुशासन है।

—सूफीमत नियमो और शास्त्रो से बनी हुई कोई प्रणाली नही है बल्कि एक नैतिक अवस्था है। अर्थात् यदि यह एक नियम होता तो शिक्षा द्वारा ग्रहण किया जा सकता। किन्तु इसके विपरीत यह एक अवस्था है, इस कथन के अनुसार कि "अपने को परमात्मा की नैतिक प्रकृति के अनुसार बनाओ", और परमात्मा की नैतिक प्रकृति नियमो द्वारा या शास्त्रो द्वारा प्राप्त नही की जा सकती।

—सूफीमत यह है कि परमात्मा तेरे द्वारा तेरे अहं (खुदी) को मरवा कर तुझे अपने मे वास कराए।

—दृश्यमान जगत की अपूर्णता को देखना और जो सभी अपूर्णता से परे है उस परमात्मा के चिन्तन मे प्रत्येक अपूर्ण वस्तु से आँख मूंद लेना ही सूफीमत है।

—जो कुछ तेरे मस्तिष्क में हो उसे निकाल डालना, जो कुछ तेरे हाथ में हो उसे दे देना और जो कुछ भी तुझ पर घटित हो उससे पीछे न हटना ही सूफीमत है।

इन समस्त परिभाषाओ का सार यह है कि बाहर और भीतर की शुद्धि और पवित्रता बनाए रखना सूफी साधक का क़र्त्तव्य है। उसके लिए यह आवश्यक है कि अपनी समस्त इच्छाओं, समस्त वासनाओं को मिटा कर परमात्मा की इच्छा पर अपने को छोड़ दे।

सूफी-सन्तों के जीवन-चरित्र पढ़ने, सुनने के लाभ

ईश्वर-भक्तो का जीवन-चरित्र पढ़ने से साधक के हृदय मे ईश्वर के प्रति जिज्ञासा जागृत होती है और जैसे-जैसे उसके भजन-पूजन में वृद्धि होती जाती है, उसके अहंकार में कमी होती जाती है तथा वह ईश्वर के समीप होता जाता है।

एक सूफी-सन्त से लोगो ने पूछा कि ईश्वर-भक्तो के जिक्र (कथा) से क्या लाभ होता है। आपने फरमाया कि सूफी-सन्तो का जिक्र परमात्मा के अनुग्रहो मे से ऐसा अनुग्रह है जिसके द्वारा शिष्यो की साधना में सहायता होती है और उनके विश्वास मे दृढ़ता आती है।

जिस प्रकार जव कोई हमारे किसी प्रिय का जिक्र करता है तो हमे प्रसन्नता होती है और जिक्र करने वाला हमारा

कृपा-पात्र बन जाता है, इसी प्रकार ईश्वर के प्यारो (अर्थात् भक्तों) का जिक्र करने से ईश्वर प्रसन्न होता है और जिक्र करने वाला ईश्वर का कृपा-पात्र बन जाता है।

लगभग २५-३० वर्ष पूर्व दिल्ली के लक्ष्मी-नारायण मन्दिर मे एक महात्मा संस्कृत भाषा में कथा कह रहे थे। १०-१२ आदमी कथा सुनने आते थे। उनमें से कितने सस्कृत भाषा जानते और समझते थे मुझे नही मालूम। उन दिनों मैं लक्ष्मी-नारायण मन्दिर में जाया करता था, अतः कथा में शामिल हो जाता था। एक दिन कथा के बाद एक श्रोता ने महात्मा जी से निवेदन किया—महाराज, जो संस्कृत नही समझते उनको तो कथा समझ मे नही आती, अत. कथा सुनने से उन्हें क्या लाभ ? महात्मा जी मुस्कराए और बोले—तुम ठीक कहते हो। यद्यपि उन शब्दो की भाषा न आने के कारण कथा उनकी समझ में नही आती, परन्तु कथा के शब्द जो वातावरण में गूँजते हैं और उनको कानो के द्वारा उनके मस्तिष्क और हृदय में पहुँचते हैं, इस वातावरण को पवित्र करते हैं और उनके मस्तिष्क और हृदय को भी पवित्र करके आध्यात्मिक लाभ पहुँचाते हैं।

यही बात एक बार एक सूफी-सन्त से लोगो ने पूछी कि अगर धर्म-शास्त्र पढ़ने वाला उनके अर्थों को न समझता हो तो

क्या धर्म-शास्त्र पढ़ने का उस पर असर होगा ? आपने फरमाया कि असर जरूर होगा। जैसे, यद्यपि बीमार नही जानता कि दवा में क्या-क्या जडी-बूटियाँ मिश्रित है, परन्तु जब वह दवा पीता है तो दवा उस पर असर करती है।

एक बार एक सूफी-सन्त से लोगों ने पूछा कि यदि कोई मनुष्य सूफी-सन्तों के जीवन-चरित्र पढ़े, सुने परन्तु उन पर आचरण न करे तो केवल पढ़ने, सुनने मात्र से उसे कोई लाभ हो सकता है ? आपने कहा—इस दशा मे भी उसे फायदा होगा। सूफी-सन्तों की पवित्र जीवन-कथाएँ पढ़, सुन कर उसका अंत:करण कलुषित नही रहेगा। और अंत:करण के निर्मल हो जाने से वह स्वयं ही सूफी-सन्तों के जीवन-चरित्रों पर मनन-चिन्तन करके उन्हें समझेगा और निश्चित ही अपने जीवन में उतारेगा।

एक बार एक सूफी-सन्त से लोगों ने पूछा कि जिस समय छली-कपटी, पाखण्डी, आडम्बरी मनुष्य आध्यात्मिक ज्ञानी होने के दावेदार बन बैठेंगे और दुनिया में सच्चे सूफी-सन्तों का अभाव हो जाएगा तो उस समय हमें क्या करना चाहिए जिससे हम अशिष्टता, असभ्यता, अश्लीलता, दुराचार आदि से बचे रहें। आपने परामर्श दिया कि प्रतिदिन सूफी-सन्तो के जीवन-चरित्रों का एक अंश पढ़ लिया करना, क्योंकि

ये पवित्र कथाएँ साधको का मार्ग प्रदर्शन करने वाले दीपक है।

इस सम्बन्ध मे सूफी-सन्त अत्तार फरमाते है कि सूफी-सन्तो के जीवन-चरित्र भीरुओं को शूरवीर, शूरवीरो को महावीर, महावीरों को परमवीर और परमवीरो को दर्द वाला दिल रखने वाले (अर्थात् कृपालु, दयालु, सहृदय इन्सान) बनाते हैं। परन्तु दर्द के नशे और मस्ती का सही आनन्द उस समय प्राप्त होगा जब आप इन जीवन-चरित्रों को पढ कर इन महात्माओ के जीवन से शिक्षा ग्रहण करके अपने जीवन को उनके अनुसार ढाले और उनके अनुरूप बना ले।

अन्त मे गुरु महाराज से, उस परम दयालु व परम कृपालु परमात्मा से प्रार्थना है कि इस सद्भावना पूर्ण रचना को पढ़ने और सुनने वालो पर अध्यात्म-ज्ञान की वर्षा हो और जगत का कल्याण हो।

—ग़ाफ़िल बरनी

विषय-सूची



सूफी-सन्त महात्मा नूरी	....	१
सूफी-सन्त महात्मा मन्सूर-अल-हल्लाज	....	३६
सूफी-सन्त महात्मा जुनैद	....	७८
सूफी-सन्त महात्मा शिबली	....	१३३
सूफी-सन्त महात्मा अबुल हसन खिरकानी	....	१६२



सूफी-सन्त महात्मा नूरी

सूफी–सन्तो ने जिन रास्तो पर चल कर उस परम तत्व को प्राप्त किया उन रास्तो पर चलने के कोई ऐसे कठिन या शास्त्रोक्त नियम नही थे कि जिन पर भक्ति-शक्ति सम्पन्न महात्मा या सन्यासो ही चल सके बल्कि वह बिल्कुल आसान रास्ते थे जिन पर आज भी एक साधारण और गृहस्थ मनुष्य भी यदि चलना चाहे तो चल सकता है। एक महान् सूफी-सन्त तपस्या के आरम्भिक काल मे दुकान पर जाते के लिए घर से खाना लेकर निकलते और रास्ते मे भूखे-गरीबो को खिला देते और दोपहर की नमाज पढ कर अपनी दुकान पर जा बैठते। यह काम वह इतना छिप कर करते थे कि किसी को पता न चले। यहाँ तक कि यह कार्य आप लगातार बीस वर्ष तक करते रहे परन्तु कोई नही जान पाया और आपके घरवाले भी इस विचार मे रहे कि दुकान पर खाना खा लिया होगा। अब जरा विचार कीजिए इस तपस्या मे ऐसी क्या कठिनाई है जो इसे आप नही कर सकते। खाना आपके पास मौजूद है, भूखे—गरीब मनुष्य भी मौजूद है—आप समर्थ भी है, यदि चाहे तो अपना खाना किसी भूख को दे दे—कोई रोकने वाला नही है।

इस आसान तपस्या को करने वाले साधक आगे चल-कर महान् सूफी-सन्त महात्मा नूरी हुए। आप का पूरा नाम अब्बुल हसन अहमद बिन मुम्मद खुरासानी नूरी था। आपको "नूरी" का खिताब इसलिए दिया गया था कि आपके चेहरे मे ऐसा प्रकाश निकलता रहता था कि आपका मकान प्रका-शित हो जाता था। इसी वात को कुछ महात्माओ ने ऐसे कहा है कि जङ्गल में जिस कुटिया मे आप तपस्या करते रहते थे वह आप की भक्ति के आलोक से अन्धेरी रात में भी प्रकाशित रहती थी। सूफी-सन्त महात्मा हिजवीरी अपनी पुस्तक "कश्फुल-महजूब" मे लिखते है कि आप धर्म-शास्त्रो के प्रकाण्ड विद्वान, आन्तरिक साधना के मर्मज्ञ और आध्यात्मिक ज्ञान के पूर्ण धनी थे।

सत्संत और एकान्तवास

आप एकान्तवास को अच्छा नही मानते थे। बल्कि महात्माओ का सत्सग करना साधको का कर्तव्य मानते थे। सत्संग करते समय दूसरो के अधिकारो और सुख-सुविधाओ को अपने अधिकारों और सुख-सुविधा पर प्राथमिकता और प्रधानता देना अनिवार्य मानते थे। आपके वचन हैं—एकान्त-वास से वचो, क्योकि एकान्त में शैतान वास करता है। अतः एकान्तवासी साधक शैतान के निकट हो जाता है। साधको ! तुम्हारे लिए जरूरी है कि सत्संग करो क्योकि इसमे परम दयालु और परमकृपालु परमात्मा की प्रसन्नता है। परन्तु शर्त यह है कि दूसरो के वीच रहते हुए निष्काम त्याग का अपना ऐसा स्थायी स्वभाव बनाओ जो किसी दशा, किसी परिस्थिति में भी न बदले। सत्संग दूसरों से किसी प्रकार का सांसारिक

लाभ प्राप्त करने या उनके माल उडाने के लिए न हो बल्कि दूसरो की निष्काम सेवा के लिए हो।

जब महात्मा हाजी शरीफ जिन्दनी शिष्य होने के लिए सूफी-सन्त महात्मा मौदूद चिश्ती की सेवा मे उपस्थित हुए तो उन्होने आपको कुछ उपदेश देने के बाद आज्ञा दी कि एकान्त-वास ग्रहण करो। अत महात्मा हाजी शरीफ जिन्दनी ने सतगुरु की आज्ञा का पालन किया और एकान्तवासी होकर तपस्या करने लगे। कुछ दिनो के बाद आपने अपने गुरु से विनम्र निवेदन किया—"एकान्तवास उसे शोभा देता है जिस के हृदय को, तमाम सन्देहो का निवारण हो जाने मे स्थिरता और शान्ति प्राप्त हो गई हो। सेवक तो एकन्तवास के लायक नही है। हाँ, यदि आप कृपा करे और इस अकिंचन पर विशेष तवज्जह [गुरु द्वारा शिष्य के हृदय पर आत्मिक-धार डालना] फरमाएँ तो एकान्तवास के योग्य हो सकता हूँ"।

इस सम्बन्ध मे यह अर्ज करना भी जरूरी है कि महात्मा हाजी शरीफ जिन्दनी अपने गुरु के पास शिष्य बनने जाने से और इस घटना से पहले बडी तपस्या और भजन-पूजन कर चुके थे फिर भी एकान्तवास के योग्य न बन सके फिर साधारण साधक की क्या सामर्थ्य है कि सही-सही एकान्तवास कर सके और शैतान के चगुल से बचा रहे।

निष्काम त्याग

निष्काम त्याग का अध्यात्म मे वडा ऊँचा स्थान है। पवित्र कुरान मे आया है कि निष्काम त्यागी की प्रशसा करते हुए परमात्मा ने कहा—निष्काम त्यागी खुद जरूरतमन्द होते

हुए भी दूसरो की जरूरत को अपनी जरूरत पर प्राथमिक़ता और प्रधानता देते है। हजरत मौहम्मद साहब के साथी अन्य गुणो के साथ-साथ इस गुण में भी अनुपम थे। उन माथियों में से एक महिला बताती है कि उहद के युद्ध के दिन वह पानी लेकर डेरे से निकली कि किसी सैनिक को पिलाए। उसने युद्ध क्षेत्र मे एक सैनिक को जख्मो से चूर-चूर देखा। वह अपनी जिन्दगी की आखिरी सासे ले रहा था। इशारे से उसने पानी माँगा। वह महिला कहती है कि मैंने आगे बढ कर पानी का बरतन उसके हाथ में दे दिया। इतने मे पास से दूसरे जख्मी आवाज दी–मुझे पानी दो। सुनते ही पहले ने प्याला मुझे वापस कर दिया कि वह पानी उसे दे दो। जब मैं पानी लेकर दूसरे के पास आई तो एक और जख्मी की आवाज़ आई कि मुझे पानी पिलाओ। यह सुन कर उस दूसरे ने मुझसे कहा कि पहले उसे पानी पिलाओ। इस तरह मैं सात आदमियो के पास पानी लेकर गई। हर एक ने पहले पानी माँगा था परन्तु जब दूसरे की आवाज़ सुनी तो पहले उसको पिलाने का इशारा किया। वह महिला कहती है कि जब मैं सातवे के पास पानी लेकर पहुँची तो वह दम तोड़ चुका था। मैं वापस पलटी कि दूसरे को पानी दूं तो देखा कि वह भी अपने ईश्वर के पास पहुँच चुका है। इस तरह मै एक-एक करके सबके पास आई लेकिन कोई ज़िन्दा नही मिला और हर एक ने खुद ज़रूरत-मन्द होते हुए भी अपनी ज़रूरत पर दूसरे की जरूरत को प्राथमिकता और प्रधानता देते हुए प्राण निछावर कर दिये।

जिस रात हज़रत मुहम्मद साहब ने हजरत अबू बक्र सिद्दीक के साथ मक्का से मदीना के लिए यात्रा की, उसी रात

मे मक्का के अधर्मियो का यह प्रोग्राम था कि हजरत मुहम्मद साहब के घर पर सब मिल कर हमला बोल दे और आपको मार डाले, लेकिन हजरत अली यह सब कुछ जानते हुए उस रात आपके विस्तर पर सो गए। इस पर अल्लाह-ताला ने जबरील और मैकाईल नामक फरिश्तो से फरमाया कि मैने तुम को एक दूसरे का भाई बना रखा है। तुममे से कौन है जो अपनी जान अपने भाई पर निछावर करने के लिए तैयार हो। लेकिन कोई भी इसके लिए तैयार नही हुआ। अल्लाह-ताला ने फरमाया–फरिश्तो, अली को देखो। मैंने मुहम्मद और अली को आपस मे भाई बनाया और अली अपने भाई पर जान कुर्बान करने के लिए खुशी से राजी हो गया और उसके बिस्तर पर सो गया कि उसके भाई के बजाय उसे मार डाला जाए। अब तुम दोनो पृथ्वी पर जाओ और अली की उसके दुश्मनो से रक्षा करो। अत जबरील और मैकाईल तुरन्त पृथ्वी पर आए और एक हजरत अली के सिर की तरफ और दूसरा पैरो की तरफ खडा हो गया। तब जबरील ने कहा—ऐ अली, तेरे जैसा आज कोई नही है कि अल्लाह-ताला ने तेरी रक्षा के लिए अपने फरिश्तो को तैनात किया और तू आराम से सो रहा है।

इस सन्दर्भ मे आदरणीया पन्ना धाय की कथा जग-प्रसिद्ध है जिन्होने राजकुमार उदयसिंह के बिस्तर पर अपने पुत्र को सुला दिया था और इस प्रकार अपने पुत्र की बलि देकर राजकुमार के प्राणो की रक्षा की थी और ससार मे अनुपम निष्काम त्याग की मिसाल कायम की।

सूफी-सन्तो का मत है कि वास्तविक त्याग तो इस बात

मैं है कि जो वस्तु बडा कष्ट उठ ाकर प्राप्त हो उसको प्रसन्नता से किसी और जरूरतमन्द को दे दे। 'सूफी-साधक नाफे कहते है कि एक दिन सन्त अब्दुल्ला-बिन-उमर को मछली खाने की इच्छा हुई। मैने सारे शहर मे मछली की तलाश की मगर कही नही मिली। कुछ दिनो के बाद मछली मिली तो आपने उसके कबाब तैयार करने का हुक्म दिया। नाफै कहते है कि उस समय आप इतने प्रसन्न हुए कि प्रसन्नता आपके चेहरे पर साफ झलक रही थी। इतने मे एक भिखारी ने दरवाजे पर आकर सदा दी—कुछ खाने को मिलेगा बाबा। आपने कहा कि यह कबाब उस भिखारी को दे दो। नाफै कहते है कि हमने बहुत कहा कि इतने दिन से आपको मछली का शौक था, बडी मुश्किल से मिली है। भिखारी को और कोई चीज़ दे देते हैं। लेकिन सन्त अब्दुल्ला ने फरमाया कि मैंने हजरत मुहम्मद साहब से सुना है—"जिस किसी को कोई इच्छा हो और वह उस इच्छित चीज को प्राप्त करले और फिर उससे अपना हाथ रोक कर दूसरे की जरूरत को अपनी जरूरत पर प्राथमिकता और प्रधानता देकर वह चीज उसे दे दे तो अल्लाहताला उसके सारे पाप माफ कर देगा"। हज़रत मुहम्मद साहब के यह वचन बता कर आपने कहा कि मैंने इस मछली की इच्छा को अपने दिल से निकाल दिया है और अब इसका खाना मेरे लिए अधर्म है। इसे उस भिखारी को दे दो।

नेकियों की कुन्जी

एक सूफी-सन्त कहते है—याद रखो, कृपालु और दयालु परमात्मा ने कहा है कि तमाम नेकियो की कुन्जी यह है कि मनुष्य अपनी प्रिय वस्तुओ को दूसरो पर खर्च करदे, इससे

परमात्मा वडा प्रसन्न होता है। इन्सान के पास ससार की सबसे प्रिय वस्तु उसकी अपनी जान है और सबसे महान पद यह है कि इन्सान उसे खुदा की राह मे खर्च करदे। ऐसे लोगो के बारे मे कुरान शरीफ मे आया है—जो लोग अल्लाह की राह मे मारे गए उनको मुर्दा मत समझो। वल्कि वह अपने खुदा के पास जिन्दा है। सूफी-सन्त-कवि महात्मा अत्तार कहते हैं कि सूफी-सन्त महात्मा खेम के पास एक मनुष्य आया और प्रार्थना की कि आप मुझे कुछ नसीहत दे। आपने कहा—ऐ मेरे बच्चे, जान की बाजी लगाए बगैर काम नही बनता। अगर तुझमे ऐसा करने की हिम्मत हो तो इस राह मे कदम रखो, वर्ना सूफियो की वेहूदा [असगत, बेतुकी और व्यर्थ] की बातो के झमेले मे मत पडो। सन्त कबीर कहते है।

यह तो घर हैं प्रेम का खाला का घर नाहिं।
शीश उतारे भुइं धरै फिर बैठे घर माहिं ॥

महात्मा नूरी से सम्बन्धित भी इस सन्दर्भ मे कथा आती है। गुलाम अल-खलील एक पाखण्डी दरवेश था जो तसब्बुफ [सूफीमत अर्थात इल्मे-फकीरी, अध्यात्म-ज्ञान] और साधुता का दावा करता था। खलीफा और दरबारियो मे उसकी बडी प्रसिद्धि थी। वह सूफी-महात्माओ, विद्वानो और ज्ञानियो तथा सच्चे दरवेशो की बुराई राज–दरबार मे करता रहता था ताकि दरबार मे उसका मान-सम्मान बना रहे। सूफी-सन्त महात्मा नूरी, महात्मा रक्काम, और महात्मा अबू हमजा की दिन-प्रति-दिन बढती हुई लोक प्रियता को देख कर वह जलता था और उसे यह भय हुआ कि कही दरबारी-जन और खलीफा का झुकाव उन्ही की तरफ न हो जाए।

इसलिए उन बुजुर्गो को हमेशा के लिए अपने रास्ते से हटाने के लिए इस वहरूपिए ने यह उपाय सोचा कि उनको ख़लीफा द्वारा मरवा दिया जाए। अत. उसने ख़लीफ़ा के कान भरे कि एक ऐसा गिरोह पैदा हो गया है जो नृत्य और गीत गाता है [यह बाते अरब, ईरान, ईराक आदि देशो मे पहले धर्म विरुद्ध मानी जाती थी] इस गिरोह वाले इशारो और साकेतिक भाषा मे बातचीत करते है। वह ऐसी बाते कहते हैं जो धर्म विरुद्ध है। इसलिए वह गर्दन काट देने के काबिल है। एक दिन उसने महात्मा नूरी, महात्मा रक्काम और महात्मा अबूहजमा आदि बड़े-बड़े सूफी-महात्माओ को गिरफ़्तार करवा कर ख़लीफा के सामने पेश कर दिया और कहा कि यह अधर्मितो के गिरोह के सरदार है। अगर आप इनके कत्ल हुक्म दे दे तो बहुत अच्छा हो। क्योंकि यह इतना बडा भलाई और पुण्य का काम है कि जिस मनुष्य के द्वारा यह काम पूरा होगा उसको खुदा से इनाम दिलवाने की जिम्मेदारी मैं लेता हूँ। ख़लीफा ने तुरन्त उनके कत्ल का हुक्म दे दिया। और जल्लाद उनको कत्ल करने के लिए ले गए। उनके हाथ बाँध दिए। जल्लाद रक्काम को पहले कत्ल करने का इरादा किया। यह देख कर महात्मा नूरी उठे और महात्मा रक्काम की जगह बैठ गये। उस समय वह मुस्करा रहे थे और उनका मुख प्रसन्नता से चमक रहा था। यह देख कर उपस्थित जन-समूह और जल्लादो को वड़ा आश्चर्य हुआ। एक जल्लाद ने कहा—ऐ वीर पुरुप, तलवार ऐसी चीज नही कि वडी चाह से अपने आपको उसके सामने पेश किया जाये जैसा कि तुमने अपने आपको पेश कर दिया है। अभी तेरी वारी नही आई। महात्मा नूरी ने जवाव दिया—हाँ, मै भी इस वात को जानता

हूँ, परन्तु मेरी आन्तरिक साधना की नीव त्याग और बलिदान के भाव पर आधारित है। इन्सान के पास जान से बढ कर और कोई चीज प्यारी नही है। मै चाहता हूँ कि यह थोडे-से साँस जो शेष है उनको अपने भाइयो पर निछावर करदूँ क्योकि यह लोक सेवा करने की जगह है और परलोक ईश्वर-मिलन की जगह हे और ईश्वर-मिलन सेवा से प्राप्त होता है। यह अनोखे वचन सुन कर खलीफा वडा प्रभावित हुआ और उसने काजी से पूछा कि इनके बारे मे शास्त्रो की आज्ञा क्या है। काजी ने महात्मा शिवली को दीवाना समझ कर प्रश्न किया कि वीस दीनार [स्वर्ण-मुद्रा] पर कितनी जकात [दान] फर्ज है। उन्होने कहा—साढे बीस दीनार। अर्थात आधा दीनार और इस जुर्म मे अदा करे कि उसने बीस दीनार जमा किए। फिर काजी ने महात्मा नूरी से शास्त्रो के बारे मे सवाल किये जिनका आपने अनुभवीय सटीक उत्तर देकर कहा—ऐ काजी, आपने सिर्फ कुछ सतही बातो के बारे मे ही पूछताछ और जाँच-पडताल की है। आपने आगे कहा—ऐ काजी, तुम भी सुन लो कि खुदा ने ऐसे भक्त मनुष्य भी पैदा किए है जिनकी जिन्दगी और मौत और अस्तित्व और वचन सब ईश्वर से सम्बद्ध है। अगर एक क्षण के लिए भी वह ईश्वर से जुदा हो जाएँ तो मृत्यु हो जाए और यही वह लोग है जो उसी के सामने रहते है, उसी के सामने सोते है, उसी के सामने खाते हैं, उसी के द्वारा देखते है, उसी के द्वारा सुनते है और जो कुछ माँगते है उसी से माँगते है। इन गूढ़ आध्यात्मिक बातो को सुन कर काजी बडा प्रभावित हुआ और उसने खलीफा से कहा कि अगर ऐसे व्यक्ति भी अधर्मी और नास्तिक हो सकते है तो फिर मेरा फतवा (शास्त्रोक्त ऐलान) है कि पूरी दुनिया

मे कोई भी धार्मिक और आस्तिक नही है। खलीफा ने उन सबको अपने पास बुलाया और कहा कि अगर कोई जरूरत या इच्छा हो तो माँगिये। उन्होने कहा कि हमारी तो केवल यही इच्छा है कि आप हमे बिलकुल भूल जायँ। न हम पर कृपा करे और न हमारे रास्ते मे बाधा उत्पन्न करे। खलीफा इस पर रो पडा और बडे सम्मान के साथ उन सच्चे फकीरो को विदा किया।

वज्द

सूफी-सन्त महात्मा हिजवीरी के अनुसार "वज्द" के अर्थ पाने, गमगीन रहने और मालामाल होने के है अर्थात साधक की यह अवस्था हो कि वह अपनी साधना की सफलता के फलस्वरूप प्रेमी से मिलन के हर्षातिरेक और आनन्दातिरेक में या फिर प्रेमी के विछोह के अपार गम में अपने को खो दे।

यह वज्द की अवस्था कभी कुछ समय मे ही समाप्त हो जाती है और कभी काफी समय तक बनी रहती है।

सूफी-सन्त महात्मा उमर बिन उस्मान मक्की कहते हैं कि इस अवस्था का वर्णन करना असम्भव है क्योकि जब साधक अपनी सामान्य अवस्था मे लौट आता है तो उसके मन और हृदय पर भौतिक जगत की वस्तुओ का अधिकार हो जाता है—

अब होश में कुछ होश नहीं क्या बयाँ करूँ।
क्या-क्या नजारे आए नजर बेखुदी के बाद॥
—गाफिल बरनी

महात्मा नूरी के वचन है—वज्द की हकीकत [वास्तविकता] का प्रकट करना निषिद्ध है क्योकि एक ऐसी ज्वाला है जो अन्त करण मे भडकती है और शौक [प्रेम] के रूप मे प्रकट होती है।

फिर भी कुछ सूफी-सन्तो ने इस अवस्था की प्राप्ति के बाद इस अवस्था को समझाने की कोशिश की है। यथा—

वज्द—प्रिय मिलन की अवस्था

साधना पथ पर चलते-चलते साधक ऐसी मजिल पर पहुँचता है जहाँ उसके हृदय से ससार के तमाम प्रपच और झमेले समाप्त हो जाते है, यहाँ तक कि कोई भी सासारिक इच्छा और वासना नही रह जाती। परमात्मा के ध्यान, चिन्तन और मनन के सिवा और कुछ भी उसके हृदय में नही रहता। इस अवस्था मे पहुँचने पर उसके हृदय का द्वार खुल जाता है और उसमे हर्षातिरेक और परम-आनन्द का प्रवेश होता है। इस अवस्था को सूफियो की भाषा मे 'वज्द" कहते हैं। हम इसे भावाविष्टावस्था, भावोल्लास, आनन्दातिरेक आदि नामो से पुकार सकते है। इस अवस्था को व्यक्त करने के सिलसिले मे सूफियो ने वज्द के अतिरिक्त फना (परम-सत्ता मे लय होना), गैबत (अह से बेखबर होना), हाल (भावावेश) आदि शब्दो का प्रयोग भी किया है।

इस अवस्था मे साधक परम सत्य का साक्षात्कार करता है और परमात्मा के साथ एकमेक हो जाता है, उस परम सत्ता मे लय हो जाता है।

वह समस्त इन्द्रियो के विषयो से परे हो जाता है और

आध्यात्मिक लोक मे पहुँच जाता है जहाँ काल और स्थान नाम की कोई वस्तु नही।

इस अवस्था मे आत्मा उस परम सौन्दर्य को देखता हुआ बेसुध [गाफिल] रहता है। यह स्वप्नावस्था नही अर्थात वह सो नही जाता बल्कि जागते रहने पर भी इस ससार के लिये "नही" के बराबर रहता है।

इस अवस्था मे सूफी-साधक जो कुछ करते है वह मानो परमात्मा का ही किया हुआ काम होता है—ऐसा सूफी-सन्तो का विश्वास है।

सूफी महात्मा शेख सादी ने "वज्द" को काव्यात्मक रूप मे सहज भाव से समझाने के लिए कहा है कि एक दरवेश से उसके साथियो ने व्यग करते हुए पूछा कि उस परम-आनन्द की बगिया से वापस आते हुए वह कौन-सा उपहार अपने साथ लाया है। दरवेश ने मुस्कराते हुए जवाब दिया—उस गुलाब की क्यारी के पास पहुँच कर मेरी इच्छा हुई कि बहुत—से गुलाब के फूल तोड कर ले चलूँ ताकि अपने साथियो को दे सकूँ। परन्तु जब मैं वहाँ था तब गुलाब के फूलो की खुशबू से मैं इतना मस्त हो गया कि मेरे दामन का किनारा जिसमे कि मैं फूलो को बाँधना चाहता था मेरे हाथो से छूट गया।

कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि इस अवस्था मे रहते हुए उनके मुँह से अनायास कुछ वाणियाँ निकल गई है। एक बार महान सूफी-सन्त महात्मा बायजीद बिस्तामी ने यह कह दिया—"मैं पाक हूँ और मेरी शान बहुत बड़ी है।" जब वज्द की दशा समाप्त हो गई तो आपके शिष्यो ने सवाल किया कि

यह धर्म-विरुद्ध वाक्य क्यो कहा ? [धर्म-विरुद्ध इसलिये कि "पाक" और "वहुत वडी शान-वाला" तो केवल परमात्मा ही है। कोई दूसरा भला परमात्मा के समान कैसे हो सकता है ?] आपने कहा कि मुझे तो मालूम नही कि ऐसा कोई वाक्य कहा हो। लेकिन आइन्दा इस तरह का वाक्य मेरी जुवान से निकल जाय तो मुझे कत्ल कर डालना। इसके वाद दुवारा वज्द की अवस्था मे फिर आपने यही वाक्य कहा। सुनते ही आपके शिष्य आपके कहे अनुसार आपको कत्ल कर देने के लिये तैयार हो गये। लेकिन पूरे मकान मे उन्हे हर तरफ बायजीद ही वायजीद नजर आये। और जव उन्होने छुरियाँ चलानी शुरू की तो ऐसा मालूम होता था जैसे पानी पर छुरियाँ चल रही हो और आपके शरीर पर उन छुरियो का बिलकुल कोई असर नही हुआ। फिर जव कुछ समय के बाद वह अवस्था धीरे-धीरे समाप्त होती चली गई तो शिष्यो ने देखा कि आप महराब मे खड़े है और पूर्ण स्वस्थ है, कही कोई छुरियो का घाव नही है।

श्रीमद् भागवत मे भी कथा आई है—हिरण्यकशिपु की आज्ञा से विकराल दैत्य हाथो मे त्रिशूल ले-लेकर "मारो" "काटो" चिल्लाते हुए भक्त प्रह्लाद पर झपटे और उनके सभी मर्म स्थानो मे शूल से वार करने लगे। उस समय भक्त प्रह्लाद चुपचाप बैठे हुए थे। उनका चित्त परमात्मा में लगा हुआ था। इसलिए दैत्यो के सारे प्रहार निष्फल हो गये और भक्त प्रह्लाद के शरीर पर शूलो की मार से कोई असर नही हुआ।

तब हिरण्यकशिपु ने भक्त प्रह्लाद को मार डालने के

लिये और भी कठोर उपाय किए—मतवाले हाथियो से कुचलवाया, विषधर साँपो से डसवाया, पहाड की चोटी से नीचे डलवा दिया, अन्धेरी कोठरी में बन्द करके विष पिलाया और खाना बन्द कर दिया, वर्फीली जगह दबवा दिया परन्तु सारे उपाय वेकार सिद्ध हुए। तत्पश्चात हिरण्यकशिपु की वहिन होलिका ने कहा—भाई, मेरे पास एक चुनरी है जिसे ओढ़ लेने से मुझे अग्नि जला नही सकती। अतः एक बडी अग्नि का प्रवन्ध किया जाय, मैं वह चुनरी ओढ़ प्रह्लाद को गोद मे लेकर उसमे वैठ जाऊँगी और प्रह्लाद जल जायेगा। परन्तु जव वह भक्त प्रह्लाद को गोद मे लेकर उसे जलाने के इरादे से अग्नि मे वैठी तो वह चुनरी होलिका पर से उडकर प्रह्लाद पर आ गिरी और भक्त प्रह्लाद तो जलने से बच गए परन्तु होलिका जल कर मर गई।

होलिका रहस्य

इस कथा में चुनरी शव्द प्रतीकात्मक रूप मे आया है। वास्तव मे होलिका ने वडी तपस्या की थी और वह "वज्द" की अवस्था मे पहुँच जाया करती थी। परन्तु जव वह भक्त प्रह्लाद को जलाने के इरादे से अग्नि मे वैठी तो उस "लयावस्था" में नही पहुँच सकी और अग्नि ने उसे जला दिया। इसका कारण यह है कि यह अवस्था परमात्मा के अनुग्रह ही से साधक पर आती है और अनुग्रह से लिए परमात्मा ने कहा है—

निरमल मन जन सो मोंहि पावा।
मोंहि कपट छल छिद्र न भावा॥

और उस समय होलिका के हृदय मे "कपट छल छिद्र"

ही तो था, अतः उस पर परमात्मा का अनुग्रह नही हुआ और ना ही वह उस अवस्था मे पहुँच पाई और फलस्वरूम जल कर मर गई। दूसरी ओर भक्त प्रह्लाद शुद्ध निर्मल हृदय से ईश्वर का भजन कर रहे थे अत "निर्मल मन जन सो मोहिं पावा' के अनुसार उन पर परमात्मा का अनुग्रह हुआ और वह उस अवस्था को प्राप्त हो गए—यही होलिका की चुनरी का उस पर से उड कर भक्त प्रह्लाद पर आ गिरना है—तथा वह जलने से बच गये।

चूँकि इस अवस्था मे साधक पूर्णरूप से परमात्मा में लय हो जाता है और विशुद्ध आत्मा रह जाता है, अत ससार का कोई तत्व उस पर असर नही कर पाता। श्री कृष्ण महाराज फरमाते हैं—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक. ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ।।

[इस आत्मा को शस्त्र नही काट सकते, इसको आग नही जला सकती, इसको जल नही गला सकता और वायु नही सुखा सकती।]

—गीता अ० २।२३

फिर वही

कहते हैं बगदाद मे आग लगने से बहुत-से मनुष्य जल गये। आग मे किसी अमीर के दो गुलाम भी फँस गये तो उसने ऐलान किया कि जो मेरे गुलामो को आग से निकालेगा मैं उसे एक हजार दीनार दूंगा। इनाम की बात तो ठीक थी परन्तु

आग मे घुस कर अपनी जान कौन दे। संयोग से उस समय महात्मा नूरी भी वहाँ से गुजर रहे थे। आपने जब सुना कि दो गुलाम आग मे फँसे हुए हैं तो आपके दिल में दया का भाव उमड पड़ा और "विस्मिल्ला-उल-रहमान-उल-रहीम" [अर्थात शुरू करता हूँ इस काम को अल्लाह के नाम से, जो रहमान, अर्थात परमदयालु और रहीम अर्थात परम कृपालु है,] पढ कर आग मे घुस गये और उन गुलामों को निकाल लाये। आग ने आपके ऊपर कोई असर नही किया। और जब उस अमीर ने इनाम के एक हजार दीनार देने चाहे तो फरमाया कि तुम इन्हे अपने पास ही रखो क्योकि मुझे धन का लोभ-लालच न होने के कारण ही खुदा ने यह पद प्रदान किया है कि मैंने इस लोक को परलोक से बदल लिया है। जब उस अमीर ने अधिक आग्रह किया तो आपने कहा—अच्छा, इस धन को जरूरत मन्दो और गरीबो मे बाँट दो।

वज्द—गमगीन अवस्था

जब साधक वज्द की "गमगीन" अवस्था मे होता है अर्थात जब प्रिय-विछोह की दशा मे होता है तो उसके दुख का वर्णन लेखनी के बलबूते की बात नही और ना ही मुख से कुछ कहा जा सकता है। माँ मीरा ने भी बस बात इतना ही कहा—'हेरी मैं तो प्रेम दिवाणी मेरा दरद न जाने कोय', प्रिय-विछोह [गमगीन] अवस्था की महात्मा नूरी मे सम्बन्धित भी एक घटना है। कहते हैं एक बार आप एक ही जगह खड़े होकर लगातार तीन दिन-रात जोर-जोर से "अल्लाह-अल्लाह" का शोर मचाते रहे। आखिर शिष्यो ने जाकर महात्मा जुनैद से उनकी दशा का वर्णन किया कि महात्मा नूरी तीन दिन-रात

से ऊँची आवाज से "अल्लाह-अल्लाह" का शोर कर रहे हैं और खाना-पीना सब बन्द कर रखा है। लेकिन अपने नमाज सही वक्त पर अदा कर लेते हैं। महात्मा जुनैद के शिष्यो ने कहा कि यह लक्षण तो फनाइयत [ईश्वर मे लय होकर अपने अस्तित्व की सुध-बुध न रहना] का नही है बल्कि चेतना का है क्योकि फानी [फनाइयत की अवस्था को प्राप्त साधक] को नमाज का होश बाकी नही रहता। महात्मा जुनैद ने समझाया कि यह बात नही बल्कि वह इस समय वज्द की अवस्था मे है और वज्द की दशा वाला स्वय ईश्वर की हिफाजत में होता है। महात्मा नूरी और महात्मा जुनैद आपस में घनिष्ठ मित्र थे और अनौपचारिकता से बात किया करते थे। अतः महात्मा जुनैद ने आपके पास पहुँच कर कहा—ऐ अब्बुल हसन, अगर तू समझता है कि इस तरह शोर मचाने मे कुछ फायदा होता है तो मुझे भी हुक्म दे कि मैं भी यही तरीका शुरू करूँ। और अगर तू जानता है कि शोर करना कुछ लाभदायक नही तो अपने को अल्लाह की रजा के सुपर्द कर ताकि तेरा दिल खुश हो। यह सुन कर महात्मा नूरी ने शोर करना बन्द कर दिया और कहा—ऐ अब्बुल कासिम, तू बहुत बडा ज्ञानी है।

रजा

वज्द की गमगीन अवस्था अर्थात प्रिय-विछोह के गम मे जब महात्मा नूरी तीन दिन-रात अपने प्रिय को पुकारते रहे, तडपते रहे, तब महात्मा जुनैद ने उन्हे "रजा" का उपदेश दिया जिसे सुन कर वह शान्त हो गए। यह "रजा" क्या है। सूफी-मार्ग की यह अन्तिम मंजिलो मे है। यहाँ पहुँच कर

साधक ईश्वर की खुशी में खुश रहता है—सुख मिला जरा-सा खुश हो गया, हर्ष मिला जरासा मुस्करा दिया और अपने मालिक को धन्यवाद दिया। दुख मिला तो थोडा-सा दुखी हो गया, शोक मिला तो कुछ गमगीन रह कर फिर सामान्य [नार्मल] हो गया। वह इस दुख-शोक को भी अपने मालिक का प्रसाद समझ कर प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण-स्वीकार करता है और भूल कर भी कोई शिकायत नही करता। इस मंजिल पर पहुँच कर उसका हृदय हर प्रकार सन्तुष्ट हो जाता है अत· वह कभी किसी प्रकार की इच्छा दिल मे नही लाता।

योग-क्षेम

एक बार महात्मा नूरी स्नान कर रहे थे कि कोई आपके कपड़े उठा कर चलता बना। वह अभी थोडी दूर ही गया था कि उसके दोनों हाथ मारे गए। वह घबरा कर चुराए हुए कपड़े वापस ले आया। आपको उसकी दशा देख कर बडी दया आई और आपने दुआ की—ऐ अल्लाह, इसने मेरे कपड़े वापस कर दिए, तू भी इसके हाथों की ताकत लौटा दे। इस दुआ के करते ही वह मनुष्य उसी समय स्वस्थ हो गया और उसने अपने अपराध की आपसे माफी मांगी। आपने न केवल उसे माफ कर दिया वल्कि उसको कुछ धन भी दिया ताकि कुछ काम-धन्धा करले और भविष्य मे जीवन-यापन के लिए चोरी न करनी पड़े। किसी ने पूछा कि अल्लाह-ताला आपके साथ क्या वर्ताव करता है। आपने मुस्करा कर जवाव दिया—जव मैं नहाता हूँ तो वह मेरे कपड़ों की रखवाली करता है। लोगों ने पूछा—यह कैसे। आपने फरमाया कि एक दिन मैं गुसलखाने मे था तो कोई

मेरे कपड़े उठा कर चल दिया और जब मैने अल्लाह से अपने कपडे माँगे तो उस मनुष्य ने वापिस आकर माफी माँगी और मेरे कपडे दे गया।

अपने भक्त की रक्षा तो ईश्वर करता ही है। गीता मे श्रीकृष्ण महाराज ने कहा है—

"जो अनन्य प्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर को, निरन्तर चिंतन करते हुए निष्काम भाव से भजते है, उन नित्य-निरन्तर मेरा चिन्तन करने वाले पुरुष का योग-क्षेम मैं स्वय प्राप्त कर देता हूँ"। —(अ० ९।२२)

"गीता-तत्व-विवेचनी टीका" पुस्तक मे इस श्लोक की व्याख्या करते हुए श्री जयदयाल गोयन्दकाजी लिखते हैं—अनन्य प्रेमी भक्त जन वह है जिनका ससार के समस्त भोगो से प्रेम हट कर केवल मात्र भगवान मे ही अटल और अचल प्रेम हो गया है, भगवान का वियोग जिनको असह्य है, जिनका भगवान से भिन्न दूसरा कोई भी उपास्यदेव नही है और जो भगवान को ही परम आश्रय, परम गति और परम प्रेमास्पद मानते है।

यही बात महात्मा नूरी ने सूफी-साधको को उपदेश देते हुए इस तरह कही है—ससार से दुश्मनी और ईश्वर से दोस्ती ही सूफियो का धर्म है। यहाँ "ससार" से अभिप्राय विषय-वासनाओ, लोभ-लालच, मोह-राग आदि से है।

"निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से भजन करना" के सम्बन्ध मे श्री गोयन्दकाजी लिखते है कि भगवान

के गुण. प्रभाव, तत्व और रहस्य को समझ कर, चलते-फिरते, उठते-बैठते, सोते-जागते और एकान्त मे साधन करते, सब समय निरन्तर अविछिन्न रूप से उनका चिन्तन करते हुए उन्हीं की प्रसन्नता के लिए चेष्टा करते रहना ही उनका "निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव मे भजन करना है"।

"योग-क्षेम" के बारे मे आप फरमाते हैं कि अप्राप्त की प्राप्ति का नाम "योग" और प्राप्त की रक्षा का नाम "क्षेम" है। जो अनन्य प्रेमी भक्त नित्य-निरन्तर केवल भगवान के चिन्तन में ही लगे रहते हैं, भगवान को छोड़ कर दूसरे किसी भी विषय की कुछ भी परवा नही करते-ऐसे नित्याभियुक्त भक्तो की सारी [लौकिक और अलौकिक] देखभाल भगवान ही करते हैं। और भगवान की प्राप्ति के लिए जो साधन उन्हें प्राप्त है, सब प्रकार के विघ्न-बाधाओं से बचा कर, उसकी रक्षा करना तथा जिस साधन की कमी है उसकी पूर्ति करके स्वयं अपनी प्राप्ति करा देगा—यही भगवान द्वारा किया गया उन प्रेमी भक्तों का "योग-क्षेम" है।

इस सम्बन्ध में महात्मा नूरी के वचन हैं कि ईश्वर से मिलाप उसके अतिरिक्त सबसे कट जाना है और ईश्वर के अतिरिक्त सबसे अलग होना ईश्वर के साथ योग है। इसलिए जिस मनुष्य का इरादा ईश्वर के साथ योग, मिलाप का हो उसके लिए जरूरी है कि ईश्वर के अतिरिक्त सबसे जुदा हो जाए, और जिसका इरादा औरों से जुड़े रहने का हो वह फिर ईश्वर के साथ योग, मिलाप का विचार छोड दें। यह दोनो चीजें [ईश्वर से भी योग, मिलाप रहे और संसार से भी]

परस्पर, एक-दूसरे की, विरोधी है और यह अटल नियम है कि दो विरोधी चीजो का आपस मे मेल-मिलाम नही हो सकता।

रूह–व–नफ्स

सूफी आत्मा के दो भाग मानते है—एक, रूह अर्थात आत्मा को वह उच्च कोटि या अश जो सद्वृत्तियो का उद्गम-स्थल है और सत्-पथ तथा कल्याण-मार्ग की ओर ले जाता है। और दूसरा, नफ्स अर्थात आत्मा की वह निचली कोटि या अश जो सभी बुराइयों की जड़ है और कुप्रवृत्तियो की ओर ले जाता है। इसे अहङ्कार, विषय-वासना-युक्त मन, जड़-आत्मा, शैतान आदि भी कहते हैं। नफ़्स भावावेग से परिचालित होता है और रूह विवेक द्वारा। इन दोनो का संघर्ष निरन्तर चलता रहता है और यह आत्मा को विपरीत दिशाओ की ओर खीचते रहते है। सूफियो का विश्वास है कि परमात्मा ने नफ़्स को इसलिए बनाया है कि वह आत्मा को निरन्तर आघात देता रहे जिससे कि आत्मा परमात्मा को भूलने न पाए। चूंकि रूह परमात्मा सम्बन्धी वृत्तियो का वास स्थान है अतः साधक रूह के द्वारा नफ्स पर नियन्त्रण करके तथा उससे कलुष को दूर करके उसे स्वच्छ, निर्मल और पवित्र कर सकता है।

साधना की मध्यावस्था और भ्रम

महात्मा नूरी कहा करते थे कि मैंने बरसो तपस्या और एकान्तवास किया परन्तु सब व्यर्थ साबित हुए। और जब मैंने महापुरुषो के वचनो के अनुसार अपनी असफलता पर गौर

किया कि शायद मेरी असफलता का कारण यह है कि मेरे भजन-पूजन मे छल-कपट का अश शामिल हो गया हो तो पता चला कि मेरे नफ्स ने हृदय से साठगाँठ कर रखी है। यह बात मालूम हो जाने पर जब मैने नफ्स का विरोध करना आरम्भ किया तो मेरे हृदय पर आध्यात्मिक रहस्य प्रकट होने लगे और जब मैंने नफ़्स से उसकी दशा पूछी तो उसने कहा कि मेरी कोई इच्छा पूरी न हो सकी।

इसके बाद मैंने दजला नदी मे मछली पकडने के लिए बॅंलिया [बंसी] डालकर ईश्वर से विनय की कि जब तक इसमे मछली नही फॅंसेगी यूँ ही खडा रहूँगा। यह विनय करते ही मछली फँस गई। इस घटना के बाद मैंने महात्मा जुनैद से अपनी महानता और आध्यात्मिक उच्च-पद प्राप्त करने का जिक्र किया। उन्होने कहा कि यदि मछली की जगह तुम साँप का शिकार करते तो नि.सन्देह चमत्कार होता। परन्तु चूँकि अभी तुम साधना के मध्यमार्ग मे हो इसलिए इस घटना का मिलान चमत्कार से नही बल्कि भ्रम मे किया जा सकता है।

इस कथा से प्रतीत होता है कि इस राहे-खुदा मे चलने वाले को एक जानकार पथ-प्रदर्शक की बड़ी आवश्यकता होती है जो उसको स्थिति का सही-सही ज्ञान उसको कराता रहे और भ्रमो से छुटकारा दिला कर उसको इस राह मे आगे बढने मे सहायक हो। क्योकि उसका नफ्स उसको कदम-कदम पर भ्रमित करता रहता है।

सम्पूर्ण भूतों में ईश्वर-दर्शन

सूफी-सन्त नूरी फरमाया करते थे कि मेरा नफ्स

चालीस साल से नफ्स से अलग है जिसकी वजह से मेरे हृदय मे पाप का विचार तक नही आया। परन्तु यह पद मुझे उस समय प्राप्त हुआ जब खुदा को पहचान लिया और नूर [प्रकाश] का दर्शन करते-करते मैं स्वय नूर बन गया।

इस अवस्था मे आपको सृष्टि की हर वस्तु और प्राणी मे ईश्वर और उसकी सत्ता के दर्शन होते थे। इस सम्बन्ध मे गीता मे श्रीकृष्ण महाराज कहते है—

"सर्व-व्यापी अनन्त चेतन मे एकीभाव से स्थिति-रूप योग से युक्त आत्मा वाला तथा सब मे समभाव से देखने वाला योगी आत्मा को सम्पूर्ण भूतो [ससार के जड-चेतन सब वस्तुओ और प्राणियो] मे स्थित और सम्पूर्ण भूतो को आत्मा में कल्पित देखता है"।

[अ० ६।२९]

सन्त कबीर इस रहस्य को इन शब्दो मे व्यक्त करते है—जल मे कुम्भ, कुम्भ मे जल है बाहर-भीतर पानी"।

एन दिन महात्मा नूरी ने एक मनुष्य को नमाज के दौरान दाढी पर हाथ फेरते हुए देखकर फरमाया कि अपना हाथ खुदा की दाढी से दूर रख। यह बात सुन कर लोगो ने खलीफा से शिकायत की और कहा कि यह बात धर्म-विरुद्ध है क्योकि खुदा तो निराकार है। और एक मनुष्य की दाढ़ी खुदा की दाढी कैसे हो सकती है। जब खलीफा ने आपसे प्रश्न किया कि तुमने यह धर्म-विरुद्ध बात क्यों कही। आपने उत्तर दिया कि जो मनुष्य तमाम चीजो को खुदा की सृष्टि समझता है उस का ध्यान हर चीज को देखकर इन चीजो के स्रष्टा

अर्थात खुदा की तरफ जाता है। क्योकि यह स्वभाविक नियम है कि आदमी जिस चीज को देखेगा उसका ध्यान निश्चय ही उस चीज के मालिक अर्थात बनाने वाले की तरफ जायेगा। इसलिए यह असम्भव है कि अगर आदमी के हृदय और मस्तिष्क मे यह दृढ विश्वास हो जाए कि यह ससार और जो कुछ इस ससार मे है सब खुदा द्वारा निर्मित है और उसकी सम्पत्ति है तो वह फिर खुदा की तरफ ध्यान न दे। अत जब बन्दा खुद खुदा की सृष्टि और सम्पत्ति है तो उसकी दाढी भी खुदा की सम्पत्ति है। यह उत्तर सुन कर खलीफा ने कहा कि खुदा का शुक्र है आपने मेरी आँखे खोल दी और मैंने आपको कत्ल नहीं किया।

शैतान से मुलाकात

यह एक रहस्यपूर्ण सत्य है कि सूफी-सन्तो का सत्सग लाभ उठाने के लिए फरिश्ते [देवदूत] अकसर आते रहते है। और कभी-कभी मृत-आत्माएँ भी उनके पास आती हैं और अपने उद्धार के वास्ते ईश्वर से प्रार्थना करने के लिए सूफी-सन्तो से विनती करती हैं।

ऐसी ही एक घटना के बारे मे कथा आती है कि एक दिन महात्मा नूरी एक व्यक्ति के साथ-साथ बहुत देर तक रोते रहे और जब वह चला गया तो फरमाया कि यह शैतान था और अपने भजन-पूजन और तपस्या का जिक्र करके इस कदर सुबक-सुबक कर रोया कि मुझे भी रोना आ गया। जब शिष्यो ने आपमे शैतान के भजन-पूजन और तपस्या के बारे में तअज्जुब किया तो आपने कहा कि शैतान भी एक फरिश्ता

है। उसने बडी तपस्या करके ईश्वर के दरबार मे स्थान प्राप्त किया था। परन्तु ईश्वर ने हजरत आदम [आदि पुरुष] की सृष्टि करने के बाद जब फरिश्तो को हजरत आदम को सिजदा [साष्टाग प्रणाम] करने का हुक्म दिया तो शैतान के अतिरिक्त सबने इसलिए सिजदा किया कि वह हजरत आदम की सृष्टि के भेद के जानकार नही थे और शैतान ने इस भेद का जानकार होने के कारण अहकारवश आदम को सिजदा करने से इन्कार कर दिया। इस अवज्ञा की वजह से शैतान को ईश्वर के दरबार से निकाला गया। फिर ईश्वर ने कहा कि पृथ्वी के अन्दर हमने एक ऐसा खजाना छिपा दिया है कि जो उसको जानना चाहेगा उसका सिर काट दिया जायेगा। शैतान ने कहा कि जो खजाना मुझे प्रदान किया गया है यद्यपि उसके बाद मुझे किसी अन्य खजाने की जरूरत नही फिर भी अगर मुझे छिपे हुए खजाने का ज्ञान हो गया तो मैं इसकी जानकारी अवश्य प्राप्त करूँगा। हुक्म हुआ तुझे समय दिया जाता है कि तू उस खजाने को खोज ले। परन्तु यदि तूने वह खजाना प्राप्त भी कर लिया तो भी हमारे भक्त तुझे अधर्मी समझ कर कहेगे कि शैतान एक ऐसा फरिश्ता था जिसने ईश्वर की आज्ञा का उल्लघन किया और इस विचार से तेरी किसी बात को न तो सच्ची मानेगे और न ही उस पर विश्वास करेगे।

मनुष्य-मात्र के लिए प्रेम और इसका रहस्य

महात्मा नूरी के दिल मे मनुष्य-मात्र के लिए अपार प्रेम था और उनके कष्टो के निवारण के लिये हरदम दुआ माँगते रहते थे। यह प्रेम जीवित मनुष्यों के लिए तो था ही

मृत आत्माओ के लिये भी आपके दिल में बडी दया-कृपा का भाव था। सूफी-सन्त महात्मा जाफर वर्णन करते हैं कि मैने स्वयं आपको यह प्रार्थना करते सुना था—ऐ अल्लाह, तू अपने द्वारा निर्मित प्राणियो को नर्क में यातनाये देगा। परन्तु तेरे अन्दर यह सामर्थ्य भी है कि केवल मेरे अस्तित्व ही से नर्क को भर दे और नर्क के वासियों के बदले मे तमाम यातनाएँ मुझे दे दे तथा उन्हे स्वर्ग मे भेज दे। महात्मा जाफर कहते है कि उसी रात मैंने स्वप्न मे किसी को कहते हुए सुना कि अब्बुल हसन नूरी को हमारा यह सन्देश पहुँचा दो कि हमने प्राणी-मात्र के प्रति प्रेम के बदले मे तुम्हे क्षमा और सारे पापो से मुक्त कर दिया। इस प्रकार हमे इस रहस्य का पता चलता है कि सच्चे दिल तथा निष्काम और निःस्वार्थ भाव से दूसरो की भलाई के लिए की गई प्रार्थना स्वयं हमारा ही उद्धार कर देती है।

दुर्लभ पुरुष

महात्मा नूरी कहा करते थे कि हमारे जमाने के मनुष्यो मे मे यह दो प्रकार के पुरुष बहुत दुर्लभ हैं—एक, वह विद्वान और ज्ञानी जो अपनी विद्या के अनुरूप कर्म करता है और दूसरे, वह आत्म-ज्ञानी जो सच्चाई के साथ हितकारी वचन बोलता है। ऊपर वर्णित दोनो बातो से सम्बन्धित महात्मा नूरी के जीवन की दो घटनाएँ इस प्रकार हैं—

सच्चा ज्ञानी

आप कहते थे कि सच्चा ज्ञानी वही है जिसका कर्म और व्यवहार उसके ज्ञान के अनुरूप हो। एक दिन सूफी-

साधक महात्मा शिबली आप की उपस्थिति मे प्रवचन और उपदेश दे रहे थे। तो आपने फरमाया कि कर्महीन ज्ञानी से ईश्वर प्रसन्न नही होता। अत. अगर तुम अपने ज्ञान के अनुसार कर्म और व्यवहार भी करते हो तो प्रवचन करना और उपदेश देना जारी रखो वर्ना मच से नीचे उतर जाओ। यह सुन कर जब महात्मा शिबली ने आपके वचनो पर गौर किया तो महसूस हुआ कि उनके कर्म और व्यवहार मे निश्चय ही कमी है। अतः वह मच से नीचे उतर आए और एकान्तवासी होकर ईश्वर-भजन में लीन हो गये।

सत्य और हितकारी वचन कहना

आध्यात्मिक सत्य बोलने के अर्थ है अनुभवी रहस्यो के बारे मे लोगो को बताना। यह कार्य बहुत कठिन ही नही कष्टकर भी है क्योकि अध्यात्म के रहस्य सर्व-साधारण को समझा पाना करीब-करीब नामुमकिन है और दूसरी बात यह है कि जब ऐसी गूढ बाते लोगो की समझ मे नही आती तो वह उस महात्मा के बारे मे नाना भ्रॉतियाँ फैला कर उसके साथ बडा अनुचित व्यवहार करते है, यहा तक कि सूफी-सन्त महात्मा मन्सूर-अल-हल्लाज को तो दिल दहला देने वाली अमानवीय यातनाएं देकर जान से मार डाला गया था। इसलिये आत्मज्ञानी उन रहस्यमयी बातो के बारे मे सत्य को सर्व-साधारण से छिपाते हैं।

महात्मा हिजवीरी कहते है कि महात्मा नूरी एक दिन महात्मा जुनैद के पास गये। उस समय महात्मा जुनैद गद्दी पर विराजमान थे। महात्मा नूरी ने उनसे कहा—ऐ अब्बुल

कासिम, तूने उनसे सत्य को गुप्त रखा यही कारण है कि उन्होंने तुझे गद्दी पर बैठाया और मैंने उनको सच्ची नसीहत दी अर्थात आध्यात्मिक हितकारी वचन कहे तो उन्होंने मुझ पर पत्थर बरसाये।

ब्रह्माण्ड का प्रतिबिम्ब ही यह अण्ड है और प्रतिबिम्ब मे असल वस्तु का ठीक उल्टा नजर आता है। आप शीशे के सामने खडे होकर अपना सीधा हाथ उठाइये तो आप देखेंगे कि शीशे मे आपके प्रतिबिम्ब का उल्टा हाथ उठा है। अत. जो बाते अध्यात्म मे हितकारी मानी गई हैं वही बाते सांसारिक दृष्टि से देखने पर बहुत बुरी और अशुभ लगती हैं। कथा आती है कि सन्त महात्मा तुलसी साहब [जिनको लोग साहिब जी भी कहते थे, जिन्होंने हाथरस से एक मील पर बसे जोगिया नाम के गाँव मे अपना सत्संग जारी किया था और जिनकी समाधि हाथरस मे है] अकसर हाथरस से बाहर एक कम्बल ओढ, हाथ मे डंडा लिए दूर-दूर शहरो मे चले जाया करते थे। ऐसे ही एक समय देशाटन करते हुए एक नगर मे पहुँचे। वहाँ एक साहूकार ने आपका बडा सत्कार किया और भोग लगाते समय यह वरदान माँगा कि मुझे दया मे एक पुत्र बख्शा जाय। महात्मा तुलसी साहब ने अपना सोटा उठाया और यह कह कर चलते हुए कि लडका अपने सगुण इष्ट से माग। अरे, सन्तो की दया तो यह होती है कि अगर उसके दास के औलाद मौजूद भी हो तो उसे उठालें और यदि उसका दास धनवान हो तो उसके धन को छीन कर उसे निर्धन कर दे।

अब जरा सोचिये, सांसारिक दृष्टिकोण से यह कितनी

बुरी और अशुभ बात है। और ऐसी बात सुन कर यदि सासारिक विषय-वासनाओ और इच्छाओ मे फँसे मनुष्य सूफी-सन्त पर पत्थर बरसाने लगे तो क्या आश्चर्य है। और जो सूफी-सन्त ऐसी सच्ची नसीहत मनुष्यो को नही देते उन्हे तो यकीनन वह गद्दी पर बिठा कर आदर-सत्कार करेंगे ही।

उपदेश और प्रवचन

महात्मा नूरी कहा करते थे कि जब साधक मे उपदेश देने और प्रवचन करने की योग्यता हो जाय उस समय उसे उपदेश देना और प्रवचन करना उचित है। उपदेश देने और प्रवचन करने के योग्य वह साधक होता है जिसने ईश्वर को पहचान लिया हो। आपने कहा, वर्ना ईश्वर के पहचाने बगैर उपदेश देने और प्रवचन करने की बला [रोग-व्याधि] साधको और शहरो मे फैल जाती है जिस से समाज का उद्धार तो होता नही उल्टा उसमे नाना प्रकार की बुराइयाँ फैल जाती हैं और समाज अधोगति को प्राप्त हो जाता है।

एक दिन महात्मा अबू हमजा किसी जगह "ईश्वर की समीपता" के विषय पर प्रवचन करते हुए उपदेश दे रहे थे। महात्मा नूरी भी उस सभा मे मौजूद थे। उस समय आपने फरमाया कि जिस समीपता मे हम लोग है वह वास्तव मे दूरी से भी दूरी है—

उन्हें ये राज समझाओ जो नजदीकी पे है नाजा।
जो जितना पास बैठे हैं वो उतना दूर बैठे हैं॥
—गाफिल बरनी

प्रेम गली अति सांकरी

आपने महात्मा जुनैद से कहा कि तीस साल से मैं इस उधेड-बुन मे परेशान हूँ कि जब ईश्वर जाहिर [प्रकट] होता है तो मैं गुम हो जाता हूँ और जब मैं जाहिर होता हूँ तो उसकी जात गुम हो जाती है। अर्थात उसकी हुजूरी [प्राकट्य और उपस्थिति] मेरी गैबत [परोक्षता, अन्तर्ध्यान होने] में है। और जब मैं यह प्रयास करता हूँ कि जब ईश्वर प्रकट हो तो मैं गुम न होऊँ, तो हुक्म होता है या तो तू रहेगा या मैं। इस रहस्य को सन्त कबीर ने यूं कहा है—

जब मै था तब तू नहीं जब तू है मैं नाहि ।
प्रेम गली अति सांकरी जा में दो न समाहि ।।

महात्मा नूरी की बात सुन कर महात्मा जुनैद ने कहा कि आप इसी अवस्था मे स्थिर रहे कि बाहर और भीतर केवल वो ही वो नजर आता रहे और आप गुम रहे।

एकरसता

आप फरमाया करते थे कि काबे की परिक्रमा करते हुए मैंने यह दुआ माँगी—ऐ अल्लाह, मुझे एकरसता अर्थात वह अवस्था प्रदान करदे जिसमे कि परिवर्तन न हो। अतः काबे में से आवाज आई—ऐ अब्बुल हसन, तू हमारे समान होना चाहता है। अरे, यह विशेषता [खूबी] तो हमारी है कि हमारे गुणो मे कभी परिवर्तन और बदलाव नहीं होता और वह सदा एकरस रहते है। अपरिवर्तनशील रहने वाले के अतिरिक्त अपरिवर्तनशील अवस्था पर अन्य कोई मग्न नही

कर सकता। हमने बन्दो मे इसलिए परिवर्तन और बदलाव रखा है ताकि यह रहस्य प्रकट होता रहे कि जो दास-भाव से अपने को समर्पित करके हमारी शरण मे आ जाता है उसकी रक्षा और पालन-पोषण करना हमारा काम है।

प्रेम की शान

इस्फहान देश के एक युवक के हृदय मे महात्मा नूरी के दर्शन करने की उत्कट इच्छा जाग्रत हुई। जब यह समाचार वहाँ के बादशाह को मिला तो उसने उस युवक को दरबार मे बुला कर यह लालच दिया कि अगर तुम महात्मा नूरी से मिलने न जाओ तो मैं तुम्हे एक हजार दीनार [स्वर्ण मुद्रा] का महल सब वैभवों सहित और एक हजार दीनार की बाँदियाँ जेवरो सहित भेट कर सकता हूँ। परन्तु वह युवक इन प्रलोभनो को ठुकरा कर नगे-पाँव आपके दर्शनो के शौक मे चल पडा। इधर आपने अपने शिष्यो और श्रद्धालुओ को हुक्म दिया कि आश्रम से एक मील तक मार्ग बिलकुल साफ करदो क्योकि हमारा एक प्रेमी नगे-पॉव चला आ रहा है। और जब वह नौजवान आपकी सेवा मे उपस्थित हुआ तो आपने बादशाह द्वारा दिए गये लालच और उस नौजवान के पक्के इरादे की पूरी घटना का वर्णन कर दिया जिसको सुनकर वह युवक तथा अन्य उपस्थित जन-समूह आश्चर्य चकित रह गए। फिर आपने कहा कि प्रेमी की शान यह है कि अगर सारे ससार के वैभव भी उसके सामने पेश किये जायँ तो उन पर दृष्टि न डाले।

सेवक का धर्म

सूफी-सन्तो के यहाँ सेवको का धर्म यह माना जाता है

कि हर हाल मे अपने मालिक का आदर-सम्मान करे। उनकी शान के खिलाफ बुरा बोलना तो अलग, बुरा सोचे भी नही—वर्ना पाप के भागी बनते हैं और ईश्वर की ओर से उन्हे सजा दी जाती है। क्योकि पता नही सूफी-सन्त किस तरग मे क्या काम कर जायँ। कहते हैं एक बार महात्मा नूरी ने दहकता हुआ अँगारा हाथ में लेकर मल लिया जिस की वजह से हाथ काला हो गया। उसी समय सेवक ने आपके सामने दूध और रोटी लाकर रख दी। आपने हाथ धोये बगैर खाना आरम्भ कर दिया। यह देख कर सेवक के हृदय में विचार आया कि यह तो बहुत ज्यादा बदतमीजी [अशिष्टता] की बात है। अभी वह यह सोच ही रहा था कि बाहर से सिपाहियो ने आकर उसे यह कहते हुए गिरफ्तार कर लिया कि तूने जेर-जामा [वह वस्त्र जो घोड़े की पीठ पर डाल कर ऊपर जीन कसते हैं] चुराया है और तुझे कोतवाल के सामने पेश किया जायेगा। यह कहा और उसको कोड़े मारने शुरू कर दिये। यह देखकर महात्मा नूरी को दया आ गई और उसके अपराध को मन ही मन क्षमा करके, सिपाहियो से बोले—इसे मत मारो। तुम्हारा जेरजामा अभी मिल जायेगा। अत उसी समय एक आदमी आया और उसने जेरजामा सिपाहियो को दे दिया। सिपाही उस सेवक को छोड कर चले गये। तब आपने बडे प्रेम से उस सेवक को अपने पास बुलाया और मुस्करा कर कहा—आखिर मेरी बदतमीजी ही तेरे काम आ गई। यह सुन कर सेवक बहुत लज्जित हुआ और उसने अपने बुरे विचार के लिये पश्चाताप किया।

बीमार का हाल पूछने जाना

एक बार महात्मा नूरी बीमार हो गये। अत. आपके

स्वास्थ्य के बारे में हालचाल पूछने के लिये महात्मा जुनैद अपने कुछ शिष्यों के साथ आपके पास आये और कुछ फल-फूल भेंट किये। इसके कुछ समय बाद ऐसा हुआ कि महात्मा जुनैद बीमार पड़ गये। अत महात्मा नूरी अपने शिष्यो के साथ उनके स्वास्थ्य के बारे मे पूछने के लिए तशरीफ ले गये। वहाँ पहुँच कर अपने मुरीदो से फरमाया कि सब लोग जुनैद का मर्ज अपने ऊपर बाँट लो। यह कहते ही महात्मा जुनैद स्वस्थ हो गये तो महात्मा नूरी ने फरमाया—फल-फूल ले जाने के बजाय सूफी-सन्त को इस प्रकार बीमार के स्वास्थ्य के बारे मे पूछने जाना चाहिए।

ध्यान

ईश्वर की लीला भी बडी विचित्र है। उसने अपने रहस्यो को ससार के चराचर मे प्रकट कर दिया है। ससार के हर जीव और हर जड पदार्थ के रूप मे उसका कोई न कोई रहस्य प्रकट हो रहा है—बस देखकर समझने वाली सृष्टि की आवश्यकता है। जिस दृश्य को एक मनुष्य साधारण बात समझ कर गौर नही करता उसी दृश्य को देखकर महात्माजन ईश्वर के किसी रहस्य का भेद पा जाते है। इसीलिए सूफी-सन्त धर्म-शास्त्रो की बजाए ससार-रूपी पुस्तक को पढ कर ज्ञान प्राप्त करने का उपदेश देते है।

एक बार महात्मा शिबली ने महात्मा नूरी को इतना गहन ध्यानस्थ देखा कि शरीर का एक रोआँ तक नही हिल रहा था और जब महात्मा शिबली ने आपसे पूछा कि ध्यान का यह कमाल आपने किस से प्राप्त किया तो आपने कहा

कि बिल्ली से। महात्मा शिबली ने आश्चर्य व्यक्त किया कि बिल्ली से किस तरह। तो आपने कहा कि एक बार मैंने देखा कि एक बिल्ली चूहे के बिल के सामने मुझसे भी ज्यादा बिना हिले-डुले एकाग्र बैठी थी। आपने महात्मा शिबली को समझाया कि साधक को अपने ईश्वर अथवा गुरु के सामने इसी प्रकार पूर्ण निश्चल अवस्था में बैठ कर ध्यान करना चाहिए।

सूफी-सन्त महात्मा अब्दुल्ला-बिन–मुबारक कहते हैं कि बचपन के जमाने मे मैंने एक भक्त-स्त्री को देखा। नमाज की हालत मे एक बिच्छू ने उसे लगभग चालीस बार डङ्क मारा लेकिन वह जरा-सा भी नही हिली-डुली और नमाज पढती रही। जब वह नमाज पढ़ चुकी तो मैंने कहा—माँ, आपने बिच्छू को अपने से अलग क्यो नही किया। उसने कहा—बेटा, तू बच्चा है। खुदा का काम करते हुए मैं अपना काम कैसे शुरू कर देती।

सब्र-धैर्य

एक दिन कुछ लोग एक वृद्ध पुरुष को भीषण यातनाएँ देते हुए जेलखाने की तरफ ले जा रहे थे। और वह बड़े सब्र के साथ यातनाओं को सह रहा था और पूर्णतः शान्त था। सन्त नूरी ने जेलखाने में जाकर उससे पूछा कि इस वृद्धावस्था और निर्बलता के बावजूद तुमने सब्र कैसे किया। उसने जवाब दिया कि सब्र का सम्बन्ध हिम्मत और बहादुरी से है न कि ताकत और कूव्वत से। फिर आपने पूछा कि सब्र का क्या अर्थ है। उसने कहा कि मुसीबतों को उस तरह खुशी के साथ बर्दाश्त करना चाहिए जिस तरह लोग मुसीबतों से छुटकारा

पा कर प्रसन्न होते है। थोडी देर के बाद उस वृद्ध ने फिर फरमाया—बेटा, आग के सात समुन्दर पार करने के बाद मारफत [अध्यात्म-ज्ञान] प्राप्त होती है और जब प्राप्त हो जाती है तो आदि-व-अन्त का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

सूफी की परिभाषा

महात्मा नूरी ने फरमाया है कि सूफी की परिभाषा यह है कि न तो वह किसी की कैद में हो और न कोई उसकी कैद में हो। फिर फरमाया कि सूफी आत्माएँ मानवी अपवित्रता से मुक्त, मन की दूषित वासनाओ से साफ और इच्छाओ से रहित हैं।

तसव्वुफ-सूफीमत

महात्मा नूरी कहते हैं कि तसव्वुफ उस विद्या का नाम है जिसे सूफी साधक पढ़ते है। इसे इल्मे-फकीरी भी कहते है। इसकी मुख्य बाते हैं—मन की दूषित वासनाओ से साधक का पाक-साफ होना और सारी सृष्टि मे अर्थात चराचर-मात्र मे ईश्वरीय-तत्व का जानना। सूफी-सन्त महात्मा मुहिउद्दीन-इब्नुल-अरबी फरमाते हैं—यह संसार परमात्मा के गुणो की अभिव्यक्ति-मात्र है। महात्मा नूरी फरमाते है—तसव्वुफ न तो रस्म [प्रथा, रीति-निवाज] है, न इल्म [विद्या], क्योकि अगर रस्म होता तो तपस्या से और यदि इल्म होता तो शिक्षा से प्राप्त हो जाता, बल्कि तसव्वुफ शिष्टता और सदाचार की वस्तु है और ईश्वरीय गुणो को ग्रहण करने से, प्राप्त होता है। अतः कहा जाता है कि सूफी-सन्तो के लिए जरूरी नही कि वह आध्यात्मिक तत्वों के जानकार हो और न

यही जरूरी है कि वह धर्म-ग्रन्थों का निरन्तर अध्ययन करते रहें। फकीरी [साधुता का] जीवन बिताने वाले अथवा महान सदाचारी और पूर्ण निष्ठावान व्यक्ति ही सूफी-सन्त हो सकते हैं।

अध्यात्म-ज्ञान-मारफत

अध्यात्म-ज्ञान प्राप्ति के सम्बन्ध मे महात्मा नूरी का कथन सूफी-जगत मे सर्वोच्च माना जाता है। आप कहते हैं कि परमात्मा को पाने का रास्ता परमात्मा के सिवा और कोई नही बता सकता। अपनी बुद्धि के द्वारा मनुष्य उस परमात्मा को जानना चाहता है लेकिन एक सीमा तक पहुँच कर उसकी गति अवरुद्ध हो जाती है और मनुष्य को अपनी असहाय अवस्था का बोध होने लगता है। अपनी इस मजबूरी के समय वह परमात्मा से दया की भीख माँगता है। तब परमात्मा की दया से ही साधक उसे जान पाता है और उसकी आत्मा को परम शान्ति मिलती है, परम आनन्द की अनुभूति होती है।

चमत्कार

सूफी-सन्तो के यहाँ चमत्कार दिखाने को महानता की शान नहीं माना जाता और न ही कोई महत्व दिया जाता है। बल्कि सूफी-सन्त की महानता इस बात मे मानी जाती है कि वह संसार मे छिप कर रहते हुए अपने सदाचार, सद्व्यवहार, सच्चरित्रता की मिसाल कायम करे। इसमे एक भेद है— इनके यहाँ महात्मा का अपने अहङ्कार-वश या अपनी सिद्धि या आध्यात्मिक उच्च पद के प्रदर्शनार्थ चमत्कार दिखाना

बुरा माना जाता है। परन्तु चूंकि सूफी-सन्तो का हृदय बडा कोमल होता है और वह किसी मनुष्य को मुसीबत मे फँसा देखकर, उसकी दीन दशा देखकर द्रवित हो जाता है अत उस दुखी मनुष्य के दुख के निवारण के लिए वह अलौकिक कार्य कर देते है। ऐसे निःस्वार्थ, निष्काम और सहज भाव से किए गये चमत्कार को बुरा नही माना जाता।

एक मनुष्य यात्रा कर रहा था। मार्ग मे उसका गधा मर गया तो वह इस विचार से रोने लगा कि अब मै सामान किस चीज पर लाद कर ले जाऊँगा। संयोग से उसी समय महात्मा नूरी उधर आ निकले। उस यात्री की दीन-हीन दशा देखकर आपके दिल में दया उमड पडी। आपने गधे को ठोकर मार कर कहा—यह सोने का समय नही है। इतना कहना था कि गधा उठ खडा हुआ और वह यात्री आपको धन्यवाद देकर और सामान गधे पर लाद कर अपनी यात्रा पर चला गया।

महाप्रयाण

एक दिन आप कही जा रहे थे कि रास्ते मे एक अन्धा मनुष्य "अल्लाह-अल्लाह" जपते हुए आपको मिला तो आपने फरमाया कि तू अल्लाह को क्या जाने। अगर अल्लाह को जान लेता तो जिन्दा न रह सकता। यह कह कर गश खा कर जमीन पर गिर पडे और होश आने के बाद एक ऐसे जङ्गल मे जा पहुँचे जहाँ बाँस की फाँसे आपके शरीर मे चुभती थी और खून की हर बूँद से "अल्लाह" शब्द अङ्कित होता था। बहुत ढूँढने पर मुरीदो को आप जंगल मे इस अवस्था मे मिले।

आपको इसी दशा में घर लाया गया और कलमा—ला इलाह इल्लिल्लाह [अर्थात कुछ नही है सिवा परमात्मा के] —पढ़ने के लिए कहा गया तो फरमाया—मैं तो उसी के पास जा रहा हूँ। यह कह कर संसार से विदा हो गए—संसार को प्रकाशित करके नूर की यह किरण अपने असल भण्डार अनन्त नूर में समा गई।

महात्मा जुनैद की राय

सूफी-सन्त महात्मा नूरी के ब्रह्मलीन होने के बाद महात्मा जुनैद ने कहा—महात्मा नूरी अपने समय के ऐसे सच्चे सूफी-सन्तो मे से थे कि आपके बाद सच्ची और आध्यात्मिक हितकारी बात किसी ने नही कही।

सूफी-सन्त महात्मा मन्सूर-अल-हल्लाज

एक समय ऐसा भी था। राजा शासन-प्रबन्ध आध्यात्मिक अनुभव-प्राप्त महात्माओ के परामर्श और उनकी देख रेख में किया करते थे। उस समय उदारता और धार्मिक सहिष्णुता थी। अतः ईश्वरीय-मार्ग पर चलने वाले साधक अपने-अपने अनुभवो का वर्णन निर्भय होकर करते थे, और या तो वह स्वयं या फिर उनके शिष्य अथवा अनुयायी उनके बताए हुए अनुभवो को लिपिबद्ध कर लेते थे। भिन्न-भिन्न महापुरुषो के अपने-अपने अनुभवो के आधार पर लिखी हुई यह पुस्तके "धर्मशास्त्र" कहलाती है। ईश्वर अनन्त है और कोई भी महात्मा उसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त नही कर सकता। अत किसी महात्मा को परमेश्वर का कुछ रहस्य मालूम हुआ, तो किसी को कुछ और ही रहस्य का अनुभव हुआ तथा अन्य किसी को कुछ और ही रहस्य का ज्ञान हुआ। इस तरह इन शास्त्रो मे भिन्न-भिन्न अनुभवो का वर्णन पाया जाता है। जब तक राजकीय कार्य अनुभवी-महात्माओ के परामर्श से चलता रहा, सर्व-साधारण और साधक सभी स्वतन्त्र और प्रसन्न रहे। परन्तु जैसे-जैसे राजा को परामर्श देने का कार्य अनुभवी

महात्माओं के बजाय इन शास्त्रो को पढ कर विद्वान और शास्त्री बने तथा पुस्तकीय-ज्ञान अर्जित करने वाले धर्माचार्यों, जिनको अपना कोई अनुभव नही था, के पास आता चला गया तो धार्मिक सहिष्णुता का स्थान धार्मिक कट्टरता लेती चली गई। और बाद में होने वाले महात्माओ का अनुभव यदि इन शास्त्रों में वर्णित अनुभवो से मेल नही खाता था तो यह पुस्तकीय-ज्ञानी और शास्त्री-धर्माचार्य उस महात्मा को अधर्मी और नास्तिक [काफिर] बता कर राजा द्वारा दण्डित करवाने लगे। ऐसे समय मे इन सूफी-सन्तों ने भिन्न-भिन्न मार्ग अपनाए। कुछ सूफी-सन्त तो जंगल-पर्वतो मे रह कर भजन-पूजन करते थे और ससार से दूर रहते थे। कुछ सूफी-सन्त ससार मे रहते थे परन्तु अपने अनुभव के आधार पर ज्ञात "सत्य" का वर्णन अपने अधिकारी और पात्र शिष्यो से ही करते थे। परन्तु कुछ सूफी-सन्त ऐसे भी हुए जिन्होंने सर्व-साधारण को अपने-अपने अनुभवो के अनुसार प्राप्त "सत्य" के बारे मे बताना जारी रखा। ऐसे सूफी-सन्तो के वर्णन यदि पहले लिखे शास्त्रो मे वर्णित अनुभवीय "सत्यो" से भिन्न होते थे—जो स्वाभाविक था—तो इन पुस्तकीय ज्ञानियो को अपने अस्तित्व का खतरा महसूस होने लगता था और वे उसकी चुगली राजा तथा जनता मे करते थे। इस प्रकार इन धर्माचार्यों के भड़काने पर जनता तथा राजाओ ने इन सत्य के पुजारी सूफी-सन्तो को बड़े-बडे कष्ट दिए। यहां तक कि बहुत से सूफी-सन्तो को अमानवीय यातनाएँ दे दे कर कत्ल कर दिया गया। इस सम्बन्ध मे एक कथा आती है—एक दिन सूफी-सन्त महात्मा नूरी सूफी-सन्त महात्मा जुनैद से मिलने गए। उस समय महात्मा जुनैद गद्दी पर विराजमान थे। यह

देखकर महात्मा नूरी ने कहा—ऐ जुनैद, तूने सत्य को छिपाया तो तुझे लोगो ने गद्दी पर बिठाया और मैंने सत्य को प्रकट किया तो लोगों ने मुझे पत्थरो से मारा।

इस बात को दृष्टि में रखकर उन महात्माओ ने जिन्होने ईश्वर को जान लिया था, अकसर अपने शिष्यो को यह दो मुख्य उपदेश दिये—

१ ईश्वर इन्द्रियातीत है, अर्थात् उस परम-तत्व को मनुष्य अपनी किसी भी इन्द्रिय द्वारा नही जान सकता। और न ही किसी इन्द्रिय द्वारा उसका ज्ञान किसी दूसरे मनुष्य को करा सकता है। ऐसे इन्द्रियातीत ईश्वर से सम्बन्धित जो रहस्य है वह भी मनुष्य अपनी किसी इन्द्रिय से नही समझ सकता और न ही किसी दूसरे को इन्द्रिय द्वारा समझा सकता है। हाँ, साधना पथ मे चलता-चलता साधक एक ऐसी मजिल पर पहुँचता है जहाँ पहुँच कर उसकी एक विशिष्ट अवस्था हो जाती है और वह उस परमतत्व का साक्षात्कार करने लगता है और उसी समय वह उसके रहस्यो को भी जान जाता है। इसीलिए आत्मज्ञानी महात्मा अपने आत्मबल से साधको को उसका साक्षात्कार करा देते हैं।

परमसन्त महात्मा रामचन्द्रजी महाराज से जब कोई साधक ईश्वर-सम्बन्धी कोई प्रश्न करता था तो वह मुख से कुछ न कह कर या तो उसी समय या फिर बाद मे किसी उप-युक्त समय पर उस साधक को उस प्रश्न-वाली अवस्था मे लेजा कर उस प्रश्न के उत्तर का साक्षात्कार करा दिया करते थे। इस प्रकार उस साधक को भी अनुभवी ज्ञान प्राप्त हो

जाता था, शंका मिट जाती थी और आनन्द प्राप्त हो जाता था।

२. दूसरी महत्वपूर्ण बात जो आत्मज्ञानी महापुरुषो ने बताई वह यह है कि उस परम-तत्व के बारे में अपात्रो और अनाधिकारियो के साथ बातें न करो क्योकि वह इन रहस्यमयी बातो को समझेंगे नही और फलस्वरूप या तो वह ऐसी बातें सुन कर हँसी मे उड़ा देंगे या फिर हो सकता है इन बातो को को अधार्मिक बता कर उस महापुरुष के साथ दुर्व्यवहार कर बैठें या जान ही से मार डाले। अतः इन अनुभवीय ज्ञान का वर्णन केवल पात्र और अधिकारी मनुष्यो और साधकों के मध्य ही करना। सन्त कबीर साहब ने अपने मुख्य शिष्य श्री धर्मदास जी से फरमाया—"धर्मदास तोहे लाख दुहाई, सार वस्तु बाहर नही जाई।'

यद्यपि इन हिदायतो का प्रचार-प्रसार सूफी-सन्तो में काफी था फिर भी चूँकि सूफी-सन्त दयालु और सहृदय होते है, इसलिए अनुभवहीन धर्माचार्यों द्वारा दिये गए कष्टों और राजकीय दण्ड की परवाह न करते हुए, जन-साधारण को वह अपने अनुभवों द्वारा जाने गए ईश्वरीय-रहस्यो को बताते ही रहे।

ऐसे सूफी-सन्तो मे महात्मा मन्सूर-अल-हल्लाज एक बहुत उच्च कोटि के सूफी-सन्त हो गए हैं। आप अपने समय के बहुत ही निराली शान के सूफी-सन्त थे और आपका सूफी-सन्तों में अपना विशिष्ट स्थान है। आपके अनुभवी-विचारों, रहस्यमयी-वाणियो और चमत्कारपूर्ण-क्रियाओं ने उस समय

के मुस्लिम जगत मे एक हलचल पैदा करदी थी। अत: आपके सम्बन्ध मे विचित्र-विचित्र वर्णन मिलते हैं। आपका हृदय सदैव ईश्वरीय-प्रेम की विरहाग्नि से सतप्त रहता था और इस अवस्था में आप बड़े ऊँचे घाट की वाणी बोलते थे जो सर्व-साधारण की तो बात ही क्या है, बड़े-बड़े विद्वानो, ज्ञानियो और महात्माओ तक की समझ मे नही आती थी। इस वजह से बहुत-सूफी-सन्तो ने आपको "महात्मा" स्वीकार नही किया है और कहा है कि आप सूफी-धर्म से बिल्कुल अनभिज्ञ थे। बहुतो ने आपको नास्तिक और जादूगर का खिताब दे दिया था। उस समय के अनुभवहीन और पुस्तकीय ज्ञानी धर्माचार्यों ने खलीफा से आपकी शिकायत की और इसका नतीजा यह हुआ कि आपको बहुत अपमान सहना पडा, नाना प्रकार की अमानवीय यातनाएँ भोगनी पडी, जेलखाने की कठोर तकलीफे झेलनी पडी और अन्त मे दिल दहला देने वाले तरीके से आपको मौत के घाट उतार दिया गया। जब आपको प्राण दण्ड का हुक्म दिया गया तो आप पर यह इल्जाम लगाया गया कि आप अपने-आपको ईश्वर के साथ एकमेक मान कर "अनल-हक" [अहम्-ब्रह्मास्मि—मैं ईश्वर हूँ] की घोषणा करते हैं। यह बात इस्लामिक शरीअत के सिद्धान्त "एकेश्वरवाद" के विरुद्ध थी।

परमात्मा में एकमेक होना

सूफियो का एक सम्प्रदाय भक्त की आत्मा के ईश्वर मे मिलकर एकमेक हो जाने के सिद्धान्त को मानने वाला है। उनके यहाँ भक्त को परम-अवस्था यह है कि साधक की आत्मा ईश्वर मे मिल कर एकमेक हो जाय। "एकमेक" होने

का क्या अर्थ है ? परमात्मा मे पूर्ण-लय हो जाना "एकमेक" होना है।

सूफी-सन्तो मे इस सिद्धान्त के बारे मतैक्य नही है। सूफी-सन्त महात्मा हिजवीरी का इस सम्बन्ध मे यह मत है कि जो मनुष्य ऐसे सिद्धान्त को मानने वाला है वह धर्म के मर्म से अनभिज्ञ है क्योकि यह बात इस्लाम के एकेश्वरवाद के सिद्धान्त के विरुद्ध है। मनुष्य की आत्मा ईश्वर की सृष्टि है। अत उसका अपने सृष्टा के साथ मिलकर एकमेक होना किसी प्रकार भी सम्भव नही तथा आत्मा का किसी दशा मे ईश्वर में विलय नही होता। मुक्ति या निवार्ण की दशा मे भी उसका अलग अस्तित्व बना रहता है। यद्यपि वह ईश्वर के इतना निकट होती है कि यह जान लेना कि उसका परमात्मा से अलग अस्तित्व है बहुत कठिन है।

कुछ सूफी-सन्तो के अनुसार जीव का नाश तो नही होता फिर भी वह परमात्मा के साथ एकमेक हो जाता है। सर्व-व्यापक सत्ता-रूपी अतल महासागर मे एक बूंद की तरह मे जीव परमात्मा मे विलीन हो जाता है। तब उसकी स्वतन्त्र सत्ता नही रह जाती।

कुछ अन्य सूफी-सन्तो के मतानुसार जीव ब्रह्म का ही एक अंग है। जीव को ब्रह्म का बोध हो जाने पर ब्रह्म की शक्ति और सामर्थ्य उसको प्राप्त हो जाती है। सूफी-सन्त राबिया नाम की एक महिला-महात्मा ने ब्रह्म के शाश्वत स्वरूप को अनुभव किया और यह ज्ञान प्राप्त किया कि ब्रह्म और जीव में कोई अन्तर नहीं है अपितु दोनो एक है। अपने

अस्तित्व को ईश्वर की सत्ता से अलग रखने का कारण बताते हुए वह कहती है—हे ईश्वर, तुझसे बात करने के लिये मैंने अपने जीव को सुरक्षित रखा है।

कुछ सूफी-सन्तो का मत है कि जब "मै" "तू" का कहना छोड दिया जाता है तभी ब्रह्म और जीव के बीच प्रतीत होते हुए द्वैत के भेद का रहस्य भी खुल जाता है और अद्वैतता का बोध हो जाता है—

"तू मै" "मैं तू" एक हैं और न दूजा कोय।
"मैं तू" कहना जब छूटे वही-वही रब होय॥

सूफी-सन्त इब्नुल अरबी का कथन है जिस नाम का साक्षात्कार यह जीव करता है उसी के जैसा रूप ग्रहण कर लेता है। जिस प्रकार मोम जिस साँचे मे ढाला जाता है उसी के अनुरूप आकृती मे परिवर्तित हो जाता है।

"साधना के अनुभव" पुस्तक मे गुरु महाराज फर्माते है—जैसा ख्याल वैसा हाल" के अनुसार आत्मदृष्टि मिल जाने पर आत्मा प्रत्यक्ष अनुभव होने लगता है। उस समय "मैं" और "तू" का भ्रम हट जाता है और जीव अल्पज्ञता त्याग "अहम् ब्रह्मास्मि" और "तत्वमसि" पुकारने लगता है। दोनो उपास्य-उपासक मिल के एक हो जाते है, दुई जाती रहती है, वह कहने लगता है—"जो वह है, वही मैं हूँ।" यही वेदान्त है, यही अद्वैतावस्था है—अर्थात उपासना दो से आरम्भ हुई थी, भ्रम से भक्त और भगवान दो दिखाई दिये थे, यहाँ पहुँच कर न "मैं" रहा न "तू" रहा, केवल आत्मा है और कुछ नही।

इसी प्रकार जब महात्मा मन्सूर इस मंजिल पर पहुँचे तो उन्हें इस रहस्य का साक्षात्कार हुआ और उन्होने "अनल-हक" [अहम् ब्रह्मास्मि—मैं ही ब्रह्म हूँ] कहा। और जब आपने इस रहस्यपूर्ण सिद्धान्त की उद्घोषणा की तो आपका अभिप्राय यह था कि जब व्यक्ति अपने सांसारिक अर्थात व्यक्तिगत अहं से परे हो जाता है तब वह अपने वास्तविक [हकीकी] अहं मे वास करने लगता है। आपके मतानुसार यह वास्तविक अहं ही परमात्मा है। उसमे न "मैं" का स्थान है, न "हम" का और न "तू" का ही। "मैं" "हम" "तू" और "वह" सब वही एक ही परम तत्व अर्थात परमात्मा है। जब सूफी-सन्त को यह बोध हो जाता है कि उसका व्यक्तिगत अहं का कोई अस्तित्व नही है तो उसी समय उसे यह बोध भी हो जाता है कि तत्वत: उसका परमात्मा के साथ एकाकार है। इसलिए "अनल-हक" कहने वाला मन्सूर न होकर स्वयं परमात्मा ही था, जो अहं की चेतना से परे हो जाने वाले मन्सूर के मुख से इन शब्दो का उच्चारण करता था।

अनल-हक [अहम् ब्रह्मास्मि]

महात्मा मन्सूर हर समय ईश्वर भजन करते रहते थे। आप भी अन्य महात्माओ की तरह धर्मशास्त्रो को मानते थे और एक अध्यात्म-ज्ञानी महापुरुष थे। आपके मुख से चूंकि "अनल-हक" [अहम्-ब्रह्मास्मि—मैं ईश्वर हूँ] इस्लामिक शरीअत विरुद्ध वाक्य निकल गया था, अत: आपको काफिर कहा गया। वास्तव मे "अहम् ब्रह्मास्मि" एक जज्बे [भावा-तिरेक] की अवस्था है जो साधना पथ में एक मुकाम पर पहुँच कर ऊँचे दर्जे के महात्माओ पर आया करती है। इस

अवस्था को प्राप्त करने पर साधक की जीव संज्ञा समाप्त हो जाती है और वह यह देखता है कि उसमे और उसके उपास्य ईश्वर मे कुछ अन्तर नही है तथा वह और सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान परमेश्वर दोनो मिलके एक हो गए है। फिर उनकी वाणी से परमेश्वर ही बोलता है, वही उसके शरीर से कार्य करता है। दुई का पर्दा उठ कर भेदभाव मिट जाता है, "मैं-तू" का नाश हो जाता है। वह अपने को परमेश्वर समझने लगता है और उसे ऐसा प्रतीत होता है कि यह सारा पसारा मेरा अपना ही है, यह सब खेल मैंने ही खेला है, मै ही व्यापक होकर इसमे लीला कर रहा हूँ, मैं चाहूँ तो अभी पल मात्र मे इसका नाश कर सकता हूँ। सम्पूर्ण कलाये मेरे अन्दर है, सम्पूर्ण शक्तियाँ मेरे अधिकार मे है, इत्यादि। जीव पर जब यह भाव-मग्न दशा आती है तो वेदान्त इसको "अहम्-ब्रह्मास्मि पद" कहता है और सूफियो की भाषा मे इसे "अनल-हक" कहते है। श्री कृष्ण महाराज ने अर्जुन को गीता का उपदेश इसी अवस्था मे अपने को स्थित करके दिया था और उस समय वह बार-बार अपने आपको ईश्वर कह रहे थे।

इसलिए लोगो का महात्मा मन्सूर पर अधर्मी होने का दोषारोपण सही नही था। वास्तव मे वह लोग ईश्वर के अति गूढ रहस्यो से अपरिचित होने के कारण आपके वचनो का सही अर्थ समझ नही पाये। इसलिए कि बँधी-बँधाई लीक पर चलने वाले साधको और महात्माओ के लिए प्राय. इन सूफियो को समझना असम्भव ही रहा है तथा निश्चित शब्दावली मे इनकी परिभाषा नही हो सकती। इसलिए इन सूफी साधको को रहस्यवादी कह कर पुकारा गया है। महापुरुषो के अनुसार सूफीमत और सूफियो के बारे मे जानने वाले वही अभिव्यक्त

करने की कोशिश करते हैं जो उन्होने स्वयं अनुभव किया है और कल्पना का कोई भी ऐसा सूत्र [फारमूला] नही है जिसमे प्रत्येक प्रकार की व्यक्तिगत और हृदय की निकटतम अनुभूतियो का समावेश हो सके। प्रसिद्ध सूफी-सन्त महात्मा जलालुद्दीन रूमी ने अपनी "मसनवी" मे एक हाथी के बारे मे एक कहानी कही है, जिसे कुछ हिन्दू एक अन्धेरे कमरे मे प्रदर्शित कर रहे थे। उसे देखने के लिये बहुत से लोग आए। किन्तु जगह के अत्यधिक अन्धकारमय होने के कारण वे उसे देख नही सकते थे। इसलिए उन्होने उसे अपने हाथो से टटोल कर यह देखना चाहा कि वह किस प्रकार का था। एक ने उसकी सूंड टटोली और कहा कि वह जानवर पानी के नल के समान था। दूसरे ने उसके कान टटोले और कहा कि वह अवश्य ही एक बड़ा पंखा था। तीसरे ने उसके पैर टटोले और कहा कि वह अवश्य ही एक खम्भा था। और चौथे ने उसकी पीठ टटोली और घोषणा की कि वह जानवर एक बड़े सिंहासन के समान था। महात्मा रूमी कहते हैं कि सूफियों को समझने और सूफीमत की परिभाषा करने वालो की भी यही दशा होती है।

ईश-कृपा

ईश्वर के रहस्य बौद्धिक तर्क-वितर्क से समझ में नही आते बल्कि ईश्वर जिसको चाहे अपनी कृपा से महान पद प्रदान करदे और वही मनुष्य उसके रहस्यों को समझने लगे। इसके लिए साधक को किसी भी प्रकार की गई कठोर से कठोर तपस्या और भजन-पूजन उसके काम नही आता—केवल ईश्वर की कृपा-दृष्टि की बात है। वह छोटी-सी बात पर प्रसन्न

होकर कृपा करदे और बडी से बडी पूजा से भी प्रसन्न न हो। एक महान् सूफी-सन्त से लोगो ने पूछा कि आप को यह आध्यात्मिक श्रेष्ठ पद कैसे प्राप्त हुआ। उन्होने बताया कि एक दिन मैं बाजार से गुजर रहा था कि मैंने देखा कि सडक पर पवित्र कुरान का एक फटा हुआ पृष्ठ पडा है। मैने बडे आदर के साथ उसे उठाया और अपने घर मे जहाँ पूजा का अन्य सामान था वहाँ उस पृष्ठ को सम्मान के साथ रख दिया। उसी रात को मैने स्वप्न मे यह आवाज सुनी—तूने हमारी पुस्तक का आदर-सम्मान किया है, अत: हम भी तेरे नाम को ससार मे आदर-सम्मान प्रदान करते है। वह महात्मा बताते है कि जब मैं प्रातःकाल जागा तो मेरी दशा कुछ और ही हो गई थी। मैने देखा कि मेरे हृदय पर अध्यात्म ज्ञान अंकित हो गया है और मेरे दिल पर ईश्वरीय रहस्य प्रकट हो गए हैं। यह बात कहते-कहते उनकी आँखो से अश्रुधारा बह चली और वह भाव-विभोर होकर सजदा-ए-शुक्र मे झुके और एक ओर को चले गये।

फिर वही

अत: सूफी-सन्त महात्मा अत्तार कहते है कि जो लोग महात्मा मन्सूर को महापुरुष मानने को तैयार नही है उनके वचन सूफी-सन्तो की शान के अनुसार नही बल्कि वह आप से द्वेष करने के कारण आप पर झूठा दोषारोपण करते हैं। अत ऐसे लोगो के वचनो को स्वीकार करना बुद्धिमानी नही है। महात्मा अत्तार आगे कहते है कि यह बात कितने आश्चर्य की है कि यदि पेड-पौधो मे से "मैं ब्रह्म हूँ" की आवाज आ जाय तो उचित ठहराते है और यदि यही वाक्य आपके मुख से

निकल गया तो शास्त्र विरुद्ध बताने लगे। यह बात सही नहीं है क्योंकि सूफी-सन्त महात्मा अब्दुल्ला खफीफ के मतानुसार महात्मा मन्सूर ब्रह्मज्ञानी थे। और सूफी-सन्त महात्मा शिवली मन्सूर में केवल इतना-सा अन्तर है कि उनको तो लोगों ने यह विचार करके कि यह ज्ञानी होकर भी धर्म विरुद्ध बात कहता है मृत्यु दण्ड दे दिया और मुझको दीवाना समझ कर छोड़ दिया। महात्मा अत्तार का मत है कि यदि महात्मा मन्सूर वास्तव में अधर्मी, नास्तिक और नीच मनुष्य होते तो यह दोनों उच्च कोटि के महात्मा उनकी शान मे इतने सुन्दर शब्द कैसे प्रयोग करते। अतः इन दोनों महापुरुषों के वचनानुसार महात्मा मन्सूर निःसन्देह एक महान सूफी-सन्त थे।

भजन-पूजा

आप अट्ठारह वर्ष की आयु में तस्तर नामक शहर को चले गये और वहीं दो वर्ष तक सूफी-सन्त महात्मा अब्दुल्ला तस्तरी के सत्संग मे अध्यात्म-लाभ प्राप्त करते रहे। तत्पश्चात् बसरा चले गये। फिर वहां से दोहर का नामक शहर पहुँचे जहां सूफी-सन्त महात्मा अमरु-बिन-उस्मान के सत्संग में अध्यात्म की मंजिलें तै करते रहे। वहीं आपने महात्मा याकूब अकता की पुत्री से विवाह कर लिया। परन्तु आपकी किसी बात पर महात्मा उस्मान नाराज हो गए तो आप वहां से सूफी-सन्त महात्मा जुनैद की सेवा में बगदाद तशरीफ ले गये। महात्मा जुनैद ने आपको "एकान्त" और "मौन" की शिक्षा देकर इन विषयों में पारंगत कर दिया। इन गूढ़ विषयों को महात्मा हिजवीरी ने अपनी पुस्तक "कश्फुल-महजूब" में बड़े अच्छे ढंग से समझा कर लिखा है—

एकान्त

सद्व्यवहार और शिष्टाचार सीखने के लिए ईश्वर-भक्त महात्माओ का सत्संग करना अति आवश्यक है। एकान्त-वास से मनुष्य न तो सद्व्यवहार और शिष्टाचार सीख सकता है और न ही इन गुणो का उपयोग कर सकता है क्योकि अकेले में किसके साथ व्यवहार करेगा। बल्कि रहस्यपूर्ण सत्य यह है कि एकान्त से बढ़ कर कोई विपदा और मुसीबत नही। हजरत मुहम्मद साहब ने फर्माया है कि जब आदमी अकेला होता है तो उसके साथ शैतान होता है तथा दो से शैतान दूर भागता है। सूफी-सन्त महात्मा हिजवीरी कहते है कि सूफी-सन्त महात्मा जुनैद बगदादी के एक शिष्य को यह भ्रम हो गया कि मैंने सर्वोच्च आध्यात्मिक पद प्राप्त कर लिया है। इसलिए अब मेरे लिये सत्सग करने के बजाय एकान्तवास करना ही श्रेष्ठ है। अत: उसने गुरु के सत्सग मे जाना त्याग कर एकान्तवास ग्रहण कर लिया। जब रात का समय आता तो कुछ लोग उसके पास ऊँट लाते और उससे कहते कि आप को स्वर्ग मे चलना चाहिए। अत: वह ऊँट पर सवार हो जाता और बहुत देर तक यात्रा करने के बाद एक बहुत ही चित्ता-कर्षक और मनोरम स्थान पर पहुँच जाता, जहाँ सुन्दर-सुन्दर मनुष्य, बहुत ही स्वादिष्ट और अच्छे खाने, फल, बाग और नहरे होती। प्रात.काल तक वह वहाँ रहता, फिर सो जाता और जब जागता तो अपने आपको अपनी कोठरी के दरवाजे पर पड़ा पाता। यह क्रम उसके साथ जारी रहा, यहाँ तक कि उसके दिल मे घमण्ड और अहंकार ने जड पकड़ली और उसने अध्यात्म के ऊँचे पद प्राप्त कर लेने के बड़े-बड़े दावे करने शुरू कर दिये कि मैं यह हूँ और वह हूँ और मुझ पर ऐसी अवस्था

आती है। जब इस बात की खबर उसके गुरु महात्मा जुनैद को हुई तो आप उसके पास तशरीफ ले गए। आपने देखा कि गर्व और अहंकार से उसकी दशा कुछ से कुछ हो रही है। गुरु को शिष्य की दशा देख कर दया आ गई। आपने उसका हाल [आध्यात्मिक अवस्था] के बारे मे पूछताछ की तो उसने बड़े गर्व से सारा हाल वर्णन किया। महात्मा जुनैद ने फरमाया कि अगर आज की रात वहाँ जाओ तो तीन बार "लाहौल बिला कूवत इल्ला-बिल्ला" पढ कर फूंक मारना। शैतान, पिशाच, या दुष्ट अनात्माओ को भगाने के लिए यह मन्त्र पढा जाता है। जब रात आई तो फिर वही घटना घटी। उस मनुष्य को अपनी आध्यात्मिक ऊँची पदवी प्राप्त कर लेने और इन बातो के सत्य होने का पक्का विश्वास था और महात्मा जुनैद के ब्रह्मज्ञानी होने तथा उनकी ईश्वर तक पहुँच होने पर शक हो चुका था। परन्तु फिर भी केवल तजुर्बे के ख्याल से उसने तीन बार लाहौल पढ कर फूंक मार दी। वह शिष्य वर्णन करता है कि जैसे ही मैंने फूंक मारी वह सब लोग जो उस स्वर्ग मे थे चीख मारते हुए भाग गए और मैंने अपने आपको गन्दगी के ढेर पर बैठा हुआ पाया तथा मेरे चारो तरफ मुर्दों की कुछ हड्डियां बिखरी पड़ी थी। अतः मैं अपनी करनी पर बहुत शर्मिन्दा हुआ और पश्चाताप पूर्वक प्रतिज्ञा की कि अब एकान्तवास ग्रहण कभी नही करूँगा। अपने गुरु महात्मा जुनैद से विनम्रता पूर्वक क्षमा याचना करके उनके सत्संग मे दुबारा जाने लगा।

मौन

बोलने की शक्ति ईश्वर की प्रदान की हुई बहुत बड़ी नेमत

है और इस कृपा के लिये उस परम कृपालु ईश्वर का धन्यवाद इसी तरह किया जा सकता है कि इस शक्ति को ईश्वर के कार्य मे प्रयोग करे। पवित्र कुरान मे ईश्वर का वचन है कि उस मनुष्य से बढ कर अच्छी बात और किसकी होगी जो दूसरे मनुष्यो को ईश्वर की ओर बुलाये और भले कर्म करे। आगे फिर कहा कि अच्छी और मीठी बात कह देना उस अनुग्रह से अच्छा है जिसके बाद कष्ट दिया जाय।

यद्यपि ऊपर लिखी बाते अपनी जगह सही है परन्तु इस जाहिरी शक्ति मे बडी-बडी मुसीबते भी छिपी हुई है। बोलना मदिरा की तरह है। जब मनुष्य को इसमे आनन्द आने लगता है तो इससे छुटकारा पाना बहुत कठिन हो जाता है। हजरत मुहम्मद साहब ने फरमाया—मुझे अपने अनुयायियों के बारे मे सबसे बडा भय उनकी जिव्हा के बारे मे है। फिर बोले—जो मौन रहा उसने मुक्ति प्राप्त की। इस सन्दर्भ मे महात्मा जुनैद फरमाते हैं—जिसने ईश्वर को पहचान लिया उसकी जुबान बन्द हो गई।

महात्मा हिजवीरी का मत है कि मौन और बोलना दोनो के अपने-अपने उचित अवसर होते है और इन अवसरो पर दोनो अपनी-अपनी जगह ठीक होते है क्योकि बोलने के अवसर पर बोलना और मौन के अवसर पर मौन धारण करना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है। परन्तु कब बोलना और कब मौन धारण करना चाहिए यह समझने की बात है। महात्मा हिजवीरी कहते हैं कि बोलना भी दो प्रकार का होता है और मौन भी दो प्रकार का होता है। एक तो सत्य बोलना और

दूसरा मिथ्या बोलना। इसी तरह एक मौन तो चिन्तन-मनन के लिए या इस कारण से होता है कि बोलने का उद्देश्य प्राप्त हो गया है। और एक मौन असावधानी बेखबरी [गफ़लत] और अज्ञान के कारण से होता है। हर मनुष्य को बोलते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यदि उसका वचन सत्य है तो उसका बोलना उसके मौन रहने से श्रेष्ठ है। और यदि उसके वचन मिथ्या हैं तो उसका चुप रह कर उसके बोलने से श्रेष्ठ है। इस सम्बन्ध में हजरत मुहम्मद साहब ने फरमाया—जो मनुष्य ईश्वर और अपने अन्तिम दिन पर विश्वास करता है। उसे चाहिए कि बोले तो भलाई की बात कहे नही तो फिर चुप रहे। इसी प्रकार यदि किसी का मौन चिन्तन-मनन के कारण है या इस वजह से है कि उसके बोलने का उद्देश्य पूरा हो गया है तो उसका चुप रहना बोलने से श्रेष्ठ है। परन्तु यदि यह मौन असावधानी, बेखबरी [गफ़लत] या अज्ञान के कारण है तो उसे इन दोनो दुर्गुणों को दूर करने की चिन्ता करनी चाहिए। परन्तु बहुत-से मूर्ख और अज्ञानी मनुष्य जो एक मीनार और कुंए में भी अन्तर नही कर सकते, अपने मौन और चुप रहने को अपनी आध्यात्मिक ऊँची अवस्था प्राप्त होने और अपने महात्मा हो जाने के तौर पर ग्रहण कर लेते हैं और कहते कि मौन बोलने से श्रेष्ठ है। अत. बोलने का नियम यह है कि बिना आज्ञा और आवश्यकता से अधिक न बोले। तथा जो भी और जितना भी बोले आज्ञा से और सत्य बोले। इस नियम का उल्लंघन न करे। तथा मौन का नियम यह है कि अज्ञानी न हो और अपनी अज्ञानता पर कभी खुश न हो और न ही सन्तोष करे और असावधान, बेसुध [गाफिल] भी न हो। अतः बोलते समय बुजुर्गों की बात न तो [illegible]

और न ही उनके बीच में बोले। उनके वचनों को जैसा का तैसा वर्णन करे। स्वयं जो कुछ कहना हो उसे अलग से कहे। अपने विचारो को उनके वचनो के साथ गडमड न करे कि सुनने वाले उसके विचारों को भी बुजुर्गों के वचन समझे। वाक्य की रचना मुश्किल, भाषा कठिन और अपरिचित और कहने का ढंग गुत्थीदार न हो बल्कि जो कुछ कहना हो सरल, साफ, सीधा-सादा और सर्व-साधारण की समझ मे आने वाली भाषा मे कह दे। बात सक्षेप में कहे। फिर इस बात को भी ध्यान में रखे कि जिस जिह्वा से वह ईश्वर का नाम लेता है उससे कोई मिथ्या या चुगली या प्राणियों का दिल दुखा देने वाली बात न निकले। महात्माओं, सूफी-सन्तो को खाली उनके नाम से न पुकारे बल्कि आदर के साथ उनका नाम ले। बिना जरूरत बात न करे। जहाँ तक हो सके जब तक उससे कोई बात पूछी न जाय न कहे क्योकि बिना पूछी गई बात कहना निःसन्देह व्यर्थ होती है। साधको के मौन रहने की शर्तो मे से एक शर्त यह भी है कि मिथ्या बात पर चुप न रहे। हज़रत मुहम्मद साहब ने मिथ्या बात पर मौन धारण करने वालो को गूंगे शैतान की उपमा दी है।

फिर वही

बगदाद में महात्मा जुनैद की सेवा में कुछ समय रहने के बाद आप हजाज तशरीफ ले गए और एक साल तक रहने के बाद सूफियो के समूह के साथ फिर बगदाद वापस आ गए। वहाँ महात्मा जुनैद से न मालूम किस तरह का प्रश्न किया कि उत्तर मे उन्होने आपको श्राप दे दिया कि तू बहुत शीघ्र लकड़ी का सिर लाल करेगा अर्थात् सूली चढ़ा दिया जायेगा।

महात्मा मन्सूर ने यह श्राप शिरोधार्य किया और बोले—जब मुझे सूली दी जायगी तो आप ही सांसारिक विद्वानो के वस्त्र धारण करके मृत्यु दण्ड देगे। अतः कहते हैं कि जिस समय मुल्ला-मौलवियो ने एक मत होकर महात्मा मन्सूर को मृत्यु दण्ड दिये जाने का निर्देश दिया तो खलीफा ने कहा कि सन्त जुनैद जब तक धर्म-निर्देश पर हस्ताक्षर न करेगे वह मन्सूर को मृत्यु दण्ड नही दे सकता। और जब यह खबर सन्त जुनैद को पहुँची तो आपने मदरसे मे जाकर पहले आध्यात्मिक साधना मे रत रहने वाले सूफियो द्वारा पहने जाने वाली गुदड़ी उतार कर सामाजिक विद्वानो के वस्त्र धारण किए। उसके बाद यह धर्म-निर्देश दिया कि शास्त्रीय नियम-दृष्टि से मन्सूर को सूली पर चढाने का निर्देश देते है।

विरोध

आप अपने स्वभाव के अनुसार उन महात्माओं को पसन्द नही करते थे जिन्होंने संसार के सामने अपने आप को प्रकट कर दिया। इसकी वजह से लोगो के दिलो मे आपके खिलाफ ईर्ष्या और द्वेष का भाव पैदा हो गया। दूसरी सबसे बड़ी वजह यह हुई कि महात्मा अमरू-बिन-उस्मान ने खुरासान वालियों को आपकी बुराइयाँ लिख कर आपके विरुद्ध और भी शत्रुता का भाव भड़का दिया। अतः आप इन जाहिरी महात्माओं के इस तरह के व्यवहार से और भी दुखी हुए। आपने सूफियों के वस्त्र त्याग कर सांसारिक मनुष्यों के वस्त्र धारण कर लिए और दुनियादारों जैसा ही व्यवहार और रहन-सहन ग्रहण कर लिया। और पाँच वर्ष तक हमा-ओस्त के दर्शन में तल्लीन रहे। हमा-ओस्त से अर्थ है—हर एक चीज

ईश्वर है क्योकि ईश्वर ही विद्यमान है और बाकी सब लुप्त है। उपनिषद् में आया है—

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥

अर्थात् यह जो कुछ चराचर जगत है वह सारा ईश्वर से व्याप्त है, उसमे ईश्वर बसा हुआ है। मनुष्य को उचित है कि सब ठौर उसी को देखे और न दूसरे के धन इत्यादि की इच्छा करे और न इसमे लिप्त हो।

हल्लाज का खिताब

आपने कई देशो की यात्राएँ की और अन्त मे फारस पहुँचे। वहाँ आपने कई ऊँचे-ऊँचे घाट की पुस्तकें लिखी। आपने अपने प्रवचनो और उपदेशो मे ऐसे ऐसे रहस्यो का भेद खोला कि लोगो ने आपको "हल्लाज-अल-असरार" का खिताब प्रदान किया। हल्लाज के अर्थ है धुनिया और असरार के अर्थ है रहस्य। महात्मा शिबली कहते है कि आपके नाम के साथ "अल-हल्लाज" शब्द का जो प्रयोग करते हैं वह केवल रूपक मात्र है। आपको इसलिए "अल-हल्लाज" नही कहते कि वास्तव में आप धुनिया थे बल्कि इसलिए कहते हैं कि आप मनुष्य के गुप्त से गुप्त मन के भावो को जान जाते थे और जिस प्रकार धुनिया रुई से बिनौलो को धुन कर निकाल देता है उसी प्रकार आप हृदय से उनके भावो का सार-तत्त्व बाहर निकाल सकते थे। एक दूसरी कथा मे आता है कि आप को हल्लाज इसलिए कहा जाता है कि एक बार आप रुई के गोदाम पर से गुजरे और अजीब अन्दाज मे कुछ इशारा किया जिस की वजह से

हुई स्वयं ही धुनक गई। परन्तु हल्लाज कहे जाने का पहला मत ही सही है।

यात्रा और कष्ट

फारस मे कुछ समय रहने के बाद आप बसरा चले गए और वहाँ पहुँच कर दुबारा सूफियों के वस्त्र पहनने लगे। फिर आपने मक्का की यात्रा की। मार्ग में बहुत से सूफी महात्माओ से मुलाकाते करते रहे। जब आप मक्का पहुँचे तो वहाँ महात्मा याकूब नहरजोरी ने आपको जादूगर कहना शुरू कर दिया। फिर वहाँ से वापसी के बाद एक वर्ष तक बसरा मे वास किया और हमवाज होते हुए भारतवर्ष पहुँचे। फिर वहाँ से खुरासान और मावराअल-नहर होते हुए चीन पहुँच गए। वहाँ लोगो को बहुत दिन तक प्रवचन और उपदेश देते रहे। जहाँ जहाँ भी आप गए लोगो ने आपके गुणो की बड़ी प्रशंसा की। घूम फिर कर आप मक्का पहुँच गए और दो वर्ष वास करने के बाद जब वापसी हुई तो आप अध्यात्म की इतनी ऊँची मंजिलो पर पहुँच चुके थे कि आपके वचन लोगो की समझ से बाहर हो गए। इसके बाद जिन देशो मे भी तशरीफ ले जाते वहाँ के लोग आपको निकाल देते। जिसकी वजह से आपने ऐसे-ऐसे कष्ट सहन किए किसी दूसरे सूफी-महात्मा को ऐसी तकलीफो का सामना करना नही पड़ा।

तपस्या

आपने बड़ी तपस्या की थी। हर रात आप चार सौ रकातें नमाज़ अदा करते थे। रकात के अर्थ हैं नमाज़ में झुकना। इस तपस्या को आपने अपना पक्का नियम बना

लिया था। जब लोगो ने आप से पूछा कि इतने ऊँचे आध्यात्मिक पद प्राप्त करने के वाद भी आप इतनी कठोर तपस्या क्यो करते हैं तो आपने उत्तर दिया—कष्ट और आनन्द तो साधारण लोगो की स्थिति का ज्ञान कराते है। आगे बोले कि ईश्वर के साथ मित्रता (भक्ति) का आशय ही यह है कि कष्ट मे धैर्य रखे। तथा जो उसकी राह मे मर-मिटते है उनके लिए सुख और दुख का आभास शेष नही रहता। आपने उन लोगो को चेतावनी दी कि शैथिल्य को परिपक्वता (पूर्ण-पद प्राप्ति) सांसारिक मोह को परमात्मा की खोज न समझ ले।

आपने पचास वर्ष की आयु मे यह कहा कि अब तक मेरा कोई मजहब नही लेकिन तमाम मजहबो (पन्थो) मे जो सबसे कठिन चीजे है उन्हे मैंने ग्रहण कर लिया है और पचास वर्ष मे एक हजार वर्षों की नमाजे अदा कर चुका हूँ। आप हर नमाज से पहले नहाने को आवश्यक मानते थे।

भजन-पूजन और तपस्या के काल मे आप लगातार एक ही गुदडी मे जीवन-यापन करते रहे। आप भजन-पूजन मे इतने लौलीन रहते थे कि तन-बदन की कोई खबर नही रहती थी, यहाँ तक कि आपकी गुदडी मे एक बिच्छू ने रहने की जगह बनाली थी। एक दिन किसी आदमी ने आपके पास उस बिच्छू को देखकर मारने का इरादा किया तो आपने कहा कि इसको मत मारना क्योकि बारह साल से यह मेरे साथ है।

एक बार हज की यात्रा मे आपके साथ चार हज़ार आदमी मक्का-मौज़्ज़मा पहुँचे वहाँ पहुँच कर आप नंगे सिर और नगे बदन खड़े हो गए और पूरे एक साल तक इसी हालत मे खड़े रहे। यहाँ तक कि तेज धूप के कारण आपकी हड्डियो

की मज्जा तक पिघल गई और शरीर की खाल फट गई। उस समय कोई आदमी प्रतिदिन एक टिकिया और एक प्याले मे पानी आपके पास पहुँचा देता था। आप टिकिया के किनारे खाकर बाकी टिकिया को प्याले पर रख दिया करते थे।

एक बार हज के समय अरफ़ात के क्षेत्र मे आपने कहा—ऐ ईश्वर, तू भटके हुए लोगो को राह दिखाने वाला है और यदि मैं वास्तव मे काफिर (नास्तिक-ईश्वर का अस्तित्व न मानने वाला) हूँ तो मेरे कुफ्र (नास्तिकता) में बढ़ोत्तरी कर दे। फिर जब सब लोग चले गए तो आपने प्रार्थना की कि हे ईश्वर, मै तुझ को "एक" मान कर तेरे सिवा किसी का भजन-पूजन नही करता और तेरे प्रदान किए हुए इनामो पर अपनी विनम्रता की वजह से शुक्र भी अदा नही कर सकता। अतः तू मेरे बजाय अपना शुक्रिया स्वय ही अदा कर ले इसलिए कि बन्दो से तेरा शुक्रिया किसी तरह भी अदा नही हो सकता।

आपने कहा कि एक बार हज़रत मूसा ने शैतान से पूछा कि तूने हज़रत आदम (आदि पुरुष) को सिजदा क्यो नही किया। उसने जवाब दिया कि मैं तो परमात्मा का दर्शन करने वालो और उसका सिजदा करने वालो मे से था, इसलिए मुझे यह गवारा न हो सका कि उसके सिवा किसी और को सिजदा करूँ।

प्रार्थना

आपकी निम्नलिखित प्रार्थना से मालूम होता है कि आप पूर्णरूप से ईश्वर-मिलन प्राप्त कर चुके थे और आप का प्रेम एकतरफा नही था बल्कि ईश्वर भी आपको बहुत प्रेम करता था। इस प्रेम-मिलन के आनन्द के सामने आपका अन्य

सब प्रकार का आनन्द व्यर्थ लगता था। और ईश्वर की जुदाई आपको नरक की भीषणतम यातनाओ से भी अधिक भयंकर और जान लेवा प्रतीत होती थी। सच्चे प्रेमी को प्रेमिका तो अच्छी लगती ही है, उसे प्रेमिका की हर वस्तु भी उतनी ही प्यारी लगती है और वह तो सद्भावना प्रेमिका के प्रति रखता है वही सद्भावना प्रेमिका की हर वस्तु के प्रति भी रखता है।

महबूब से अपने जिस दिल को बेलौस अक़दत होती है।
महबूब के महबूबो से भी उस दिल की मुहब्बत होती है॥

—गाफिल बरनी

चूंकि सूफी सन्त इस ससार को ईश्वर की सृष्टि ही मानते है अत उन्हे ईश्वर की तरह इस सृष्टि की प्रत्येक वस्तु से भी उतना ही प्यार होता है। और वह इनको मिले किसी भी प्रकार के कष्ट से तडप उठते है। इसलिए महात्मा मन्सूर अन्य प्राणियो की गलतियो के लिए उन्हे क्षमा कर देने की प्रार्थना करते है और उनकी गलतियो के फलस्वरूप मिलने वाले कष्ट को स्वय भोगने को तैयार है यही उनके पूर्ण-भक्त होने का सबूत है और पूर्ण-भक्त पूर्णरूप से ईश्वर पर ही आश्रित रहता है, यही बात इस प्रार्थना के अन्तिम वाक्य से स्पष्ट है।

प्रार्थना —हे खुदा, तुम्हारे प्रेम की उन्मत्त करने वाली श्वास और तुम्हारी उपस्थिति की सुगन्ध मेरे भीतर क्या कुछ कर जाती है कि मैं जड पर्वतो से घृणा करने लगता हूँ और लोगो तथा आसमानो को हेय समझने लगता हूँ। मेरी भाव-विष्टावस्था के एक क्षण अथवा मेरे अहवाल (साधक की आध्या-त्मिक अवस्था) के नगण्य क्षणो के पलभर रहने वाले प्रकाश के

बदले अगर तुम अपना स्वर्ग मेरे हाथों बेच डालना चाहो तो मैं उसे नहीं खरीदूंगा। और सभी प्रकार की यन्त्रणाओं के साथ अगर तुम नरकाग्नि को मेरे सम्मुख रख दो तो मैं उस कष्ट को नहीं बराबर समझूंगा उस कष्ट के सामने जिसका अनुभव मुझे तब होता है जब तुम अपने को मुझसे ओझल कर लेते हो। दूसरों को माफ कर दो, मुझको नहीं, दूसरों पर दया करो, मेरे ऊपर न करो। मैं अपने लिए तुम्हारे सामने वकालत नहीं करता और न अपना हक समझ कर मैं तुमसे याचना करता हूं। मैं तो तुम्हारे हाथों में हूं, जैसी तुम्हारी मर्जी वैसा ही मेरे साथ करो।

चमत्कार

प्रायः दैवी शक्तियों द्वारा चमत्कार दिखाना सूफी-सन्त-मार्ग में ठीक नहीं माना जाता। परन्तु बुरा तब माना जाता है जब उन शक्तियों का दुरुपयोग किया जाय या वह महात्मा अपने अहंकारवश दूसरों को प्रभावित करने या दूसरों का नुकसान करने के लिए प्रयोग करे। और जब इन दैवी शक्तियों का प्रयोग जन-कल्याण की भावना से या अन्य किसी अच्छे कार्य के लिए किया जाता है तो बुरा नहीं माना जाता। जैसे—जब भरतजी चित्रकूट में श्रीरामचन्द्रजी से मिलने जा रहे थे तो मार्ग में महर्षि भारद्वाज के आश्रम में ठहरे। उस समय महर्षि ने इन दैवी शक्तियों (ऋद्धि और अणिमादि सिद्धियों) को इनकी तथा इनके साथ आए हजारों लोगों की सेवा का आदेश दिया था और जंगल में मंगल कर दिया था। ऋद्धि-सिद्धियों ने क्या-क्या किया इसका वर्णन बड़े विस्तार से श्री तुलसीदास जी ने किया है। संक्षेप में—"श्री मुनि के

सामान स्वर्ग मे भी स्वप्न मे भी नही है ऐसे सब सामान ऋद्धि-सिद्धियो ने पलभर मे सजा दिये। अन्त मे कहते है—"सम्पत्ति (भोग-विलास की सामिग्री) चकवी है और भरतजी, चकवा, और मुनि की आज्ञा खेल है, जिसने उस रात को आश्रमरूपी पिंजड़े में दोनो को बन्द कर रखा और ऐसे ही सबेरा हो गया।" यहाँ श्री तुलसीदास जी ने ऋद्धि-सिद्धि को मुनि की आज्ञा देने को "खेल" कहा है। वास्तव मे सच्चे महात्मा चमत्कार को "बालको का खेल" मे अधिक महत्व नही देते। उनके नजदीक अध्यात्म मे इस "खेल" का कोई स्थान नही है।

परन्तु रावण हिरण्यकश्पु आदि विभिन्न भक्तो ने जब इन दैवी शक्तियो का दुरुपयोग किया तो सभी ने न केवल उनकी निन्दा की बल्कि उनको राक्षस भी कहा।

महात्मा मन्सूर को ऋद्धि-सिद्धि, कामधेनु, कल्पतरु आदि विभिन्न दैवी-शक्तियो पर पूर्ण अधिकार प्राप्त था। परन्तु दुरुपयोग करना तो दूर आपने प्राणघाती कष्टो तक मे भी इन दैवी शक्तियो का आपने निजि स्वार्थ के लिए उपयोग नही किया। हाँ, दूसरो के कष्ट निवारण के लिए दयावश अवश्य इनका प्रयोग किया था, और यही बात आपकी महानता की द्योतक है।

सूफी-सन्त महात्मा रशीद खुर्द समरकन्दी कहा करते थे कि एक बार बहुत से लोग हज़ की यात्रा मे महात्मा मन्सूर के साथ थे। कई दिनो तक कोई खाना न मिला और उनकी दशा दयनीय हो गई। अतः जब आपसे सबने भूख की शिकायत करते हुए यह फरमाइश की कि इस समय हमारी तबीयत सिरी खाने को चाहती है तो आपको उनकी दशा पर दया आ

गई। आपने सबको कतार में बैठा दिया। जब आप अपने कमर के पीछे हाथ ले जाते तो एक भुनी हुई मिरी और दो गर्म रोटियाँ निकाल-निकाल कर सबके सामने रखते जाते। इस प्रकार उन चार सौ आदमियों ने जो आपके साथ थे पेट भर कर खाना खाया। आगे चल कर लोगों ने कहा कि हमारी तबियत खुरमों को चाहती है तो आपने खड़े होकर कहा कि मुझे जोर-जोर से हिलाओ। सब लोगों ने यह क्रिया की तो आपके शरीर में से इतने खुरमे झड़े कि लोगों ने मन भर कर खाए।

एक बार आपके मुरीदों ने किसी जंगल में अंजीर खाने की प्रार्थना की तो आपने जैसे ही शून्य में हाथ फैलाया तो अंजीर से भरा हुआ एक थाल आपके हाथ में आ गया और आपने सब मुरीदों को खिला दिया। इसी तरह जब मुरीदों ने हलवा की इच्छा की तो आपने उनको हलवा पेश कर दिया। और लोगों ने कहा कि ऐसा हलवा तो बगदाद के बाजारों में मिलता है तो आपने फरमाया कि मेरे लिए बगदाद के बाजार और जंगल सब बराबर हैं। ऐसा कहा जाता है कि उसी दिन बगदाद के एक बाजार में से किसी हलवाई का हलवे से भरा हुआ थाल गुम हो गया और जब आप अपनी टोली के साथ बगदाद पहुँचे तो हलवाई ने अपना थाल पहचान लिया और उन लोगों से पूछा कि यह तुम्हारे पास कहाँ से आया। उन्होंने उसे पूरी घटना सुना दी वह हलवाई आपके चमत्कार से बहुत प्रभावित हुआ और आपके श्रद्धालुओं में शामिल हो गया।

कारावास और सूली वध

जब एक मसूद आपको कत्ल करने के विचार से पहुँचा

तो आपने कहा कि मैने एक ऐसे महत्वपूर्ण काम का संकल्प कर लिया है जिसके कारण मुझ पर दीवानगी छा गई है और मैं स्वयं ही अपनी मृत्यु को निमन्त्रण दे रहा हूँ। अत तुम मुझको कत्ल न करो। आपके इन वचनो से बहुत से लोग आपके विरोधी हो गये और खलीफा से शिकायत की, जिससे उसके मन मे भी आपके विषय मे बुरी धारणा हो गई तथा वह भी आपको सन्देह की दृष्टि से देखने लगा। यहाँ तक कि आपके "अनल हक" (अहम् ब्रह्मास्मि) कहने के कारण आपको नास्तिक होने का फतवा दे दिया गया। (फतवा—किसी कर्म के उचित या अनुचित होने के सम्बन्ध मे धर्माचार्य द्वारा शास्त्र के अनुसार दी गयी व्यवस्था) और जब आपसे प्रश्न किया गया कि मनुष्य का ईश्वर होने का दावा करना अधर्म है तो आपने उत्तर दिया कि वास्तव मे हुसैन (आप का नाम) गुम हो गया है और केवल ईश्वर ही रह गया है और जीवन के समुद्र में न तो कमी सम्भव है न अधिकता। लोगो ने सन्त जुनैद से पूछा कि मन्सूर के वचन की किसी तरह धार्मिक व्याख्या हो सकती है या नही। उन्होने कहा कि अब तुम इस बारे में कुछ न कहो क्योकि अब धार्मिक व्याख्या का समय बीत चुका है। अत विद्वानो का एक समुदाय, मुल्ला और खलीफा आदि सब आपसे नाराज हो गए। आपको एक वर्ष तक कारावास मे डाले रखा गया। परन्तु आपके श्रद्धालु-जन वहाँ भी पहुँचते रहते थे। आपके प्राणो की सुरक्षा के बारे मे उन लोगो द्वारा शका करने पर आप उन्हे ढाढस बँधा देते थे। फिर आपके पास लोगो के जाने पर रोक लगा दी गई। पाँच महीने तक एक मनुष्य भी आपसे नही मिल सका। इस बीच कुछ महात्माओ ने आपके पास दो पुरुष भेज कर कहलवाया

कि अहम् ब्रह्मास्मि न कहने की प्रतीज्ञा करके क्षमा याचना कर लो ताकि कारावास से मुक्त कर दिया जाय। आपने उन्हे उत्तर दिया कि मुझे आपका सुझाव स्वीकार नही। फिर एक दिन सूफी-सन्त महात्मा अता स्वयं भी आपके पास गए परन्तु आपने उन्हे भी वही उत्तर दिया।

जिस दिन आपको कारावास मे डाला गया तो रात को जब लोगों ने जाकर देखा तो आप वहाँ नही थे। दूसरी रात में न कारावास वहाँ था और न आप थे। और तीसरी रात में दोनो मौजूद थे। जब लोगो ने इस रहस्य का कारण पूछा तो आपने कहा कि पहली रात मे तो मै हुजूर (हजरत मुहम्मद साहब) की सेवा मे था और दूसरी रात मे हुजूर स्वयं यहाँ आए हुए थे, अतः कारावास अदृश्य हो गया था और अब मुझे धर्मशास्त्र की रक्षा के लिए फिर यहाँ भेज दिया गया है।

कारावास के अन्दर आप एक दिन-रात मे एक हजार रकात नमाज पढा करते थे। फिर जब लोगो ने पूछा कि जब आप स्वयं ब्रह्म हैं तो फिर नमाज किस की पढते हैं तो फरमाया कि अपना मर्तबा (पद) हम स्वयं समझते हैं। यद्यपि "अनल-हक" की अवस्था अध्यात्म की अन्तिम मंजिल नही है फिर भी इतनी ऊँची अवस्था है कि लाखों करोड़ो साधकों में से किसी एक विरले साधक को प्राप्त होती है। ऊपर वाले प्रसंग से ज्ञात होता है कि महात्मा मन्सूर इस अवस्था को प्राप्त करने के बाद और आगे निकल गए थे और अन्तिम पद को प्राप्त कर चुके थे। क्योंकि इस "लय" अवस्था के भावा-वेश के बाद साधक को जब फिर होश आ जाता है तब वह आत्मा और परमात्मा का सत्य ज्ञान प्राप्त करता है। इसलिए

आपने लोगो के प्रश्न के उत्तर मे यह कहा कि अपना मर्तबा हम स्वयं समझते हैं।

जेलखाने में आपके अतिरिक्त और भी तीन सौ कैदी थे। उनकी दीन दशा देखकर आपको दया आ गई। अतः आपने उनसे कहा क्या तुम को कारावास से मुक्त कर दूं। उन्होने उत्तर दिया कि यदि यह सामर्थ्य है तो फिर आप खुद क्यो आए। आपने कुछ इशारा किया तो सारे कैदियों की बेड़ियाँ टूट गईं और जब दुबारा इशारा किया तो जेलखाने के तमाम ताले टूट गए। फिर आपने कैदियो से कहा कि जाओ हमने तुम्हे रिहा कर दिया। जब कैदियो ने कहा कि आप भी हमारे साथ चलिए तो बोले कि मेरे हृदय मे मेरे स्वामी से सम्बद्ध एक ऐसा भेद है जो सूली पर चढे बिना खुल नहीं सकता। यद्यपि मैं अपने स्वामी का कैदी हूँ परन्तु धर्मशास्त्र का लिहाज रखना भी आवश्यक है। अतः प्रात काल देखा गया तो तमाम कैदी फरार हो चुके थे तथा आपके अतिरिक्त वहाँ और कोई नही था। जब आप से प्रश्न किया गया तो आपने कहा कि हमने सबको रिहा कर दिया और हम इसलिए ठहर गए है कि हमारे मालिक हम से क्रोधित हैं। जब यह खबर खलीफा को पहुँची तो उसने हुक्म दिया कि उन्हे कोडे मार-मार कर तुरन्त कत्ल कर दिया जाए। अत. जेल से बाहर लाकर आपको तीन सौ कोडे लगाए गए जिससे आपकी खाल उधड गई और सारा शरीर लहूलुहान हो गया परन्तु आप बड़े धैर्य से एक ही दशा मे शान्त भाव से खडे रहे। जिस मनुष्य ने आपको कोडे लगाए थे उसका कहना है कि हर कोड़े पर मैं यह आवाज सुनता था कि "ऐ मन्सूर भयभीत न हो"। कोड़े लगाने के बाद आपको सूली पर चढाने के लिए ले जाया

गया जिसे देखने के लिए एक लाख आदमी इकट्ठा थे। आप चारों ओर देख कर हक, हक, हक (ब्रह्म, ब्रह्म, ब्रह्म) और "अनल-हक" (अहम ब्रह्मास्मि) कह रहे थे। उस समय एक सूफी-साधक ने आप से पूछा कि प्रेम किस को कहते हैं? आपने उत्तर दिया—आज कल और परसों में तुमको मालूम हो जायेगा। अतः उसी दिन आपको फाँसी दी गई, अगले दिन आपकी लाश को जला दिया गया और तीसरे दिन खाक हवा में उड़ा दी गई। मानो आपके वचनों के अनुसार प्रेम का असली अर्थ यही था। जब आपके सेवक ने वसीअत करने के लिए प्रार्थना की तो आपने कहा कि अपने मन को सांसारिक माया-मोह से पवित्र कर ले वर्ना यह तुझको ऐसी चीजों में फाँस देगा जो तेरे बस की नहीं होगी और तू बरबाद हो कर न दीन का रहेगा न दुनिया का। उसके बाद आपके सुपुत्र ने कुछ उपदेश देने के लिए प्रार्थना की तो आपने कहा कि सारी दुनिया यद्यपि नेक और अच्छे कर्म करने का प्रयत्न करती है परन्तु तुझे आत्मज्ञान प्राप्त करना चाहिए क्योंकि आत्मज्ञान का एक बिन्दु भी तमाम नेक कर्मों से अधिक मूल्यवान होता है। फिर आप जिस समय प्रसन्न चित्त और मुस्कराते हुए और टहलते हुए सूली की तरफ बढ़े तो लोगों ने प्रश्न किया कि आप इतने प्रसन्न क्यों हैं? आपने कहा कि इससे अधिक प्रसन्नता का समय और कौन-सा हो सकता है, क्योंकि मैं अपने लक्ष्य पर पहुँच गया हूँ। फिर आपने दो शेर पढ़े जिनका अर्थ था- मेरा दोस्त ज़ालिम भी नहीं है। उसने मुझको ऐसी शराब दी है जो मेहमान को मेज़बान दिया करता है और जब जाम से नहीं दौर चल चुके तो तलवार और नतऐ का बिस्तर मंगाए कि इस मशूक की सजा यही है जो (अजदहा) के सामने सावन

के महीने मे पुरानी शराब पीता है। फिर जिस समय आपको फाँसी के फन्दे के नीचे ले जाया गया तो आपने फाँसी के चबूतरे को चूम कर फिर सीढ़ी पर कदम रखा। उस समय लोगो ने पूछा कि क्या हाल है ? यद्यपि कोडो की मार के कारण आपका सारा शरीर लहूलुहान था फिर भी आपने मुस्कराते हुए कहा कि फाँसी तो महापुरुषो का स्वभाव है। फिर काबे की तरफ मुँह करके कहा कि मैने जो कुछ माँगा तूने प्रदान कर दिया। उसी समय आपको याद आया कि युवावस्था मे मेरी दृष्टि, एक स्त्री पर पड़ गई थी तो बोले कि इसका बदला इतने समय बाद लिया जा रहा है। जब प्रसिद्ध सूफी-साधक महात्मा शिबली ने पूछा कि अध्यात्म ज्ञान किसको कहते है ? तो फरमाया कि जो कुछ तुम देख रहे हो यह तो अध्यात्म ज्ञान का एक तुच्छ पद है क्योकि सर्वोच्च पद से तो कोई भी परिचित नही हो सकता। इसके बाद लोगो ने आपको पत्थर मारने शुरू कर दिए। पत्थरो के प्रहार से आपके शरीर मे जगह-जगह जख्म हो गए परन्तु आप बराबर शान्त बने रहे और पीडा का कोई भी चिन्ह आपके चेहरे पर दिखाई नही दिया। परन्तु जब सूफी महात्मा शिबली ने मिट्टी का एक छोटा सा ढेला मारा तो आपने आह भरी। और जब लोगो ने पूछा कि पत्थर मारने के कष्टो पर तो आप खामोश रहे लेकिन मिट्टी के छोटे-से ढेले पर आपके मुँह से आह क्यो निकल गई ? आपने कहा कि पत्थर मारने वाले तो मेरी आध्यात्मिक वास्तविकता से अनजान है लेकिन शिबली को ढेला इसलिए नही मारना चाहिए था कि वह मुझे अच्छी तरह जानते है। फिर जब सीढी पर आपके हाथ काट दिए तो मुस्कराते हुए बोले— लोगो ने यद्यपि मेरे बाहरी हाथ तो काट दिए है लेकिन मेरे

आन्तरिक हाथ कौन काट सकता है जिन्होने हिम्मत का ताज आकाश के सिर पर से उतारा है। इसी तरह जब पाँव काटे तो फ़रमाया कि मेरे जाहिरी पाँवो को काट दिया गया परन्तु अभी वह भीतरी पाँव वाकी है जिन से मैं लोक-परलोक की यात्रा कर सकता हूँ। फिर अपने खून से सने हाथो को मुँह पर मला जिससे सारा मुँह खून से सन कर लाल हो गया। फिर आपने कहा कि मेरा सम्मान और प्रतिष्ठा अच्छी तरह देखो क्योंकि खून महापुरुषो का उबटन होता है। फिर खून से भरे हुए हाथों को कोहनियों तक फैलाते हुए कहा कि मैं प्रेम की नमाज के लिए वुजू कर रहा हूँ क्योकि प्रेम की नमाज के लिए ख़ून ही वुजू किया जाता है। इसके बाद आपकी दोनो आँखे निकाल ली गईं। यह दर्दनाक दृश्य देखकर लोगो में हलचल मच गई। बहुत से लोग रो पड़े और कितने ही निष्ठुरो ने आप पर पत्थरो से प्रहार किया। जब आपकी जिह्वा काटने की तैयारी होने लगी तो आपने कहा कि मुझे एक बात कहने की मौहलत दे दो। फिर बोले कि ऐ अल्लाह, मेरे हाथ-पैर तेरे रास्ते मे काट दिए गए, आँखे निकाल ली गईं और अब सिर भी काट दिया जायगा लेकिन मैं तेरा शुक्रगुजार हूँ और एहसानमन्द हूँ कि तूने मुझे अपने वचन और निश्चय पर दृढ रखा और तुझसे प्रार्थना करता हूँ कि सब लोगो को भी वही दौलत प्रदान कर जो मुझे दी है। इसके बाद आपके नाक और क़ान काट डाले गए। इसी बीच एक पत्थर-दिल (निर्दयी) वुढ़िया ने कहा—पत्थर मारो, इस आत्माभिमानी पापात्मा के ऊपर जोर से प्रहार करो। यह सुन कर लोग आपको पत्थरो से मारने लगे। उस समय आप कह रहे थे—अद्वितीय की मित्रता अद्वितीय कर देती है। फिर आपने एक आयत पढ़ी जिसका अर्थ यह था कि जो उस (ईश्वर) पर श्रद्धा-विश्वास नही रखते उन

लोगो के साथ उतावली से काम लिया जाता है और श्रद्धा-विश्वास करने वाले उससे डरते है कि वह नि:सन्देह परम सत्य है। इसके बाद आपकी जीभ काट डाली गई। सन्ध्या हो गई थी, उसी समय खलीफा का हुक्म आया कि सिर भी काट दिया जाय। सिर कटते समय आप जोर-जोर से हंसते-हसते ब्रह्मलीन हो गए। और आपके प्रत्येक अग से "अनल-हक" (अहम्-ब्रह्मास्मि—मै ईश्वर हूँ) की आवाज आने लगी। फिर जिस समय प्रत्येक अग के टुकड़े-टुकडे कर दिए गए और सिर्फ गर्दन और धड बाकी रह गया तो उन दोनो भागो से भी "अनल-हक" का जाप जारी था। जिसके कारण आपको अगले दिन इस भय से जला दिया गया कि कही कोई और उपद्रव खडा न हो जाए और अन्त मे राख को दजला नदी मे डाल दिया परन्तु जिस समय राख नदी में डाली गई तो पानी मे एक जोश-सा पैदा हुआ और पानी की सतह पर कुछ चिन्ह से बनने लगे। यह देख कर आपके सेवक को वह वसीअत याद आ गई जो आपने अपने जीवन-काल मे फरमाई थी कि जिस समय मेरी राख को दजला मे फेका जायगा तो पानी मे ऐसा जोश और तूफान पैदा होगा कि पूरा बगदाद डूब जायगा। लेकिन जब यह दशा हो तो तुम मेरी गुदडी दजला को जा कर दिखा देना। अत आपके सेवक ने जब आपके कहने के अनुसार आपकी गुदडी दजला नदी को दिखाई तो पानी अपनी जगह ठहर गया और तमाम राख इकट्ठा होकर किनारे पर आ गई जिसको लोगो ने निकाल कर दफन कर दिया।

उपसंहार

तात्पर्य यह है कि यह महान् पद किसी दूसरे सूफी-सन्त

महात्मा को प्राप्त नही हुआ। अत एक सूफी-सन्त ने आन्तरिक साधना मे रत सूफी-महात्माओ को सम्बोधन करते हुए कहा कि जब मन्सूर की घटना सामने आती है कि उनके साथ किस तरह का व्यवहार किया गया तो मुझे असीम आश्चर्य होता है और मैं यह सोचता रह जाता हूँ कि जिन लोगो ने उनके साथ यह व्यवहार किया उनकी कयामत के दिन क्या दशा होगी। सूफी-सन्त महात्मा अब्बास तूसी कहते है कि कयामत के दिन मन्सूर को इसलिए जजीरो मे जकड कर दरबार मे पेश किया जायगा कि कही प्रलय-क्षेत्र उलट-पुलट न हो जाए।

किसी सूफी-सन्त ने धर्माचार्यो से कहा कि जिस रात मे मन्सूर को सूली पर चढाया गया तो मै प्रात.काल तक सूली के नीचे भजन-पूजन करता रहा और जिस समय दिन निकला तो यह आकाशवाणी हुई—हमने अपने रहस्यो मे से एक रहस्य को उसे बता दिया था जिसको उसने प्रकट करके यह दण्ड पाया क्योकि शाही-रहस्य को उजागर करने वाले का यही परिणाम होता है।

सूफी-साधक महात्मा शिवली कहते है कि मै उसी रात हजरत मन्सूर की कब्र पर पहुँच कर सारी रात भजन-पूजन करता रहा और प्रात काल के समय अपनी प्रार्थना मे ईश्वर से विनय की—हे ईश्वर, यह एक श्रद्धावान भक्त था फिर तूने एक ऐसे ब्रह्मज्ञानी और प्रेमी को जो तेरा पुजारी था ऐसा भयकर दण्ड क्यो दिया ? हज़रत शिवली कहते हैं कि अभी यह विनय पूरी भी न होने पाई थी कि मुझे ऊँघ आ गई और मैंने देखा कि कयामत का दरबार लगा हुआ है और ईश्वर कह रहे है कि हमने मन्सूर के साथ यह व्यवहार इसलिए किया कि

वह हमारे रहस्य को दूसरो पर प्रकट कर देता था। फिर हजरत शिबली ने दूसरी रात आपको स्वप्न मे देख कर पूछा कि परमेश्वर ने आपके साथ कैसा व्यवहार किया। आपने फरमाया कि अपनी कृपा से मुझे सत्यता के महल मे ठहराया। फिर जब हजरत शिबली ने पूछा कि उन दो गिरोहो के साथ क्या बर्ताव किया गया जो आपको अच्छा और बुरा कहते थे। आपने उत्तर दिया कि दोनो गिरोहो पर दया-कृपा की। एक पर तो इसलिए कि उसने मुझसे परिचित होकर मुझ पर महरबानियाँ की और दूसरे गिरोह पर इसलिए कि वह मुझसे परिचित ही नही था और केवल परमात्मा के लिए मुझ से दुश्मनी रखता था। फिर किसी और ने आपको स्वप्न मे देखा कि आप प्रलय-क्षेत्र मे खडे एक जाम (शराब का प्याला) हाथ मे लिए हुए है और सिर शरीर से गायब है। जब उसने इसका कारण पूछा तो आपने कहा कि परमेश्वर उन्ही भक्तो को जाम प्रदान करता है जिनका उसकी राह मे शीश काट दिया गया, अर्थात जो उसकी राह मे कुरबान हो गए। हजरत शिबली कहते है कि जिस समय मन्सूर को सूली पर चढाया गया तो शैतान ने सामने आकर कहा कि ऐ शेख (धर्म-गुरु) आपने "अनल हक" (अहम् ब्रह्मास्मि-मैं ईश्वर हूँ) कहा और मैंने "अनल-खैर" (मैं अच्छा हूँ), परन्तु आपके ऊपर कृपा हुई और मेरे ऊपर भर्त्सना। आखिर इसकी क्या वजह है ? आपने फरमाया कि तूने "अनल-खैर" अपने अह (खुदी) के लिए प्रयुक्त किया और मैने अह (खुदी) को दूर करके "अनल-हक" कहा, इसी वजह से मुझ पर कृपा हुई और तुझ पर भर्त्सना का अवतरण हुआ। इससे यह मालूम होता है कि "खुदी' को

अपने से अलहदा कर देना ही पूर्ण-पद प्राप्त करने की कुँजी है।

वाणी

१—जिस समय लोगो ने आपसे प्रश्न किया कि हजरत मूसा के बारे में आपका क्या मत है तो उत्तर दिया कि वह सत्य पथ पर थे। और जब फरऊन (मिश्र का बादशाह था जो हिरण्यकश्पु जैसा था) के बारे मे पूछा गया तो आपने कहा कि वह भी सच्चा था। क्योकि ईश्वर ने दो प्रकार के लोग पैदा किए है। एक साधारण और एक विशेष और दोनो प्रकार के लोग अपने-अपने पथो पर चलते रहते है और दोनो को रास्ता दिखाने वाला ईश्वर है।

२—ईश्वर की याद मे संसार और परलोक दोनो को भुला देने वाले ही को ईश्वर-मिलन प्राप्त होता है।

३—ईश्वर के सिवा प्रत्येक चीज से बेपरवाह होकर भजन-पूजन करना फ़ुक्र (दैन्य साधुता) है।

४—सूफी अपने स्वरूप मे इसलिए अद्वितीय होता है कि न तो वह किसी को जानता है और न उससे कोई परिचित होता है।

५—श्रद्धा और विश्वास के प्रकाश मे ईश्वर की खोज करो।

६—ज्ञान एक तीर है, और तीरन्दाज ईश्वर है और संसार उसका निशाना।

७—सच्चा धार्मिक वह धन-दौलत को दोषयुक्त समझ कर थोडे ही मे सन्तोष ग्रहण करे।

८—सबसे श्रेष्ठ शिष्टता और सदाचार दुनिया द्वारा दिए हुए कष्टो पर धैर्य करना और ईश्वर को पहचानना है।

९—कर्म को निर्मल रखने का नाम शिष्टता और सदाचार है।

१०—भक्तो की दिव्य-दृष्टि, ब्रह्म-ज्ञानियो का ज्ञान, विद्वानो का तेज, और पूर्व-काल मे मुक्ति पाने वालो का मार्ग अनादि काल से अन्तकाल तक एक ही तत्व से सम्बद्ध है।

११—रजा (ईश्वर की मर्जी मे खुश रहना) के क्षेत्र मे विश्वास की हैसियत एक अजगर जैसी है। जिस तरह जंगल मे एक कण की हैसियत होती है, उसी तरह सारा ससार उस अजगर के मुँह मे रहता है।

१२—जिस तरह बादशाह और—और देशो पर कब्जा करने की हवस मे गिरफ्तार रहते है उसी तरह हम प्रत्येक क्षण कष्टो की चाहना करते रहते है।

१३—भक्ति का मार्ग तय करने वाला मुक्त हो जाता है।

१४—मुरीद (वह आध्यात्मिक शिष्य जो गुरु मे समा गया हो) तौबा की छत्र-छाया मे रहता है। (तौबा—किसी पाप को दुबारा न करने की पश्चाताप पूर्वक प्रतिज्ञा करना) अर्थात मुरीद से कोई न कोई पाप जाने-अनजाने हो ही जाता है अतः वह सदा तौबा करके ईश्वर से क्षमा-याचना करता रहता है।

१५—मुराद (वह आध्यात्मिक शिष्य जिसमे गुरु स्वय समा गया हो) निष्पापता की छत्र-छाया मे रहता है। अर्थात इस पद को प्राप्त शिष्य से कभी कोई पाप होता ही नही क्योंकि उसकी रक्षा स्वय गुरु करते रहते है।

१६—मुरीद वह है जिसके रहस्योद्घाटनो पर तपस्या की प्रबलता हो। अर्थात इस पद को प्राप्त शिष्य पर बिना तपस्या के रहस्योद्घाटन नही होते।

१७—मुराद वह है जिसके रहस्योद्घाटन तपस्या से आगे बढ जाएँ अर्थात बिना किसी तपस्या के रहस्योद्घाटन अपने आप होने लगे।

कुछ लोगो ने प्रश्न किया कि दुआवाला हाथ अधिक बड़ा है या भजन-पूजन करने वाला हाथ। आपने उत्तर दिया कि इन दोनो हाथो की कही तक पहुँच नही। क्योकि यद्यपि दुआ वाले हाथ को स्वीकृति तक पहुँच प्राप्त है परन्तु सत्यनिष्ट महात्मा इसको शिर्क मानते है। शिर्क के अर्थ है—ईश्वरत्व मे ईश्वर के अतिरिक्त किसी और को भी सम्मिलित करना अर्थात ईश्वर के अतिरिक्त किसी दूसरे की भी पूजा और उपासना करना, जो पाप है। आपने आगे फरमाया कि भजन-पूजन वाले हाथो को धर्मशास्त्रो तक पहुँच प्राप्त है परन्तु सत्यनिष्ट महात्मा इसको पसन्द नही करते। अतः सबसे श्रेष्ठ हाथ वह है जिसे नेक और भले कर्म करने का सौभाग्य प्राप्त है।

१९—दासतत्व का सम्बन्ध स्वामित्व से है। अर्थात जब तक शिष्य अपने गुरु को या ईश्वर को सच्ची श्रद्धा और पूर्ण विश्वास के साथ स्वामी नही मानता तब तक वह उसके स्वामी नही होते यानी तब तक गुरु उस शिष्य का अध्यात्मिक पालन-पोषण नही करते।

२०—ईश्वर जिसको दर्शन देना चाहता है उसकी छोटी-सी बात पर प्रसन्न होकर उसे दर्शन दे देता है, नही तो बड़े-बड़े नेक कर्मो से भी प्रसन्न नही होता।

२१—जब तक दुख-तकलीफ पर धैर्य न किया जाय, ईश्वर-कृपा प्राप्त नही होती।

२२—धैर्य के मानी यह है कि अगर हाथ-पाँव काट कर फाँसी पर लटका दिया जाय तब भी मुँह से "हाय" न निकले। अतः जब आपको सूली पर चढाया गया तो "हाय" तक नही की।

सूफी-संत महात्मा जुनैद

किसी मनुष्य ने सूफी-सत महात्मा सरी सकती से प्रश्न किया कभी कोई शिष्य अपने गुरु से भी ऊँचा आध्यात्मिक-पद प्राप्त कर लेता है। आपने कहा—नि.सन्देह, जैसे जुनैद मेरा शिष्य है परन्तु आध्यात्मिक अवस्था मे मुझ से श्रेष्ठ है।

परन्तु इस सत्य के बावजूद महात्मा सरी सकती के जीवन-काल में महात्मा जुनैद ने अदब अर्थात् शिष्टता का ख्याल रखते हुए अपने शिष्यो और अन्य महात्माओ की प्रार्थना करने पर भी कि आप कुछ प्रवचन और उपदेश फरमाया करे, उनकी प्रार्थना को स्वीकार नही किया और कहा—जब तक गुरु महाराज जीवित हैं मैं न तो प्रवचन करूँगा और न ही उपदेश दूंगा। आपके गुरु महाराज ने भी आपको प्रवचन करने और उपदेश देने के लिए कहा। परन्तु आपने विनम्रतापूर्वक क्षमा याचना करते हुए कहा—आपके होते हुए भला मैं कैसे प्रवचन कर सकता हूँ और उपदेश दे सकता हूँ। परन्तु एक रात स्वप्न मे आपने देखा कि हजरत मुहम्मद साहब आप से कह रहे हैं—ऐ जुनैद, तुम लोगो को प्रवचन किया करो और उपदेश दिया करो। क्योकि तुम्हारे प्रवचन और उपदेशो से लोगो का उद्धार होगा। महात्मा जुनैद जब जागे तो दिल मे

ख्याल आया कि मेरा आध्यात्मिक पद मेरे गुरु महात्मा सरी सकती से ऊँचा है तभी तो हजरत मुहम्मद साहब ने मुझे प्रवचन करने और उपदेश देने के लिए कहा है। सुबह जब आप नमाज से निवृत्त हुए तो एक मनुष्य महात्मा सरी सकती का सन्देश लेकर आया और बोला—महात्मा सरी सकती कहते हैं कि जुनैद से कहो कि न तो शिष्यो के कहने पर, न अन्य महात्माओ के कहने पर और न ही मेरे कहने पर तूने प्रवचन और उपदेश दिया, परन्तु अब तो हजरत मुहम्मद साहब का आदेश हुआ है, इसको अवश्य स्वीकार कर लेना। महात्मा जुनैद कहा करते थे कि यह सन्देश सुनकर मै जडवत हो गया, तमाम इन्द्रियाँ सुन्न हो गई और मेरे दिल मे जो गुरु से अधिक श्रेष्ठ होने का विचार आया हुआ था एक क्षण मे विलीन हो गया और मैंने जान लिया कि महात्मा सरी सकती का आध्यात्मिक पद मुझ से बहुत ऊँचा है। क्योकि उन्हे तो मेरी तमाम आध्यात्मिक अवस्थाओ का ज्ञान है जबकि मुझे उनकी आध्यात्मिक अवस्थाओ का पता नही है। अत आप महात्मा सरी सकती की सेवा मे उपस्थित हुए और अपने पाप को क्षमा करने की प्रार्थना की। फिर विनम्रतापूर्वक पूछा—ऐ शेख, आपको यह कैसे मालूम हुआ कि मैंने यह स्वप्न देखा है। महात्मा सरी सकती ने कहा—बेटा, स्वप्न मे मुझ से ईश्वर ने कहा कि मैंने अपने रसूल को भेजा है कि जुनैद से कहे कि वह प्रवचन किया करे और उपदेश दिया करे ताकि बगदाद के वासियो की मनोकामना पूरी हो और उनका उद्धार हो। इस कथा से साधक को सबक लेना चाहिए कि शिष्य चाहे कितना ही आध्यात्मिक ऊँचा पद प्राप्त कर ले परन्तु गुरु से महान

नही हो सकता और हर हाल मे उसको चाहिए कि गुरु के प्रति बेअदबी न करे।

सूफी-सत महात्मा सुहेल कहा करते थे कि यद्यपि महात्मा जुनैद का आध्यात्मिक पद सब महात्माओं से श्रेष्ठ है परन्तु आप केवल हजरत आदम (आदि पुरुष) की तरह भजन-पूजा तो करते थे परन्तु आन्तरिक साधना की तपस्या का कष्ट सहन न कर सकते थे। इस सम्बन्ध मे सूफी-संत महात्मा अत्तार कहते है कि महात्मा सुहेल का यह मत एक ऐसा रहस्य है जो हमारी बुद्धि से परे है और शिष्टता और विनम्रता का आग्रह यह है कि हम दोनो महात्माओ मे से किसी की शान के विरुद्ध कुछ कहने का पाप न करे। इस सम्बन्ध मे पूज्य पण्डित जी महाराज भी अक्सर कहा करते थे कि दूसरे के गुरु का आदर भी अपने गुरु के आदर के समान करना चाहिए और उनकी शान मे कभी कोई बुरी बात नही कहनी चाहिए।

एक अन्य सूफी-सत महात्मा इब्न सरीह से लोगो ने प्रश्न किया—क्या जुनैद बगदादी के वचन उनके ज्ञान के अनु-कूल होते हैं। उन्होने जवाब दिया कि यह तो मैं नही जानता, हाँ उनकी बातचीत ऐसी अवश्य होती है जैसे मानो परमेश्वर उनके मुख से बोल रहा हो और मेरी इस सम्मत्ती और सोच की यह दलील है कि महात्मा जुनैद "अध्यात्म" का इतना गूढ वर्णन करते है कि अच्छे-अच्छे महात्माओ की समझ मे नही आता।

जन्मजात महात्मा

बचपन ही से आपको अध्यात्म की ऊँची-ऊँची अवस्थाए

प्राप्त होती रही। एक बार पाठशाला से वापस आते हुए आपने देखा कि आपके पिताजी मार्ग मे खडे रो रहे हैं। आपने रोने का कारण पूछा तो उन्होने कहा कि मेरे रोने का कारण यह है कि आज मैंने तुम्हारे मामा सूफी-सत महात्मा सरी सकती को दानस्वरूप कुछ धन भेजा था, परन्तु उन्होने लेने से इन्कार कर दिया और आज मुझे यह प्रतीति हो रही है कि मैंने अपना जीवन ऐसे धन को प्राप्त करने मे व्यतीत कर दिया जिसको भक्त-जन भी पसन्द नही करते, फिर भला ईश्वर क्यो पसन्द करेगा। यह सुनकर आप उस धन को अपने पिताजी से लेकर अपने मामा महात्मा सरी सकती के यहाँ पहुँचे और आवाज दी। जब अन्दर से पूछा गया कि कौन है तो आपने निवेदन किया कि जुनैद आपके लिए दान का धन लेकर आया है। परन्तु महात्मा सरी सकती ने दान लेने से इन्कार कर दिया। इस पर महात्मा जुनैद ने कहा कि सौगन्ध है उस ईश्वर की जिसने आप पर कृपा की और मेरे पिता के साथ न्याय किया। अब आपको अधिकार है कि यह धन ले या न ले; क्योकि मेरे पिता के लिए जो आज्ञा थी कि जो दान लेने का "पात्र" है उसे दान दो, यह आज्ञा उन्होने पूरी कर दी है। यह बात सुनकर महात्मा सरी सकती ने दरवाजा खोलकर कहा कि दान के धन को स्वीकार करने से पहले मैं तुझे स्वीकार करता हूँ। अत उसी दिन से आप उनकी सेवा मे रहने लगे।

शुक्र (कृतज्ञता, उपकार मानना)

सात वर्ष की आयु मे आप अपने गुरु के साथ मक्का-मोज्जमा पहुँचे। वहाँ चार सूफी-महात्माओ मे "शुक्र" के विषय में बहस छिड़ी थी। जब सब "शुक्र" के विषय मे अपने-

अपने विचार व्यक्त कर चुके और किसी निश्चित परिणाम पर नही पहुँचे तो महात्मा सरी सकती ने आपको "शुक्र" की परिभाषा और अर्थ वर्णन करने की आज्ञा दी। आपने थोडी देर सिर झुकाये रखने के बाद कहा—शुक्र का अर्थ यह है कि जब ईश्वर नैमत प्रदान करने वाले ईश्वर की आज्ञाओ का उलंघन कभी न करे। यह सुनकर सब लोगो ने जो वहाँ उपस्थित थे कहा कि वास्तव मे "शुक्र" इसी को कहते हैं।

भजन-पूजा और तपस्या

बगदाद वापस लौटने पर आपने दर्पण बनाने की दुकान खोल ली और एक पर्दा डाल कर चार-सौ रकात (नमाज मे झुकना) नमाज प्रतिदिन इसी दुकान में अदा करते रहे। परन्तु कुछ समय बाद दुकान बन्द कर दी तथा महात्मा सरी सकती के मकान की एक कोठरी मे एकान्तवास करके तमाम समय ईश्वर के भजन-पूजा में व्यतीत करने लगे। तीस वर्ष तक इतनी कठोर तपस्या की कि रात की नमाज पढ़ने के लिए जो वुजू किया (मुँह-हाथ-पैर धोए) तो सुबह की नमाज भी उसी वुजू से अदा की अर्थात् रात्रि-भर भजन-पूजा मे इतनी पवित्रता से लगे रहे कि सुबह की नमाज अदा करने से पहले वुजू करने की जरूरत ही नही पडी।

चालीस वर्ष तक भजन-पूजा करने के बाद यह विचार हो गया कि मैं अन्तिम पद तक पहुँच गया हूँ। परन्तु उसी समय आकाशवाणी हुई—ऐ जुनैद, अब वह समय आ पहुँचा है कि तुझे अधर्मियो में शामिल कर दिया जाए। आपने निवेदन किया—हे ईश्वर, मुझ से क्या अपराध हो गया है। उत्तर मिला कि तेरा अस्तित्व अभी तक बाकी है। यह सुनकर आपने

ठण्डी आह भरते हुए कहा कि जो साधक "मिलन" के योग्य साबित न हो सका उसकी तमाम नेकियाँ पाप में दाखिल हो गईं। उसके बाद आपको उपद्रवियों ने बडा प्रमादी भी कहा और खलीफा से भी आपकी शिकायत की। परन्तु खलीफा ने कहा कि जब तक उनके विरुद्ध यह जुर्म साबित न हो जाए कि उनके कारण लोग उपद्रव करने लगते है, सजा देना विचारने योग्य नही। फिर एक बार खलीफा ने आपकी परीक्षा लेने के उद्देश्य से एक बहुत सुन्दर युवा दासी को कीमती जेवरात और आकर्षक वस्त्र पहना कर यह आज्ञा दी कि जुनैद के सामने पहुँच कर और मुँह मे घूंघट खोलकर यह कहना कि मैं एक धनवान की पुत्री हूँ, यदि आप मेरे साथ सहवास कर ले तो मैं आपको धनवान बना दूंगी। इस घटना की खबर लेने के लिए खलीफा ने उस दासी के साथ एक सेवक को भी भेज दिया। जब उस दासी ने खलीफा की आज्ञानुसार आपके सामने अपनी इच्छा व्यक्त की तो आपने सिर झुकाकर एक ऐसी ठण्डी आह भरी कि उसी क्षण उस दासी के प्राणपखेरू उड गए। जब इस घटना की खबर दूत ने वापस जाकर खलीफा को दी तो वह बडा दुखी हुआ क्योकि वह स्वय उस दासी से बहुत प्रेम करता था। खलीफा ने सोचा कि मुझे ऐसा दुष्कर्म उनके साथ नही करना चाहिए था जिसकी वजह से मुझे यह दुर्दिन देखना पड़ा। फिर आपकी सेवा मे पहुँच कर खलीफा ने कहा कि यह बात आपने कैसे गवारा की कि ऐसे प्यारे और सुन्दर अस्तित्व को संसार से विदा कर दिया। आपने उत्तर दिया कि धर्मात्माओ के रक्षक होने के नाते तुम्हारा कर्त्तव्य तो धर्मात्माओ पर कृपा करना है, परन्तु कृपा के बजाय तुमने मेरी चालीस वर्ष की भक्ति को मटियामेट करना कैसे गवारा कर लिया।

यह सुनकर खलीफा बहुत लज्जित हुआ और आप से क्षमा याचना की।

आप प्रतिदिन रोजा रखते थे। परन्तु अतिथि के आ जाने पर रोजा न रखते और कहते थे कि धार्मिक भाइयों की अनुकूलता भी रोजे से कम नही। आपके और सूफी महात्मा अबू बक्र के मध्य सूफीमत के एक हजार सिद्धान्तो पर पत्र-व्यवहार हुआ। तथा महात्मा अबू बक्र ने मृत्यु के समय यह वसीअत की कि इन सिद्धान्तों को मेरे साथ ही दफन कर दिया जाए। परन्तु महात्मा जुनैद ने कहा कि दूसरों के हाथों मे पहुँचने से अच्छा है कि यह रहस्यमयी सिद्धान्त हम दोनो के दिलो में ही रह जाएँ।

महात्मा जाफर विन नसर वर्णन करते हैं कि महात्मा जुनैद ने एक दरम देकर अन्जीर और जैतून का तेल खरीद लाने को कहा और रोजा खोलने के समय अन्जीर मुँह मे रख कर तुरन्त निकाल कर फैंक दिया। महात्मा जाफर कहते हैं कि मैंने इसका कारण पूछा तो बोले कि मुझे यह आवाज सुनाई दी कि ओ निर्लज्ज, जिस चीज को तूने हमारी याद मे छोड़ दिया था फिर उसी की तरफ ध्यान देने लगा।

किसी ने पूछा कि आपको यह उच्च-पद कैसे प्राप्त हुआ तो आपने कहा कि मैं एक टाँग से चालीस वर्ष तक अपने गुरु के द्वार पर खडा रहा हूँ।

जीवन की घटनाएँ

आप कहा करते थे कि एक बार मेरा दिल कही खो गया और जब मैंने मिल जाने की प्रार्थना की तो हुक्म हुआ कि हमने

तुम्हारा दिल इसलिए लिया है कि तुम हमारे सत्संग मे रहो और तुम दिल की वापसी दूसरे की तरफ ध्यान देने के लिए चाहते हो ।

एक बार सूफी-सन्त महात्मा मन्सूर-अल-हल्लाज "हाल" (ईश्वर मिलन के समय) की अवस्था के बाद महात्मा उमर बिन उसमान से नाराज होकर महात्मा जुनैद की सेवा में पहुँचे और उनसे निवेदन किया कि मेरे दिल के दुखी होने की वजह यह है कि बन्दा अपनी चेतनता और मस्ती के कारण ईश्वर से मिलन की अवस्था मे नही रह सकता । आपने कहा कि तुमने चेतनता और मस्ती का अर्थ समझने मे गलती की है ।

किसी ने आपके सामने सूफी-सन्त महात्मा शिबली के यह वचन कहे कि यदि ईश्वर मुझको स्वर्ग और नर्क का अधिकार दे दे तो मैं नर्क को इसलिए स्वीकार करूँगा कि स्वर्ग तो मेरी रुचि का स्थान है और नर्क ईश्वर की । अत मित्र की रुचि की चीज को नापसन्द करने वाला दोस्त नही । परन्तु आपने कहा कि मैं तो दास होने की हैसियत से किसी चीज पर अधिकार रखने का दावा नही कर सकता । अत वह मुझे जहाँ भी भेज देगा धन्यवाद-सहित चला जाऊँगा ।

सूफी-महात्मा रवेयम को जगल मे एक बुढ़िया ने यह सन्देश दिया कि बगदाद पहुँच कर जुनैद से कहना कि तुम्हे लोगो के सामने भगवत-चर्चा करते हुए शर्म नही आती । यह सन्देश सुनकर महात्मा जुनैद ने कहा कि मैं लोगो के सामने इसलिए उसकी चर्चा करता हूँ कि किसी से भी उसकी चर्चा करने का कर्तव्य पूरा नही हो सकता ।

किसी ने हजरत मुहम्मद साहब के साथ महात्मा जुनैद को भी स्वप्न मे देखा। और एक मनुष्य ने कोई उपदेश देने के लिए हुजूर से विनती की तो आपने महात्मा जुनैद की तरफ इशारा कर दिया। उस मनुष्य ने कहा कि जब हुजूर स्वयं उपस्थित हैं तो दूसरे की क्या आवश्यकता है। हुजूर ने कहा कि हर पैगम्बर को अपने अनुयायियो पर गर्व है। और मुझे अपने अनुयायियों में जुनैद पर गर्व है।

कोई महात्मा बीमार था। जब आप उसका हालचाल पूछने के लिए उसके यहाँ पहुँचे तो देखा कि वह रो रहा है। आपने प्रश्न किया कि किस के दिए हुए कष्ट पर रो रहा है और किससे उसकी शिकायत करना चाहता है। वह महात्मा यह सुन कर चुप हो गया तो आपने फिर पूछा कि कुशल का सम्बन्ध किसके साथ है। उसने विनम्रतापूर्वक कहा कि "न रोने की अनुमति है न धैर्य की"।

दर्द की अवस्था मे एक बार आपने कुरान शरीफ की कुछ आयत पढ़ कर अपने पाँव पर फूंक मारली तो आवाज आई कि तुझे शर्म आनी चाहिए कि अपने नफ्स (वासनामय-मन) के लिए हमारी पवित्र वाणी का प्रयोग करता है।

एक बार आप आँख दुखने की तकलीफ से ग्रस्त थे, तो एक अग्निपूजक हकीम ने यह सलाह दी कि आँखो पर पानी न लगने पाए नही तो मर्ज वढ़ जायगा और आँख खराब होने का खतरा हो जायगा। परन्तु जब नमाज का समय हुआ तो आपको यह विचार आया कि इस समय वुजू करना (हाथ-मुँह पैर धोना) तो कर्तव्य है। अतः हकीम के जाने के बाद आपने वुजू करके रात की नमाज पढ़ी और सो गए। प्रात.काल जागे

तो आँखे ठीक हो गई थी। उसी समय आवाज सुनाई दी कि चूँकि तुमने हमारे भजन-पूजन के कारण अपनी आँखो की परवाह नही की इसलिए हमने तुम्हारी तकलीफ समाप्त कर दी। जब उस हकीम ने पूछा कि एक ही रात मे आपकी आँखे कैसे अच्छी हो गईं तो आपने कहा कि नमाज पढने से पहले वुजू किया था। यह सुन कर उसने कहा वास्तव मे मै ही मरीज था और आप हकीम। यह कह कर आपका शिष्य हो गया।

किसी महात्मा ने शैतान को भागते हुए देखा और वह महात्मा जब आपके पास पहुँचे तो देखा कि आप बहुत क्रोधित है। अत उन महात्मा ने कहा कि गुस्सा थूक दीजिए क्योकि गुस्से की हालत मे शैतान मनुष्य की बुद्धि को जीत लेता है। यह कह कर उन्होने मार्ग मे भागते हुए शैतान की घटना सुनाई तो आपने कहा कि शैतान मेरे गुस्से से भागता है क्योकि दूसरे मनुष्य तो अपने विषयी मन और स्वार्थ के कारण क्रोध करते है अत शैतान उन्हे नुकसान पहुँचाता है। फिर आपने कहा कि यदि परमेश्वर ने शैतान से परित्राण (किसी कष्ट-प्रद वस्तु या हानि पहुँचाने वाले व्यक्ति के ससर्ग से बचना) की आज्ञा न दी होती तो मै कभी उससे परित्राण न चाहता।

महात्मा जुनैद कहते है कि एक बार का जिक्र है कि मेरे दिल मे शैतान को देखने की इच्छा पैदा हुई। इसके बाद एक दिन मै मस्जिद के दरवाजे पर खडा था कि एक बूढे आदमी को अपनी ओर आता देखा। उसे देख कर बडी घृणा हो रही थी। जब वह मेरे निकट आया तो मैने उससे पूछा कि तुम कौन हो। मेरी आँखो को तुम्हे देखने की ताकत नही है और

तेरी उपस्थिति से मेरे दिल को बडा भय लग रहा है। उसने कहा कि मै वही हूँ जिसे देखने की तुझे इच्छा थी। मैने कहा—ओ अधर्मी, तुझे किस चीज ने इस बात पर उभारा कि तू हजरत आदम को सिजदा (साष्टाग प्रणाम) न करे और ईश्वर की आज्ञा का उलघन करे। उसने उत्तर दिया—ऐ जुनैद, तुमने यह क्या बात कही। क्या मै ईश्वर के अतिरिक्त किसी गैर को सिजदा कर देता। (इस्लाम धर्म मे ईश्वर के अतिरिक्त किसी और की पूजा करना और सिजदा करना पाप समझा जाता है—इसी सिद्धान्त की ओर इशारा है।) महात्मा जुनैद कहते हैं कि मै उसका यह जबाब सुन कर हक्का-बक्का रह गया और मुझे कोई जबाब न बन पडा। इतने में मेरे अन्दर से मुझे यह आवाज आई—ऐ जुनैद, इससे कहो कि तू झूठ बक रहा है। यदि तू ईश्वर का आज्ञाकारी सेवक होता तो उसकी आज्ञा मानने से इन्कार क्यो कर देता। शैतान ने मेरे अन्दर से आती हुई यह आवाज सुनी और चीख मार कर कहा—ईश्वर की कसम, जुनैद तूने मुझे जला डाला। और अन्तर्ध्यान हो गया।

जब ईश्वर ने आदि पुरुष आदम को बनाया तो सृष्टि की हर चीज को आज्ञा दी कि सब उन्हे सिजदा (साष्टाग प्रणाम) करे। सबने ईश्वर की आज्ञा का पालन करते हुए हजरत आदम को सिजदा किया परन्तु शैतान ने अपने आपको ईश्वर के रहस्यो का जानकार होने के गर्व मे हजरत आदम से स्वय को श्रेष्ठ समझ कर उन्हे सिजदा नही किया और इस प्रकार अपने मालिक (ईश्वर) की आज्ञा का उलंघन किया। इस अपराध के दण्ड-स्वरूप ईश्वर ने शैतान को अपने दरबार से निकाल दिया। इस कथा से यह सबक मिलता है कि सेवक का

धर्म अपने मालिक की हर आज्ञा का पालन करना है। मालिक की आज्ञा उचित है या अनुचित यह देखना सेवक का धर्म नही। और सच बात यही है कि जो सेवक बिना उचित-अनुचित का विचार किए अपने मालिक की आज्ञा का पालन करता है उसी पर मालिक की कृपा होती है—और मालिक की कृपा से ही सेवक का उद्धार होता है वर्ना अवज्ञाकारी सेवक की शैतान की तरह ही दुर्गति होती है।

किसी ने महात्मा जुनैद से कहा कि वर्तमान काल मे सच्चे धार्मिक भाइयो की कमी है। आपने कहा यदि तुम्हारे ख्याल मे धार्मिक भाई केवल वह है जो तुम्हारी मुश्किलो को हल कर सके तो वास्तव मे ऐसे महापुरुष भाइयो का अभाव है। और यदि तुम वास्तविक धार्मिक भाइयो का अभाव महसूस करते हो तो तुम झूठे हो क्योकि धार्मिक भाई का वास्तविक अर्थ यह है कि जिनकी कठिनाइयो का हल तुम्हारे पास हो तो उनकी कठिनाइयो को हल करने मे तुम्हारी सहायता शामिल हो। और ऐसे धार्मिक भाइयो की कमी नही है। अर्थात् मुसीबत मे फँसे हुए मनुष्यो की कमी कभी नही होती और यदि तुम अपने को सच्चा साधक समझते हो तो उनकी मदद करना तुम्हारा कर्तव्य है। न कि तुम अपनी किसी मुश्किल के हल के लिए दूसरे की मदद की इच्छा करो।

एक बार आप जोर-जोर से रो रहे थे। जब लोगो ने रोने का कारण पूछा तो कहा कि जीवन-भर मैं विपदा और कष्टो की खोज मे रहा कि यदि वह अजगर बन कर मेरे सामने आ जाएं तो सबसे पहले मै उसका ग्रास बन जाऊँ। परन्तु आज तक यही आवाज आती रही कि अभी तेरी तपस्या विपदा और दुखो का मुकाबला करने मे समर्थ नही है।

किसी ने निवेदन किया कि महात्मा अबू सईद खिजार की मृत्यु के समय जौक-व-शौक बहुत बढ गए थे। आपने कहा कि ऐसी अवस्था मे उनकी मृत्यु होना आश्चर्य का कारण है। क्योंकि जब साधक को जौक-व-शौक की यह अन्तिम अवस्था प्राप्त हो जाती है तो वह सब कुछ भूल जाता है और ऐसी ही अवस्था प्राप्त साधक को ईश्वर अपना भक्त बनाता है। ऐसे ही भक्त ईश्वर पर गर्व करते है और उसकी भक्ति मे ऐसे खो जाते है कि उनके मुख से ऐसे वचन निकलने लगते है जो सर्व-साधारण की बुद्धि की पहुँच से दूर होते है और लोग उन वचनो को दोषायुक्त समझने लगते है। तभी तो लोगो के पूछने पर कि क्या महात्मा जुनैद के वचन परम ज्ञान के अनुकूल होते है, महात्मा इब्न सरीह ने कहा कि यह तो मै नही जानता। हाँ, उनकी बातचीत ऐसी अवश्य होती है जैसे मानो ईश्वर उनके मुख से बोल रहा हो। और मेरे यह कहने का कारण यह है कि महात्मा जुनैद उस परम-ज्ञान का इतना गूढ वर्णन करते है कि अच्छे-अच्छे महात्माओ की समझ मे नही आता।

इस कथा मे "जौक-व-शौक" शब्द आए है। यहाँ इन शब्दो का अध्यात्म मे क्या अर्थ है, इस पर विचार कर ले।

जौक : जौक से पहले एक और शब्द "शर्ब" के अर्थ समझ ले—ईश्वर की आज्ञा-पालन करने मे जो मिठास और उन्स (लगाव और प्रेम) मे सुख-चैन और आनन्द की अनुभूति होती है उसे सूफियो की भाषा मे "शर्ब" कहते है। और सत्य यह है कि कोई मनुष्य "शर्ब" की लज्जत (स्वाद और मजे) के बिना अधिक समय तक ईश्वर-भक्ति नही कर सकता। जिस तरह शरीर पानी से भीग कर तृप्त होता है। उससे भी अधिक भक्त का हृदय ईश्वर की अधीनता और आज्ञापालन करने से

प्राप्त होने वाले सुख-चैन और मजे से आनन्दित होता है। इस सम्बन्ध मे गुरु महाराज कहा करते थे कि हमारे सत्संग मे तो पहली बैठक में ही साधक को आनन्दमय कोश के आनन्द और मस्ती की कुछ बूँदे चखा देते है और प्रेम के छीटे उसके दिल पर मार देते है ताकि साधना की शुष्कता समाप्त हो जाए और साधक उस आनन्द और प्रेम की मस्ती मे इस मार्ग पर आसानी और उत्साह से आगे बढा चला जाए।

जौक भी शर्ब के समुदाय और उसके समान अर्थ वाला शब्द है। दोनो मे फर्क यह है कि शर्ब का सम्बन्ध केवल सुखो और आनन्द से होता है और "जौक" सुख और दुख दोनो से सम्बन्धित है। यह शब्द मधुरता, सुख और दुख सबके लिए प्रयोग किया जाता है। जैसे मैंने मधुरता का मजा चखा, मैंने सुख का मजा चखा और मैंने दुख का मजा चखा। प्रेयसी के लिए कठोर से कठोर श्रम करने और दुख उठाने का आनन्द किसी बडे से बड़े सुख के आनन्द से किसी तरह कम नही है। देखिए एक आम आदमी अपनी सन्तान के लिए किस कदर मजे और शौक के साथ बड़े से बड़े दुख उठाता है।

शौक : ईश्वर की आज्ञा पालन अर्थात् भजन-पूजन मे इतनी प्रबल इच्छा और रुचि हो जाय कि उसके सामने ससार का कोई काम अच्छा न लगे। और मजबूरी मे कर्तव्य-कर्मो को करते हुए भी ध्यान ईश्वर की ओर ही रहे। जैसा कि सन्त तुलसीदास जी ने कहा है—

कर से कर्म करो विधि नाना।
मन राखो जहाँ कृपा निधाना॥

साधक की ईश्वर के प्रति चाह व्यसनी-मनुष्य की व्यसन

के प्रति चाह से भी अधिक प्रवल होती है। सन्त तुलसीदासजी कहते है—

कामिहि नारि पियारी जिम लोभिहि जिमि दाम ।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम ॥

और जब साधक को ईश्वर-भजन का चसका लग जाता है तो फिर वह सदा इसी धुन में रहता है—अब कैसे छूटै रामा, राम धुन लागी । और इस धुन में उसे संसार का भय नही रहता कि ससार उसके बारे मे क्या कहेगा या उसका कोई सांसारिक काम बिगड जायगा। कुछ हो जाय, वह तो हमेशा ईश्वर-भजन मे तल्लीन रहता है। यही "शौक" का अध्यात्म मे अर्थ है।

फिर वही

एक बार आप प्रवचन कर रहे थे कि किसी ने निवेदन किया कि आपका प्रवचन मेरी बुद्धि से परे है तो आपने कहा कि सत्तर (७०) वर्ष के भजन-पूजा और भक्ति को पैरों के नीचे रख कर सिर झुका ले। अर्थात् इतने अधिक समय की भक्ति पर गर्व करने की बजाय इस बात पर शर्मिन्दा हो कि ईश्वर का भजन-पूजन और भक्ति न कर सका। इसके बाद अगर तेरी समझ मे मेरा प्रवचन न आए तो निःसन्देह मेरा कसूर होगा।

एक बार किसी ने प्रवचन मे आपकी प्रशसा कर दी तो आपने कहा कि वास्तव मे यह मेरी नही बल्कि ईश्वर की प्रशसा कर रहा है।

किसी ने प्रश्न किया कि हृदय को आनन्द किस समय प्राप्त होता है। आपने कहा कि जब ईश्वर हृदय मे होता है।

किसी ने पाँच सौ दीनार आपको भेट किए तो आपने उससे पूछा कि तेरे पास और धन भी है। उसने कहा—हाँ है। आपने फिर प्रश्न किया—क्या और धन की भी इच्छा है। उसने कहा कि हाँ। तब आपने कहा—अपने पाँच सौ दीनार वापस लेजा क्योकि तू इसके लिए मुझसे अधिक जरूरतमद है। इसलिए कि मेरे पास कुछ भी नही है परन्तु मुझे धन की जरूरत नही है और तेरे पास इन पाँच सौ दीनार के अतिरिक्त और भी धन मौजूद है फिर भी तू मोहताज है। मोहताज उसे कहते है जिसे किसी चीज का अभाव और आवश्यकता तथा चाह हो।

महात्मा जुनैद कहा करते थे कि हृदय की शुद्धता और पवित्रता की शिक्षा मैंने एक नाई से प्राप्त की है। हुआ यूँ कि एक बार मक्का-मौज्जमा मे वास के समय एक नाई किसी साहूकार की हजामत बना रहा था तो मैंने उससे कहा कि खुदा के लिए मेरी हजामत बना दे। उसने तुरन्त उस साहूकार की हजामत छोड कर मेरे बाल काटने शुरू कर दिए और हजामत बनाने के बाद एक कागज की पुड़िया मेरे हाथ मे दे दी जिसमें कुछ रेजगारी लिपटी हुई थी और मुझसे कहा कि आप इसको अपने खर्चे में लाएँ। वह पुडिया लेकर मैंने यह सकल्प किया कि अब पहले मुझे जो कुछ भी मिलेगा उसे मैं भी नाई की भेट कर दूंगा। कुछ समय के बाद एक मनुष्य ने बसरा शहर में अशर्फियो से भरी हुई एक थैली मुझे भेट की। वह थैली लेकर जब मैं उस नाई पास पहुँचा तो उसने कहा कि

मैंने तो तुम्हारी हजामत केवल खुदा के लिए की थी और तुम बेशर्म बन कर मुझे थैली भेंट करने आए हो। क्या तुम्हें इतना भी ज्ञान नही कि खुदा के वास्ते काम करने वाला किसी से कोई मुआवजा नही लेता।

एक बार महात्मा सुहेल ने आपको पत्र लिखा कि "गफलत की नीद से बचो। क्योकि सोने वाला अपना लक्ष्य प्राप्त नही कर सकता। जैसा कि हजरत दाऊद को आकाश-वाणी द्वारा ईश्वरीय संदेश दिया गया था कि जो हमारी मुहब्बत का दावेदार होकर रात मे सोता है वह झूठा है।" आपने पत्रोत्तर में लिखा कि "ईश्वरीय-मार्ग में जाग्रत रहना हमारा निजि-कर्म है। परन्तु हमारे सोने का सम्बन्ध ईश्वर के कर्म से है जो हमारे कर्म से श्रेष्ठ है। जैसा कि ईश्वर ने अपने श्रीमुख से कहा—नीद अपने भक्तो को प्रदान की हुई हमारी एक बखशिश है।" इस सदर्भ मे पूज्य पण्डित जी महाराज कहा करते थे कि ईश्वर ने जो अच्छी-बुरी चीजे बनाई है वह सभी सार्थक हैं—यहाँ तक कि काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह और अहंकार आदि, जिनको प्राय सभी बुरा बताते है, भी सार्थक है—बस इनके उचित और अनुचित प्रयोग और उपयोग की बात है। और इनका कौन-सा प्रयोग व उपयोग उचित है और कौन-सा अनुचित है, जान लेना बडा कठिन है—इस रहस्य को अध्यात्म-ज्ञान द्वारा ही जाना जा सकता है।

किसी स्त्री का पुत्र खो गया। उसने आप से विनती की—मेरे खोये हुए पुत्र के मिल जाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करने की कृपा करे। आपने कहा कि धैर्य रखो। यह सुनकर वह चली गई और कुछ दिन तक धैर्यपूर्वक इन्तजार

करने के बाद फिर आपकी सेवा मे उपस्थित हुई। परन्तु आपने फिर उसको धैर्य रखने का उपदेश दिया। वह स्त्री फिर वापिस चली गई। और जब धैर्य की ताकत बिलकुल न रही तो फिर आपकी सेवा मे उपस्थित होकर विनय की कि अब धैर्य रखने की सामर्थ्य भी नही है। आपने कहा कि यदि तू सच बोल रही है तो जा तेरा बेटा तुझे मिल गया। जब वह घर पहुँची तो बेटा घर पर मौजूद पाया। इस प्रसग से इस रहस्य का पता चलता है कि जब साधक की सहन शक्ति समाप्त होकर उसकी जान होठो तक आ जाती है तब ईश्वर अथवा गुरु उसका उद्धार करते है। वह स्त्री भी साधक ही तो थी, आखिर वह "धैर्य' की साधना ही तो कर रही थी और जब उसमे धैर्य की शक्ति नही रही और अधिक इन्तजार न कर सकी तब महात्मा जुनैद की कृपा उस पर हुई। इसीलिए महात्माओ ने कहा है कि उस तत्व को प्राप्त करने के लिए जान की बाजी लगानी पडती है।

इस विषय मे एक कथा आती है। किसी मनुष्य ने सूफी-सन्त महात्मा सादिक से प्रार्थना की कि मुझे ईश्वर दर्शन करवा दीजिए। आपने कहा—क्या तुझे मालूम नही कि हजरत मूसा से फरमाया गया था कि तू मुझे हरगिज नही देख सकता। उस आदमी ने कहा कि यह तो मुझे भी पता है, परन्तु एक महात्मा यह कहता है कि मेरे हृदय ने अपने परमेश्वर को देखा और दूसरा यह कहता है कि मैं ऐसे परमेश्वर की पूजा नही करता जो मुझे नजर नही आता। यह सुनकर आपने आज्ञा दी कि इस मनुष्य के हाथ-पैर बांध कर नदी मे डाल दो। अतः जब उसे दजला नदी मे डाल दिया गया और पानी ने उसको ऊपर उछाला तो उसने महात्मा सादिक से बहुत याचना की

कि मुझे पानी मे से निकाल लीजिए नही तो मै डूब कर मर जाऊँगा, परन्तु आपने पानी को आज्ञा दी कि इसको खूब अच्छी तरह ऊपर-नीचे गोते दे। और जब कई बार पानी ने गोते दिए और वह मरणासन्न हो गया तो उसने परमेश्वर को सहायता के लिए पुकारा। उस समय महात्मा सादिक ने उसको पानी में से बाहर निकलवाया और जब उसके होश-ओ-हवास ठीक हो गए तो आपने पूछा कि क्या तूने परमेश्वर को देख लिया। उसने कहा कि जब तक मैं दूसरो से मदद माँगता रहा उस समय तक तो मेरे सामने एक पर्दा पडा रहा, परन्तु जब परमेश्वर से सहायता माँगी तो मेरे हृदय मे एक छेद प्रकट हुआ और पहली-सी बेचैनी समाप्त हो गई। और मैंने देखा उस छेद मे से अनन्त प्रकाश बाहर निकल कर मेरे हृदय को आलोकित कर रहा है। महात्मा सादिक ने कहा—जब तक तूने सादिक को आवाज दी उस समय तक तू झूठा था और अब हृदय के इस छेद की रक्षा करना। द्रोपदी भी जब तक पाण्डवो, भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य आदि को धैर्यपूर्वक सहायता के लिए देखती रही, श्री कृष्ण महाराज नही आए, परन्तु जैसे ही उसके धैर्य का बाँध टूटा और उसने असहाय होकर भगवान को सहायता के लिए पुकारा, वह तुरन्त उसकी सहायता के लिए आ गए।

एक बार एक चोर ने आपका कुर्ता चुरा लिया। दूसरे दिन आपने बाजार में देखा कि एक आदमी उस कुर्ते को बेच रहा है और खरीदने वाला चोर से कह रहा है कि अगर कोई यह गवाही दे दे कि यह माल तेरा ही है तो मैं खरीद सकता हूँ। आपने कहा मैं गवाही देता हूँ। यह सुनकर खरीददार ने कुर्ता खरीद लिया।

एक बार कोई मालदार मनुष्य आपकी सभा मे से किसी दरवेश को अपने साथ ले गया और कुछ समय बाद उसके सिर पर थाल रखवाए हुए वापस आया। आपने दरवेश को हुक्म दिया कि यह थाल इसी मालदार के मुँह पर मार दे, जिसको दरवेश के अलावा कोई दूसरा मजदूर थाल उठाकर लाने के लिए नही मिला। फिर आपने उस धनी मनुष्य से कहा—अरे मूर्ख, दरवेश ईश्वर की कृपा प्राप्त न होने के बावजूद भी भक्त होते है और यदि सांसारिक धन से वह मौहताज हो तो परलोक में पुरस्कार के अधिकारी होते है। ईश्वर की कृपा प्राप्ति से आपका मतलब था कि प्राय. जिस साधक को सांसारिक मान-सम्मान प्राप्त होता है ससार वाले उसी को महात्मा समझते है। यह सही नही है। प्रत्येक सच्चा साधक, चाहे उसे सांसारिक मान-सम्मान प्राप्त हो या नही, ईश्वर की कृपा का पात्र होता है, उसका प्यारा होता है—यही उसका परलोक मे पुरस्कार का अधिकारी होना है।

किसी श्रद्धालु ने अपनी तमाम धन-सम्पत्ति दान कर दी और केवल रहने के लिए एक मकान बाकी रह गया। आपने हुक्म दिया कि मकान बेचकर तमाम रुपये नदी मे फेक दो। उसने आज्ञानुसार मकान बेचकर तमाम रुपये नदी मे फेक दिए और आपके साथ रहना शुरू कर दिया। और आपके दुत्कारने के बावजूद भी एक क्षण के लिए आपसे जुदा न होता। आखिरकार अपने लक्ष को प्राप्त करने मे सफल होकर उसने परम पद प्राप्त किया।

एक युवक की आपकी धर्म-सभा मे ऐसी अवस्था हुई कि उसने तौबा करके घर पहुँच कर तमाम सामान दान कर

दिया और एक हजार दीनार आपको भेंट करने के लिए चल दिया। मार्ग में लोगो ने कहा तुम एक हजार दीनार के बदले में एक धर्मात्मा को संसार मे कैद करना क्यों चाहते हो। यह सुनकर उस युवक ने एक-एक करके तमाम दीनार दजला नदी मे डाल दिए। और जब आपकी सेवा मे उपस्थित हुआ तो आपने कहा कि तुम मेरे सत्सग के अधिकारी नही हो क्योकि तुमने एक-एक करके जो एक हजार बार दीनार नदी मे डाले वह काम तो एक बार मे भी हो सकता था। एक-एक करके दीनारों को नदी मे डालने का अर्थ ही यह है कि उस युवक का मोह उस धन मे था और धन के प्रति इसी मोह के कारण आपने उसे इस ज्ञान का अधिकारी नही समझा। नाना प्रकार से, सही-ओ-गलत तरीको से धन-सग्रह करने वालो—साव-धान !

किसी शिष्य से अशिष्टता हो गई और वह लज्जावश एक मस्जिद मे जा छिपा। जब एक बार आप उसके पास पहुँचे तो वह भयभीत होकर ऐसा गिरा कि सिर से खून बहने लगा और खून की हर बूँद से ईश्वर-जाप की आवाज आने लगी। आपने कहा कि यह चीज छल-कपट मे शामिल है। ऐसा जाप तो छोटे-छोटे बच्चे भी कर सकते है। यह सुनकर वह शिष्य उसी समय तडप कर मर गया। मृत्यु के बाद उसको किसी ने स्वप्न में देखकर उसका हाल पूछा तो उसने कहा कि बरसों बीत जाने के बाद भी मैं धैर्य के रहस्य से बहुत दूर हूँ और जो कुछ मैं समझता था वह सब असत्य है।

एक शिष्य बड़ा श्रद्धालु और अदबवाला (शिष्य) था। वह आपका सच्चे दिल से सम्मान करता था। उसकी सत्य-

निष्ठा के कारण आप भी उससे बडा प्रेम करते थे। इस वजह से अन्य शिष्यो के दिल मे ईर्ष्या हो गई। जब आपको उन शिष्यो के दिल का हाल मालूम हुआ तो आपने उनको सच्चाई समझाने और उनके उद्धार के लिए यह किया कि प्रत्येक शिष्य को एक मुर्गा और एक चाकू देकर हुक्म दिया कि इनको ऐसी जगह मारना जहाँ कोई देख न सके। कुछ समय के वाद तमाम शिष्य तो वध किए हुए मुर्गे लेकर आ उपस्थित हुए परन्तु वह शिष्य जीवित मुर्गा लिए हुए आया और निवेदन किया कि मुझे कोई जगह ऐसी नही मिली जहाँ ईश्वर मौजूद नही था। उस शिष्य की यह आध्यात्मिक अवस्था देख कर तमाम शिष्यो के दिल से ईर्ष्या का भाव समाप्त हो गया और उन्होने पश्चाताप-पूर्वक प्रतिज्ञा की कि फिर कभी किसी से ईर्ष्या नही करेंगे और अपने भजन मे सच्चे दिल से सलग्न हो गए।

होश

महात्मा जुनैद "होश" को "बेहोशी" से अच्छा बताते हैं। होश का अभिप्राय है—

१ मनुष्य अपने जीवन-सम्बन्धी और ईश्वर-सम्बन्धी व्यवहार को ठीक रखे, न कि दुनिया कमाने और समेटने मे बुद्धिमानी,प्रवीणता या चालाकी करे। अत. आपने कहा—"होश के अर्थ ईश्वर के साथ बन्दे के इस तरह से सही हाल होने के है कि उसमे कुछ खिलाफ न रहे। अर्थात ईश्वर की आज्ञा के विरुद्ध कोई काम करने का विचार तक न उठे।

२. वस्तुओ को उनके वास्तविक-रूप मे देखें। जो मनुष्य वस्तुओ की हकीकत समझ लेगा उसका व्यवहार स्वय ही दोष-रहित हो जायगा।

३. मनुष्य जो कुछ देखे उससे सबक ले और ज्ञान प्राप्त करे। क्योंकि यदि मनुष्य अपने चारों ओर की चीजो और घटनाओ पर मनन-चिंतन नही करेगा और उनकी यथार्थता और वास्तविकता को नही समझेगा तो उनसे चेतावनी और शिक्षा कैसे प्राप्त कर सकेगा और सबक कैसे लेगा। अतः मनन-चिंतन करने और वास्तविकता और यथार्थता को समझने के लिए बुद्धि और होश की आवश्यकता है।

प्रवचन

कभी-कभी आप इतनी ऊँची अवस्था मे बैठ कर प्रवचन करते थे कि सुनने वालों के दिलो पर आपके प्रवचन का ऐसा प्रभाव पडता था कि क्षणभर में उनकी दशा कुछ से कुछ हो जाती थी और वह अध्यात्म के ऊँचे-ऊंचे घाटो पर पहुँच जाते थे। अब जो इस ऊँचे पद की गरिमा को सहन करने के पात्र नहीं होते थे उनका बुरा हाल हो जाता था। कहा जाता है कि एक बार चालीस मनुष्यो की सभा मे आप प्रवचन कर रहे थे और उपदेश दे रहे थे तो बाइस (२२) मनुष्य तो मूर्छित हो गए और अट्ठारह (१८) स्वर्ग सिधार गए।

एक बार एक अग्निपूजक मनुष्य साधक के भेष मे आपकी प्रवचन सभा में उपस्थित हुआ और आपसे बोला कि धर्म-शास्त्रो की यह आज्ञा है कि सूफी-सत की दृष्टि से बचते रहो क्योंकि वह ईश्वर के प्रकाश मे देखता है। यह सुन कर आपने कहा—इसका अभिप्राय तो यह है कि तुझे सूफी होना चाहिए। इस चमत्कार से प्रभावित होकर वह सूफी हो गया।

कुछ वर्षों तक प्रवचन और उपदेश देने के बाद आपने यह कह प्रवचन करना और उपदेश देना त्याग दिया कि मैं

अपने आपको मृत्यु के मुख मे डालना पसन्द नही करता। परन्तु कुछ दिनो के बाद फिर प्रवचन करना और उपदेश देना शुरू कर दिया। जब लोगो ने कारण पूछा तो कहा कि मैंने एक शास्त्र मे यह देखा कि सब मनुष्यो मे से एक अति निकृष्ट मनुष्य सारी सृष्टि का जिम्मेदार बन कर प्रवचन और उपदेश के द्वारा सच्चा और हितकारी मार्ग दिखाएगा। अत: मैने अपने आपको निकृष्ट मनुष्य समझ कर प्रवचन करना और उपदेश देना आरम्भ कर दिया।

गुरु-कृपा

किसी शिष्य के दिल मे यह बुरा विचार पैदा हो गया मैं पूर्ण-पद-प्राप्त महात्मा हो गया हूँ और मुझे गुरु के सत्सग की आवश्यकता नही। इस विचार से प्रभावित होकर जब वह एकान्तवासी हो गया तो रात को स्वप्न मे देखा करता कि देवदूत ऊँट पर सवारी करके स्वर्ग की सैर कराने ले जाते हैं। धीरे-धीरे यह बात प्रसिद्ध हो गई तो महात्मा जुनैद को उसका पतन होने पर दया आ गई और उसका उद्धार करने के लिए एक दिन उसके पास पहुँच कर कहा—आज रात को जब तुम स्वर्ग मे पहुँचो तो "लाहौल" पढ़ना। (लाहौल विला कूवत इल्ला-बिल्ला) भूत-प्रेत आदि बुरी आत्माओ को भगाने के लिए पढा जाता है। अत जब उसने आपकी आज्ञानुसार लाहौल पढ़ा तो देखा कि दुरात्माएँ तो भाग गई हैं और उनकी जगह मुर्दो की हड्डियाँ पडी हैं। उसे यह निश्चय हो गया कि साधक को गुरु का सत्सग कभी नही त्यागना चाहिए, क्योकि गुरु के सत्सग से दूर रहना कातिल के समान है जो उसे कत्ल कर देता है। अत: उसने तौबा की और आपके सत्संग मे रहना शुरू कर दिया और आपकी कृपा से उसने परम पद प्राप्त किया।

एक शिष्य बसरा शहर मे एकान्तवास किए हुएथा। एक दिन उसको पूजा के समय अपने किसी पाप का विचार आ गया जिसके कारण तीन दिन तक उसका मुख काला हो गया और तीन दिन के बाद जब वह कालापन दूर हो गया तो महात्मा जुनैद का पत्र पहुँचा जिसमे लिखा था कि ईश्वर के दरबार मे अदब और शिष्टता के साथ कदम रखना चाहिए। तेरे चेहरे की सियाही धोने मे मुझे तीन दिन तक धोबी का काम करना पड़ा है।

इस सम्बन्ध मे अपने सत्सग के सिलसिले के सूफी-सत महात्मा अब्दुल गनी खाँ साहब की एक बार आप हुजूर महाराज (महान सूफी-सत महात्मा शाह फज़ल अहमद खाँ साहब) के साथ कही जा रहे थे। साथ में कुछ और सत्संगी भाई भी थे। रास्ते मे एक भाई ने कहा कि गुरु ऐसा हो जैसा कि बरतनो का जंग छुड़ाने वाला तो महात्मा अब्दुल गनीसाहब ने कहा कि कही, गुरु ऐसा हो जैसा कि धोबी। वह बराबर आपके कपडो की गन्दगी को धोता रहता है और आप बार-बार उसे गन्दा कर देते है। यह सुन कर हुजूर महाराज ने फरमाया—धोबी नही बल्कि महतर कहो। आपका मतलब यह था कि गन्दगी भी ऐसी, हमारी वासनाओ, कुवृतियो, हमारे पापो की गन्दगी, जो मल-मूत्र के समान होती है। उसे गुरु साफ़ करता है।

इख्तियार (वश, अधिकार)

परमेश्वर चाहता तो दूसरे जीवो की तरह मनुष्य को भी इख्तियार और विचारने की शक्ति से वचित रखता।

परन्तु दयालु परमेश्वर ने मनुष्य को इख्तियार और विचार की शक्ति प्रदान की है। और मनुष्य को इसके लिए ईश्वर का धन्यवाद ही नही देना चाहिए बल्कि उसका कर्तब्य है कि वह जहॉ तक उसका वश चले ईश्वर की रजा के मार्ग को अपने लिए पसन्द करे और ग्रहण करे। महात्मा जुनैद को एक बार बुखार आया तो आपने ईश्वर से विनय की—हे ईश्वर, मुझे इससे स्वास्थ्य प्रदान कर आपके अन्दर से आवाज आई–तू कौन है जो हमारी सम्पत्ति मे दखल देता है। हम अपनी सम्पत्ति के प्रबन्ध को तुझसे अधिक अच्छी तरह जानते है। तेरा कर्तव्य हमारे अधिकार को स्वीकार करना है, न कि अपने अधिकार को हमारे कामो मे दखल देने के लिए इस्तेमाल करना।

विलायत और करामात

(ईश्वर का सामीप्य और चमत्कार)

एक मनुष्य ने सुना कि महात्मा जुनैद विलायत और करामात वाले महात्मा है। वह बड़ा लम्बा सफर तय करके बड़े शौक और श्रद्धा के साथ आपके दर्शन के लिए आया। कुछ दिन वहाँ ठहरने के वाद उसने वापस जाने के लिए आज्ञा मॉगी तो महात्मा जुनैद ने उससे पूछा कि आप इतने दिन यहाँ रहे लेकिन कुछ नहीं बताया कि आप किस लिए आए थे और अब कैसे वापस जा रहे है। उस मनुष्य ने जवाब दिया कि मै तो वास्तव मे यह सुन कर आया था कि आप बड़े विलायत वाले और करामात वाले अर्थात् ईश्वर-सामीप्य प्राप्त और चमत्कारी महात्मा है, परन्तु मैने तो इतने दिनो मे आपकी विलायत और करामात कुछ भी नही देखी। इसलिए अब वापस जा रहा हूँ। आपने उससे पूछा—क्या आपने मुझमे कोई

चीज ईश्वर और शास्त्रों की आज्ञाओ के विरुद्ध पाई है। उस मनुष्य ने कहा कि नही, ऐसी तो कोई चीज मैंने नही देखी। महात्मा जुनैद ने फरमाया—वस फिर जुनैद की विलायत और करामात तो यही है।

तीर्थ, भण्डारा अथवा गुरु-दर्शन के लिए

तीर्थ अथवा भण्डारे अथवा गुरु-दर्शन करने जाने का वह क्या तरीका है जिससे मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है। इस रहस्य पर से पर्दा उठाते हुए सूफी-सत महात्मा हिजवीरी ने लिखा है कि एक मनुष्य महात्मा जुनैद की सेवा मे उपस्थित हुआ। आपने उस मनुष्य से पूछा कि तुम कहाँ से आए हो। उसने कहा कि तीर्थ-दर्शन करके आया हूँ। आपने उसके व्यवहार आदि को देख कर आश्चर्य से पूछा—क्या तूने वास्तव मे तीर्थ-दर्शन किया है। उसने कहा—जी हाँ। महात्मा जुनैद ने फिर उससे तूछा—जब तूने तीर्थ-यात्रा के लिए घर से कूच किया तो क्या तूने उस समय अपने पापो से भी कूच किया या नही। उस मनुष्य ने जवाव दिया कि नही, मैने इसका तो ख्याल नही किया। आपने फरमाया—फिर तो तू तीर्थ-यात्रा के लिए घर से चला ही नही। आपने फिर पूछा—इस सफर में तूने जो मंजिले तय की और रातो को जो मुकाम पडाव, हर साधक के लिए ईश्वर के दरबार में एक विशेष-स्थान निश्चित होता है, ज्यों-ज्यो साधक साधना मे आगे बढता जाता है उसको ईश्वर के समीप स्थान मिलता जाता है—इस विशेष स्थान को मुकाम कहते है तय किए तो क्या ईश्वर की समीपता की मजिलें और अध्यात्म-मार्ग के मुकामो को तय करने की भी कोशिश की। उसने जवाव दिया कि इस बात की तो मैने क़ोशिश नही की। महात्मा जुनैद ने कहा—फिर तो तुमने

ईश्वर के घर की तरफ सफर भी नही किया और न ही इस राह की कोई मजिल ही तय की। फिर आपने पूछा—जब तुमने तीर्थ की विशेष पौशाक पहनी और रोजमर्रा के कपडे उतारे तो क्या उनके साथ अपने दुर्गुणो और बुरी आदतो को भी त्यागा या नही। उसने कहा कि इस तरफ तो मैने ध्यान नही दिया। आपने कहा–फिर तो तुमने तीर्थ के नए-साफ कपड़े भी नही पहने। इसके बाद महात्मा जुनैद ने उस मनुष्य से पूछा–जब तू तीर्थ-स्थान पर ध्यान मे बैठा तो क्या तूने अपने अन्दर यह कैफियत (अवस्था) पाई या नही कि गोया तू ईश्वर को अपने सामने मौजूद देख रहा है। उसने कहा कि नहीं, ऐसा तो नही हुआ। आपने फरमाया—फिर तो गोया तू उस पवित्र-स्थान पर गया ही नहीं और न ही तूने वहाँ पहुँच कर ध्यान किया। फिर आपने पूछा—जब तूने उस पवित्र-स्थान पर अन्य पूजा-पाठ किया तो क्या तूने सांसारिक इच्छाएँ त्यागी या नही उसने जवाब दिया कि मैंने इस तरफ ध्यान नही दिया। आपने कहा—फिर तो तूने उस पवित्र-स्थान पर पूजा-पाठ भी नही किया। इसके बाद आपने उससे पूछा—जब तूने तीर्थ-स्थान की परिकमा की तो क्या उस समय तूने ईश्वरीय सौन्दर्य और विभूतियो के दर्शन किए या नही। उसने कहा कि नहीं, मैंने ऐसी तो कोई चीज नही देखी। आपने कहा—फिर तो तूने परिक्रमा भी नही की। फिर आपने पूछा—जिस समय तूने बलि देने की जगह बलि दी तो उस जगह अपने अह को भी ईश्वर की राह मे कुरबान किया या नही। उसने कहा कि नही, इस तरफ भी मेरा ध्यान नही गया। आपने फरमाया–बस फिर तूने कुरबानी भी नही की। फिर आपने पूछा—जब वापस आते समय तूने तीर्थ-स्थल पर मस्तक झुका कर ईश्वर को प्रणाम

किया तो क्या तूने अपने बुरे साथियो और अपनी बुराइयो को भी अलविदा कहा या नही। उसने कहा कि नही। आपने फरमाया-फ़िर तो तूने ईश्वर को प्रणाम भी नही किया। इसके बाद महात्मा जुनैद ने उस मनुष्य से कहा—वापस जाओ और इन बातो के अनुसार फिर तीर्थ-दर्शन करो।

तीर्थ अथवा भण्डारे अथवा गुरु-दर्शन करने का तरीका तो हमने पढ लिया, परन्तु क्या हम यह भी जानते है कि गुनाहो से किनारा करना, ईश्वर की समीपता की मजिले तय करना आदि ऊपर लिखी सब बातो को कैसे किया जाता है। यदि नहीं तो किसी जानकार से पूछ कर सीखना होगा क्योकि यह बाते रहस्यपूर्ण है, पढने से समझ मे नही आएँगी। निश्चय जानिए जब तक दर्शन करने का सही तरीका अख्तयार नहीं करोगे, दर्शन-लाभ जो होना चाहिए, होगा नही, फिर चाहे हर पल दर्शन करो, चाहे हर रोज दर्शन करो, चाहे हर हफ्ते दर्शन करो, चाहे हर महीने दर्शन करो

नमाज

महात्मा जुनैद बूढ़े हो गए परन्तु जवानी के समय किए जाने वाले प्रतिदिन के कार्यक्रमो मे से कोई कार्यक्रम आपने नही छोडा। शिष्यो ने विनय की–ऐ शेख आप बहुत कमजोर हो गए है। फर्ज नमाजो से अधिक नमाजे पढने मे कुछ कमी कर दीजिए। आपने कहा कि जिन चीजो की वजह से मैं इस पद को पहुँचा हूँ अब अन्तिम अवस्था मे इन्हे कैसे छोड दूँ।

दिल में या मुख से निन्दा करना

किसी भिखारी ने आपसे भीख माँगी तो आपके दिल मे यह विचार आया कि जब यह मनुष्य मजदूरी कर सकता है तो

इसको भीख माँगना उचित नही। परन्तु उसी रात आपने स्वप्न् मे देखा कि तश्तरी से ढका हुआ एक बरतन आपके सामने रखा हुआ है और आपको हुक्म दिया जा रहा है कि इसको खालो। अतः जिस समय आपने वह बरतन खोल कर देखा तो वही भिखारी मुर्दा पड़ा हुआ है। यह देख कर आपने कहा कि मैं तो मुर्दा-खाने वाला नही हूँ। आवाज आई-फिर दिन मे इसको क्यो खाया था। आपको ख्याल आ गया कि मैंने इसकी बुराई की थी और यह उसी अपराध की सजा है।

कई बार आपने भी देखा होगा कि कोई भिखारी आवाज लगाता है भगवान के नाम पर कुछ दे दो बाबा। और जब आप देखते है कि अच्छा हट्टा-कट्टा मनुष्य है फिर भी भीख माँग रहा है तो आप भी महात्मा जुनैद की तरह ही स्वभाविक रूप से सोचने लगते हैं। इस सम्बन्ध मे एक महात्मा ने बड़ी अच्छी बात कही है। वह कहते है कि यदि वह भगवान का नाम लेकर गलत काम कर रहा है तो वह भगवान का कसूरवार है और वही उसको सजा देगा। तुम कौन होते हो उसे बुरा-भला कहने वाले। यदि हो सके तो उसे कुछ दे दो और अपना काम देखो। परन्तु उसकी बुराई अपने दिल मे या मुख से किसी हाल मे भी न करो।

इस सम्बन्ध मे परम पूज्य पडितजी महाराज भी अकसर कहा करते थे कि भिखारी को कुछ न कुछ अवश्य दे दो इस बात की तरफ ध्यान न दो कि यह तन्दुरुस्त है और कमा के खा सकता या बनावटी भिखारी है—बस उसे जरूर कुछ न कुछ दे दो। "जरूर" शब्द पर आप बहुत जोर दिया करते थे।

ईश्वर कृपा

एक रात आपका दिल भजन-पूजन से उचाट हो गया।

अतः आप बाहर निकले तो देखा कि दरवाजे पर एक आदमी कम्वल लपेटे बैठा हुआ है। आपने उसको देखते ही कहा कि भजन-पूजन से दिल उचाट होने की वजह शायद तुम्हारा इन्तजार करना है। उसने निवेदन किया कि नफ्स (वासनामय-मन) का क्या इलाज है। आपने फरमाया—नफ्स का विरोध करना इसका एक मात्र उपाय है। यह सुन कर वह मनुष्य वहाँ से उठा और एक ओर को चला गया। परन्तु यह मालूम न हो सका कि वह कौन था। इसके वाद जब आपने भजन-पूजा शुरू किया तो फिर आपका दिल पूजा मे लग गया। यद्यपि आपको नफ्स का इलाज मालूम था कि यदि मन भजन-पूजन से उचाट हो तो उसके विरोध-स्वरूप और भी अधिक श्रद्धा और प्रेम-भाव से भजन-पूजन करना चाहिए। परन्तु आप मन की माया मे फस गए और पूजा छोड कर बाहर निकल आए। अब चूंकि अपने भक्त की योग-क्षेम का ध्यान ईश्वर रखता है, अतः जैसे ही आप पूजा छोड़ कर बाहर निकले तो वहाँ एक अनजान मनुष्य को बैठा हुआ देखा और मन ने उनको भ्रमित करने के लिए तुरन्त उनके दिल मे एक खयाल पैदा किया कि शायद पूजा मे मेरे मन के न लगने का कारण इस मनुष्य का इन्तजार करना है। परन्तु उस मनुष्य ने ऐसा रहस्यपूर्ण प्रश्न पूछा कि आपको मन का दोषपूर्ण व्यवहार और उसके इलाज का स्मरण हो आया और आप फिर भजन-पूजन मे सलग्न हो गए और आपका मन भी पूजा मे लग गया। फिर भी उस समय आप यह न समझ पाए कि वह मनुष्य जो मुसीबत मे काम आए भटके हुओ को रास्ता दिखाए, खतरे के समय रक्षा करे, सिवाय ईश्वर के भला और कौन हो सकता है।

जाहि विधि राखे राम

एक बार आप कुछ शिष्यो के साथ यात्रा करते हुए जंगल से गुजर रहे थे। गर्मी की अधिकता के कारण एक शिष्य की नकसीर फूट गई तो उसने आपसे गर्मी की शिकायत की। आपने क्रोधित होकर कहा कि तुम ईश्वर की शिकायत करते। हो। मेरी नजरो से दूर हो जाओ और अब कभी मेरे साथ न रहना। अरे, साधक को ईश्वर की खुशी मे खुश रहना और कष्ट में भी उसका शुक्र अदा करना चाहिए—

यह शर्त भी लगाई गई है वफा के साथ
सहने पड़ेंगे रंज भी शुक्रे-खुदा के साथ

—गाफिल बरनी

किसी ने आप से नगा-भूखा रहने की शिकायत की तो आपने कहा कि ईश्वर तुझे हमेशा नंगा-भूखा रखे, क्योकि यह नैमत (ईश्वर की देन और कृपा) तो वह अपने चुने हुए खास भक्तो ही को प्रदान करता है और वह कभी इसकी शिकायत नही करते।

परिभाषाएँ

सूफी-संत महात्मा जुनैद ने आध्यात्मिक शब्दो की सूफीमत के अनुसार परिभाषा की हैं। साधको को विभिन्न आध्यात्मिक-अवस्थाओ को सही रूप मे समझने के लिए इन शब्दो के आध्यात्मिक अर्थ जानना बहुत जरूरी है। क्योकि इन शब्दो के जो सासारिक अर्थ है वह अध्यात्म मे नही होते। जैसे "वक्त" का अर्थ है "समय"। परन्तु अध्यात्म मे 'वक्त" उस समय को कहते है जब साधक ईश्वर-मिलन की अवस्था

में होता है। अतः जब कोई सूफी साधक दूसरे सूफी साधक से पूछता है—कैसा वक्त गुजर रहा है, और वह उत्तर देता है—अच्छा वक्त गुजर रहा है, तो प्रश्न पूछने वाला समझ लेता है कि उसकी साधना का समय ईश्वर-मिलन की अवस्था मे गुजर रहा है, आदि।

तसव्वुफ (सूफीमत) और सूफी

ईश्वर के अतिरिक्त हर चीज को छोडकर अह को समाप्त कर लेने का नाम 'तसव्वुफ'' है।

तसव्वुफ नाम है सृष्टि से सृष्टा की तरफ सच्चे दिल से झुकाव होने, शास्त्र और ईश्वर और अपने गुरु की आज्ञा-पालन करने और भजन-पूजन मे लगे रहने का।

जिस समय महात्मा रवेंयम ने संत जुनैद से तसव्वुफ की यथार्थता के बारे मे प्रश्न किया तो आपने कहा कि तसव्वुफ की यथार्थता की खोज करने के बजाए अपनी जात (स्वरूप) में तसव्वुफ (अर्थात् पवित्रता और सफाई) तलाश करो। क्योकि सूफी वही है जिसको ईश्वर के सिवा कोई न जानता हो।

संत जुनैद के एक श्रद्धालु का कहना है कि सूफी उसको कहते हैं जो अपनी सब पहचानो को समाप्त करके ईश्वर को प्राप्त कर ले।

मारफत (अध्यात्म-ज्ञान)

मारफत की दो किस्में है—

१. मारफत-ए-तारीफ अर्थात् स्वयं ईश्वर को पहचानना, और

२ मारफत-ए-तसरीफ अर्थात् ईश्वर उसको पहचाने।

अबूदियत

अबूदियत "अब्द" से बना है। अब्द के अर्थ है—दास। जसे अब्दुल्ला = अब्द + अल्लाह, अर्थात् अल्लाह का दास।

अबूदियत मे साधक अपने हृदय को पवित्र करने की चेष्टा मे लगता है जिससे कि वह आगे की ओर बढ सके।

अबूदियत का अर्थ है साधक का परमात्मा की सेवा में अपने को लगा देना। अत. सासारिक कर्तव्य-कर्मों के अतिरिक्त जो मन-बहलाव के काम है उन्हे त्यागने और ईश्वर-भजन मे तल्लीन रहने का नाम अबूदियत है।

रबूबियत

रबूबियत "रब" से बना है। रब के अर्थ हैं—ईश्वर जो पालन-पोषण करता है। हिन्दू धर्म मे ईश्वर के जिस रूप को 'विष्णु" शब्द से जानते हैं, इसलाम धर्म मे उसको "रब" कहते हैं। अत. रबूबियत के अर्थ है—ईश्वर का पालन-पोषण करने वाला गुण।

मुशाहिदा (ईश्वर की विभूतियों का दर्शन)

१ किसी चीज के यथार्थ-स्वरूप के ज्ञान का नाम मुशाहिदा है।

२ वज्द (आनन्दातिरेक की अवस्था) को मिटाकर अस्तित्व-हीन होने का नाम मुशाहिदा है। क्योकि वज्द जीवन प्रदान करता है और मुशाहिदा फनाइयत (परमात्मा और

जीवात्मा अथवा उपास्य और उपासक का अभेद होना फनाइयत है) प्रदान करता है।

३ मुशाहिदा अबूदियत (साधक का दास्य-भाव) को समाप्त करके रबूबियत (ईश्वर का पालन-पोषण करने वाला रूप) की तरफ ले जाता है।

इस गूढ रहस्य का तात्पर्य यह है कि ईश्वर-दर्शन के पश्चात् साधक का दास्य-भाव मिट जाता है अर्थात् उसकी यह शंका समाप्त हो जाती है कि पता नही मालिक (ईश्वर) मेरी सेवा (भजन-पूजा) को स्वीकार करके मुझ पर कृपा करेगा या नही और मेरा पालन-पोषण (आध्यात्मिक देख-रेख और तरक्की) कैसे होगी, आदि। वरन् जब वह अपनी आँखो से ईश्वर-दर्शन कर लेता है तो उसकी सब शंकाये मिट जाती है और उसको ईश्वर की कृपा और दया पर पूर्ण विश्वास हो जाता है और वह इस सत्य को जान लेता है कि संसार का पालन-पोषण करने वाला ईश्वर है। यही बात शिष्य के विषय मे भी सही है। जब शिष्य को गुरु के यथार्थ-रूप के दर्शन हो जाते है तो उसकी सारी शकाये मिट जाती है और वह साफ-साफ इस रहस्य को साक्षात् अपनी आँखो से देखता है कि जिस गुरु को वह अभी तक मनुष्य समझ रहा था, वास्तव मे वही ईश्वर है—ईश्वर जो बडा दयालु और कृपालु है।

मुराकबा (ध्यान)

मुराकबा नाम है तबाही पर अफसोस करने का और मुराकबा की परिभाषा यह है कि गायब (अदृश्य) का इन्तजार रहे।

हया (लज्जा)

हाजिर (दृश्यमान) से शर्म करने का नाम हया है।

यकीन (विश्वास)

यकीन नाम है ज्ञान का हृदय मे इस तरह स्थापित हो जाने का जिसमे न तो परिवर्तन हो और न ही कोई अन्य बात से उसे बदल सके।

और यकीन का अर्थ यह है कि अहकार को त्याग करके संसार से बेपरवाह (उदासीन) हो जाय।

सब्र-व-तवक्कुल (धैर्य और भरोसा)

सब्र की परिभाषा यह है कि जो प्राणी-मात्र से दूर करके ईश्वर के निकट कर दे। और तवक्कुल का अर्थ यह है कि तुम ईश्वर के लिए ऐसे बन जाओ जैसे मृत्यु के दिन बन जाओगे। अर्थात् जैसे मृत शरीर पूर्णरूप से ससार वालो पर निर्भर रहता है, जैसा चाहे उसके साथ बर्ताव करें—चाहे जलाएँ, गाढे, नदी मे बहाएँ, पशु-पक्षियो के खाने के लिए छोड़ दें—परन्तु वह दखल नही देता। इसी प्रकार साधक को जैसे ईश्वर रखे उसे मृत-शरीर की तरह रहना चाहिए। परन्तु चूँकि वह जीवित है और सोचने-समझने की शक्ति रखता है, अत उसे चाहिए कि ईश्वर की मर्जी के अनुसार रहे, और खुश रहे—किसी प्रकार की शिकायत न तो मुँह से करे और न दिल से करे।

तवक्कुल सब्र की पराकाष्टा का नाम है। जैसा कि ईश्वर का वचन है—"वह जो लोग सब्र करते है अपने ईश्वर पर तवक्कुल करते हैं।"

सूफ मत के अनुसार प्राणीमात्र (ससार) से दूर रहने के अर्थ हैं कि साधक ससार के सारे कार्य निःस्वार्थ और निष्काम-भाव से करे। यह नही कि परिवार और समाज से दूर भाग कर किसी जगल मे या पर्वत पर चला जाय। सूफी कहते है क्या जगल में या पर्वत पर संसार नही है—आखिर जीवित रहने के लिए वह किसी की मदद तो लेगा ही—कुछ खाएगा, पिएगा, कही रहेगा—यह सब संसार नही तो और क्या है।

रजा (ईश्वर की खुशी में खुश रहना)

अपने अधिकारों को समाप्त करके कष्टो और मुसीबतो को ईश्वर की दैन और कृपा समझने का नाम "रजा" है।

मुहब्बत (प्रेम)

मुहब्बत का अर्थ यह है कि प्रेयसी के तमाम गुण प्रेमी में आ जाएँ।

उन्स (पवित्र प्रेमपूर्ण लगाव)

मान-प्रतिष्ठा को समाप्त कर देने का नाम उन्स है। (अर्थात् किसी से प्रेमपूर्ण पवित्र लगाव और मैत्री हो जाने पर उससे अपनी मान-प्रतिष्ठा की आशा करने के बजाए हमे ही खुद उसकी मान-प्रतिष्ठा का ध्यान रखना चाहिए)।

इखलास (पवित्रता)

इखलास का अर्थ यह है कि अपने अच्छे से अच्छे कर्म को ईश्वर-द्वारा स्वीकार कर लिए जाने के अयोग्य समझते हुए अपने अहं को मिटा डाले।

शफ़कत (अनुग्रह)

शफकत का अर्थ यह है कि अपनी अच्छी से अच्छी चीज भी दूसरे को देकर अहसान न जताए।

बन्दा

बन्दा वही है जो ईश्वर के सिवा किसी और की पूजा न करे।

तवाजै (आदर सम्मान)

तवाजै का अर्थ सिर झुका कर रखने और जमीन पर सोने का है। अर्थात् विनम्र रहने और अपने आपको सबसे छोटा समझने का नाम तवाजै है।

तौहीद (एक मानना, एक जानना)

तौहीद ईश्वर को जानने का नाम है और तौहीद की पराकाष्ठा यह है कि जिस सीमा तक भी तौहीद का ज्ञान हो उसको यही ख्याल करे कि तौहीद उससे भी परे है।

महात्मा जुनैद तौहीद के बारे मे फरमाते है कि तौहीद हादिस (नवीन और नाशवान) से कदीम (प्राचीन और अविनाशी) का जुदा करना है। ईश्वर कदीम है और उसके सिवा सब कुछ हादिस है। अत तौहीद के अर्थ यह है कि न तो ईश्वर के किसी गुण की किसी हादिस चीज अर्थात् सृष्टि से तुलना करे और न सृष्टि के गुणो की ईश्वर से तुलना करे। ईश्वर सृष्टि के अस्तित्व मे आने से पहले मौजूद था और उनमे से किसी का मौहताज (किसी पर आश्रित) न था। उनके अस्तित्व मे आने के बाद भी वह उनमे किसी पर आश्रित नही

है। जब उसे तुम्हे अनस्तित्व से अस्तित्व में लाने के लिए किसी साझी और सहायक की आवश्यकता नही हुई तो यह कैसे हो सकता है कि तुम्हारा पालन-पोषण करने या फिर तुम्हारा संहार करने के लिए उसे किसी साझी और सहायक की आवश्यकता हो। इसलिए बन्दे के लिए उचित नही है कि सृष्टि की किसी वस्तु को उसके साथ या उसका किसी वस्तु के साथ मिलान अथवा तुलना करे ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से प्रेम करे और उसकी याद और भक्ति के बगैर आराम और शान्ति पाए।

ईमान

ईमान मुख से स्वीकृति और हृदय से समर्थन करने का नाम है।

शब्दकोष मे ईमान का अर्थ है—किसी बात की दिलो-जान से पुष्टि और समर्थन करना और उसके बारे में पक्का विश्वास रखना और ईश्वर को प्रिय होने और ईश्वर के सामीप्य के सिलसिले मे "ईमान" बुनियादी चीज है। ईमान के बगैर बन्दे का कोई भजन-पूजन, उसका कोई कर्म और उसकी तरफ से कोई बड़ी से बडी शारीरिक अथवा धन की भेंट और त्याग अर्थात् तपस्या स्वीकार नही होती।

वास्तव मे ईमान नाम ही इस चीज का है कि साधक की सारी इन्द्रियां ईश्वर की खोज और उसके दर्शन करने तथा ईश्वर की इच्छानुसार जीवन-यापन करने मे लगे हुए हों।

तौबा

तौबा नाम है अत्याचार, पाप और द्वेष को दृढ़ निश्चय के साथ त्याग देने का।

तौबा के अर्थ ईश्वर के भय से उसकी आज्ञाओ के उलंघन करने पर लज्जित होने और अवज्ञा न करने का संकल्प करके ईश्वर की तरफ प्रवत्त होने के हैं। और ईश्वर के रास्ते पर चलने वालो के लिए इस राह का सबसे पहला कदम तौबा है।

तौबा करने से मनुष्य को इस वजह से परहेज न करना चाहिए कि उसे उस पर दृढ रहना कठिन दिखाई देता है। जितने समय वह अवज्ञा से बचता रहेगा उसका फल और पुण्य तो कम से कम उसे प्राप्त होगा। तौबा की शर्त यह है कि मनुष्य का अपना पक्का इरादा हो कि वह फिर इस पाप को नही करेगा। फिर भी तौबा करने वालो को इससे वास्ता पडता है कि उन्होने तौबा की और फिर कुछ समय बाद गफ-लत (असावधानी) की वजह से वही पाप कर बैठे जिससे तौबा की थी। इस हालत मे होना यह चाहिए कि ज्यो ही गलती का अहसास हो तुरन्त तौबा करे और शर्मिन्दा हो और फिर दुबारा उस पाप से बचते रहने का नए सिरे से दृढ निश्चय करे।

एक महात्मा कहते है कि मैंने जिस पाप से तौबा की मुझ से वही पाप बार-बार होता रहा। यहाँ तक कि सत्तर (७०) बार मेरी तौबा टूटी और इकहत्तरवी (७१) बार तौबा करने के बाद मुझे दृढता प्राप्त हुई। तौबा करने वालो के लिए परमेश्वर का दरवाजा हमेशा खुला है और वह उसकी कृपा और दया से निराश न हो क्योकि वह सच्चे दिल से तौबा करने वालो के सारे पाप क्षमा कर देता है। वह ऐसा कृपालु और दयालु है।

महात्मा जुनैद कहते हैं कि मैंने आरम्भ मे सूफी-सत महात्मा अबू उसमान हीरी की सभा में तौबा की। लेकिन

थोड़े ही दिन गुजरे कि दिल मे पाप की इच्छा पैदा हुई और तौबा तोड़ दी और पापो मे ग्रसित हो गया। इसके बाद अपने गुरु के सत्संग से मुँह छिपाने लगा, यहाँ तक कि उनको कभी आते हुए दूर से देखता तो भाग जाता कि वह मुझे देख न ले। एक दिन अचानक उनसे भेट हो गई। उन्होने कहा—बेटा, अपने दुश्मनो की सगत मे न रह। वह चाहते है कि तू बुरे से बुरा होता चला जाय। इसलिए जब तू ऐब करता है तो वह खुश होते है और तू उनसे बचता है तो उनको दुख होता है। तू मेरे पास आ कि मैं तेरी विपदाएँ अपने ऊपर लेलूँ और तू अपने दुश्मन के उद्देश्य को पूरा करने से बच जाय। महात्मा जुनंद कहते है कि इसके बाद मेरा दिल पाप करने से भर गया और मेरी तौबा पक्की हो गई।

रोजा (वृत, उपवास)

महात्मा जुनैद ने कहा है—"रोजा आधी तरीकत है" (अर्थात् आधी आध्यात्मिक यात्रा है)। क्योकि रोजा मे छल-कपट और दिखावे को दखल नही है। आन्तरिक सच्चाई और पवित्रता के बिना मनुष्य रोजा रख ही नही सकता।

समस्त पूजाओ मे रोजे का विशेष महत्व इसलिए है कि रोजा ही एक ऐसी पूजा है जो आरम्भ से अन्त तक रहस्यमयी, पूर्णत: छिपी हुई तथा छोटी से छोटी बातो को सुनने वाला सर्वोच्य न्यायालय है, जिसका बाह्याचार से कोई सम्बन्ध नही। जिसमें ईश्वर के अलावा किसी दूसरे का कोई हिस्सा नही क्योकि यह केवल ईश्वर की खातिर ही रखा जाता है। रोजा एक ऐसी पूजा है कि यदि किसी के दिल मे ईश्वर का भय न हो तो वह बड़ी आसानी के साथ सब कुछ खा-पीकर भी

लोगो के सामने रोजादार और अत्यधिक सयमी और पूर्णरूप से ईश्वर से डरने वाला बना रह सकता है। और रोजे की चोरी ईश्वर के सिवा कोई नही पकड़ सकता है।

रोजे की यथार्थता और वास्तविकता "स्तभन" है अर्थात् अपने वासनामय मन (नफ्स) की इच्छाओ को रोकना और काबू में रखना। और सारी तरीकत (आध्यात्मिक यात्रा) इसी मे छिपी हुई है। इसलिए महात्मा जुनैद ने इसे "आधी आध्यात्मिक यात्रा" कहा है। तमाम भजन-पूजा एक तरफ और रोजा एक तरफ।

वक्त

वसे तो "वक्त" का अर्थ है "समय", परन्तु सूफियो के यहाँ "वक्त" का मतलब उस समय से होता है जब भक्त ईश्वर के साथ मिलन की अवस्था मे होता है। उस समय उसका अपना अस्तित्व सहित सारा संसार उससे विस्मृत होते है। भूत, वर्तमान और भविष्य तीनो कालो से वह निश्चिन्त और निवृत्त होता है। अपने अधिकार और विचारो से पूर्णतः अलग होकर वह अपने आपको ईश्वर की इच्छा और आज्ञा के सुपुर्द कर देता है। ईश्वर के रहस्यो का भेद इसी अवस्था मे खुलता है। यह भक्त के लिए ऐसी अद्वितीय आनन्द और शान्ति की अवस्था है कि इसके बदले वह किसी दूसरी चीज को प्रसन्नता से स्वीकार करने के लिए तैयार नही होता। इस सम्बन्ध मे महात्मा जुनैद कहते है कि मैंने एक दरवेश को जंगल मे देखा। वह एक कीकर के पेड़ के नीचे बहुत ही सख्त और ऊबड-खाबड जगह पर बडी तकलीफ की हालत मे बैठा हुआ था। मैंने उससे पूछा—भाई, यहाँ इस हाल मे क्यो बैठा

है। उसने जवाब दिया—मुझे परमेश्वर के लोक मे "वक्त" (ईश्वर-मिलन) प्राप्त हुआ था जिसे मैंने यहाँ खो दिया। उसके बाद से यही बैठा हूँ। मैंने पूछा—तू यहाँ कब से बैठा है। उसने कहा कि बारह वर्ष हो गए है फिर वह "वक्त" प्राप्त नही हुआ। मेरे लिए ईश्वर से प्रार्थना करने की कृपा करे। महात्मा जुनैद कहते हैं कि मै हज के लिए गया और मैंने वहाँ उसके लिए प्रार्थना की जो दयालु ईश्वर ने स्वीकार करली और उस मनुष्य को अपना मनोरथ प्राप्त हो गया। परन्तु जब मै वापिस आया तो वह मनुष्य उसी जगह बैठा मिला। मैंने उससे पूछा—ऐ जवान, अपना मनोरथ प्राप्त कर लेने के बाद अब क्यों यहाँ बैठा है। उसने जवाब दिया—जिस स्थान पर मैंने अपनी खोई हुई सम्पत्ति को पाया है उस स्थान को कैसे छोड़ दूं। अब तो मैं अपनी खाक को इसी खाक मे मिलाऊँगा ताकि कयामत के दिन इसी खाक से अपना सिर निकालूं।

इस कथा से अन्दाजा किया जा सकता है कि ईश्वर भक्तो के लिए "वक्त" कितनी महत्वपूर्ण अवस्था है। तथा गोपियाँ वृन्दावन की गलियो मे क्यों आँसू बहाती फिरा करती थी। इसका कारण यही था कि उन्होने जो कुछ पाया था इन्ही गली-कूचो में पाया था अर्थात् उन्हे "वक्त" (ईश्वर-मिलन) यही प्राप्त हुआ था।

समाअ (संगीत)

समाअ के अर्थ "सुनना" है। जिस गद्य या पद्य के सुनने से साधक ईश्वर-मार्ग पर चलने से विमुख हो जाय उसे सुनना साधक के लिए मना है। सूफीमत में "समाअ" राग या गाना सुनने के अर्थ में प्रयुक्त होता है और जिस गाने के सुनने से

ईश्वर-भक्ति बढे उसका सुनना ही उचित माना जाता है। राग या गाने को सगीत के किसी साज के बगैर केवल मधुर आवाज मे गाना चाहिए।

महात्मा जुनैद ने अपने एक शिष्य को चेतावनी दी कि यदि तू अपने धर्म को सही-सलामत रखना चाहता है और अपनी तौबा की रक्षा करना चाहता है तो सूफियो की सगीत-सभा मे कभी शामिल न होना। जब तक तू जवान है अपने आपको "समाअ" के अयोग्य समझ कर इसको कभी नही सुनना, और जब तू बूढा हो जाय तो कोई मूर्खतापूर्ण काम न करना। महात्मा जुनैद का इस उपदेश से यह आशय था मानो "समाअ" जवानो के लिए "उपद्रव" और बूढो के लिए एक मूर्खतापूर्ण काम है।

फिर भी सूफी-सतो ने सगीत सुनने की इजाजत इस कारण दी कि एक तो सगीत बडा प्रभावशाली होता है और इससे मनुष्य के हृदय की दशा बहुत शीघ्र बदल जाती है, और दूसरे, हद से ज्यादा पाबन्दियाँ लगाने से भी इन्सान की तबीअत विद्रोह की तरफ झुकने लगती है और सुधार के बजाय झगड़े-फिसाद के मार्ग पर पड़ जाती है। अत· सही राह सतुलन और मध्य-मार्ग को अपनाना है। इस वजह से सूफी-सतो ने ऐसा सगीत, जो पाप-कर्म करने पर उभारने वाला न हो, सुनने के कुछ नियम बना दिए है और इनका दृढता से पालन करते हुए साधक सगीत सुन सकता है। महात्मा हिजवीरी के अनुसार मुख्य-मुख्य नियम है—

१ मनुष्य की तबीअत सगीत सुनने के समय मनोरजन की तरफ आकृष्ट न हो, बल्कि दृढ-रूप से मनोरजन से नफरत

करने वाली हो।' इसका आशय यह है कि संगीत सुनने का कारण केवल हृदय में नम्रता पैदा करना हो या रूह मे कपकपी पैदा करने के लिए सगीत सुनने को बाहर से गति देने के तौर पर इस्तैमाल करना हो।

२ ऊपर वर्णित कारण की आवश्यकता के बगैर सगीत न सुने और न उसको आदत बनाए। कभी-कभार उससे मदद ले।

३ सगीत सुनने के समय यह अनिवार्य है कि सगीत की सभा में गुरु उपस्थित हो।

४. सगीत-सभा मे सर्व-साधारण न हो।

५. कव्वाल (गायक) ऐसे हो जिनकी, सुनने वालो के दिल में मान और प्रतिष्ठा हो।

६ हर प्रकार की औपचारिकता और बनावट से हृदय पाक-साफ हो, पवित्र हो और समस्त कामो से अलग होकर दिल ईश्वर की तरफ एकाग्र हो चुका हो।

७ नए-नए साधको को सगीत-सभा मे बैठाया न जाय।

८. नवयुवको को भी सगीत-सभा मे न शामिल किया जाय ताकि ऐसा न हो कि पाखण्डी सूफी इसको मिसाल बनाकर अपना तरीका बना ले और यथार्थ तथा वास्तविकता को गुम करके केवल वाह्य बातो को लेकर लोगो को गुमराह करते फिरे।

९ कव्वालो के गाने की अच्छाई या बुराई को प्रकट न करे। अच्छा गा रहे हो तो और बुरा गा रहे हो तो, ईश्वर को

सौप दे। और न ही किसी दूसरे मनुष्य के सगीत सुनने में दखल दे।

१०. सगीत सुनने से जो आनन्द की अवस्था पैदा हो उसे न तो जबरदस्ती अपने से दूर करने की कोशिश करे और न ही बनावटी तौर पर उसे बढाने की कोशिश करे।

मुरीद-व-मुराद

मुरीद वह है जो अपने ज्ञान की निगरानी रखे और मुराद वह है जिसको ईश्वर-कृपा प्राप्त हो। मुरीद तो दौड़ने वाला होता है और मुराद उडने वाला, और दौडने वाला कभी उडने वाले का मुकाबला नही कर सकता।

प्रार्थना

आप अपनी प्रार्थना इस तरह आरम्भ करते—हे ईश्वर, प्रलय के दिन मुझे अन्धा करके उठाना, इसलिए कि जिसके भाग्य मे आपका दर्शन न हो उसका अन्धा रहना न्यायपूर्ण है ताकि वह किसी दूसरी चीज को भी न देख सके।

वाणी

—मुझे समस्त आध्यात्मिक-पद केवल उपवास (रोजा रखने), ससार-त्याग और रात्रि-जागरण से प्राप्त हुए।

—मेरे गुरुदेव जब अपने गुरु के गुणो का जिक्र करते तो लोगो मे सुनने की शक्ति शेष नही रहती थी।

—धर्म पर आरूढ मनुष्य ईश्वर की तरह होते है।

—मै तो अपने अनुयायियो को अपना सहारा समझता

हूँ, परन्तु वह छल-कपट करते है। अतः वह मेरे लिए कष्टदायी है। और मै बहुत समय तक इन छली-कपटी और दुराचारियो पर रोता रहा परन्तु अब मुझे न अपनी खबर है न पृथ्वी और न आकाश की।

—दस वर्ष तक हृदय ने मेरी रखवाली और रक्षा की और दस वर्ष तक मैंने उसकी रखवाली और रक्षा की, परन्तु अब यह दशा है कि न मुझे हृदय का हाल मालूम है न हृदय को मेरा।

—मनुष्यमात्र इस बात से बेखबर है कि बीस वर्ष से परमेश्वर मेरी जीभ से बोलता है और मेरा अस्तित्व मध्य से समाप्त हो चुका है।

—बीस वर्ष से केवल सूफीमत के बाह्य सिद्धान्तो का वर्णन करता हूँ, क्योकि इसके रहस्यमयी सिद्धान्तो का वर्णन करने की मुझे आज्ञा नही।

—यदि प्रलय-क्षेत्र मे परमेश्वर मुझे दर्शन की आज्ञा देगा तो मैं विनती करूँगा—आँखे गैर है और मैं गैर के द्वारा मित्र का दर्शन करना नही चाहता।

—जब मुझे यह सत्य विदित हुआ कि "वचन वह है जो हृदय से निकला हो" तो मैं तीस वर्ष तक लगातार ईश्वर-भजन मे संलग्न रहा और किसी से बात नही की। इसके बाद तीस वर्ष तक के लिए यह व्रत लिया कि जिस समय भी नमाज के समय ससार का विचार आ जाता तो दुबारा नमाज अदा करता। और यदि परलोक का विचार आ जाता तो भूल-चूक की क्षमा-याचनास्वरूप सिजदा करता।

—एक बार मैने श्रद्धालुओ से कहा यदि जितनी नमाजे अदा करना कर्त्तव्य है उनसे अधिक नमाजे अदा करना लाभ-दायक न होता तो मैं कभी तुम्हे अधिक नमाजे अदा करने का उपदेश नही देता।

—ईश्वर के सौन्दर्य का दर्शन करने वाला साँस तक नही ले सकता, और ईश्वर की महानता का दर्शन करने वाला आश्चर्य चकित रहता है, और ईश्वर के रौद्ररूप का दर्शन करने वाला साँस लेने को अधर्म समझता है।

—वह साधक महान है जिसे एक क्षण के लिए भी ईश्वर का सामीप्य प्राप्त हुआ।

—साधक दो प्रकार के होते है। एक तो ईश्वर के भक्त और दूसरे सत्य के पुजारी। परन्तु ईश्वर का भक्त इसलिए श्रेष्ठ होता है कि उसको "ईश्वर की रजामन्दी से और ईश्वर की नाराजगी से मैं पनाह माँगता हूँ" का पद प्राप्त होता है।

—अपने गुरु की आज्ञा का पूर्ण श्रद्धा-विश्वास से पालन करो। जो साधक गुरु की आज्ञा का उलघन करे उसकी सगत से दूर रहो।

शैतानी-विचार से भी अधिक प्रबल मन के विकार होते है। क्योकि शैतानी-विचार तो लाहौल पढने से दूर हो जाते है, परन्तु मन के विकारो का दूर करना बहुत मुश्किल है।

—मनुष्य चरित्र से मनुष्य होता है न कि सूरत से।

—ईश्वर के रहस्य भक्तो के हृदय मे सुरक्षित रहते है।

—नर्क मे जलने से भी अधिक कष्टदायक ईश्वर से गाफिल (बेसुध और असावधान) रहना है।

—ईश्वर मे लयता के बिना ईश्वर मे स्थिति प्राप्त नही हो सकती।

—संसार-त्याग और एकान्तवास से विश्वास भी दृढ रहता है और सन्तुष्टि और तृप्ति भी प्राप्त होती है। (ससार त्याग और एकान्तवास को धुर तक पहुँचे हुए साधक ही निभा पाते है और उन्ही के लिए यह वचन हैं)।

—जिसका ज्ञान विश्वास तक, विश्वास भय तक, भय कर्म तक, कर्म सयम तक, सयम पवित्रता तक और पवित्रता ईश्वर-दर्शन तक नही पहुँचते वह जीवित भी मुर्दा है।

—तकलीफ पर शिकायत न करते हुए सब्र करना भक्ति का सबसे अच्छा लक्षण है।

—महमान का आदर-सत्कार करना निरधारित पूजा से अधिक पूजा करने से भी श्रेष्ठ है।

—जो ईश्वर के जितना समीप होता हैं ईश्वर भी उसके उतना समीप होता है।

—जिसका जीवन प्राण पर अवलम्बित हो वह प्राण निकलते ही मर जाता है और जिसके जीवन का कार्य भार ईश्वर पर हो वह कभी नही मरता, वल्कि पैदाइशी जीवन से यथार्थ जीवन प्राप्त कर लेता है।

—ईश्वर के शिल्प अर्थात सृष्टि से शिक्षा और चेतावनी प्राप्त न करने वाली आँख का अन्धा होना ही अच्छा है। जो जीभ ईश्वर का नाम नही भजती उसका गूँगा होना ही श्रेष्ठ है जो कान ईश्वर का गुणानुवाद सुनने मे कमी करे उसका वहरा होना अच्छा है। और जो शरीर ईश्वर-भजन-पूजा से वचित हो उसका मर जाना अच्छा है।

—ईश्वर-मार्ग पर चलने वाले के लिए ससार कडवा और अध्यात्म-ज्ञान मीठा होगा।

—सूफी-सतो से पृथ्वी ऐसे ही सुशोभित है जैसे तारो से आकाश।

—साहसी अपने साहस द्वारा सब पर श्रेष्ठता प्राप्त कर लेते हैं।

—खतरे की चार किस्मे है—

१ ईश्वरी-खतरा जिससे अध्यात्म-ज्ञान प्राप्त होता है।

२ देवदूतीय-खतरा जिससे भजन-पूजन मे प्रीति उत्पन्न होती है।

३ नफसानीय-खतरा (वासनामय-मन का खतरा) जिससे माया-मोह मे फँस जाता है। और

४ शैतानीय-खतरा जिससे ईर्ष्या और द्वेष जनम लेते है।

—चार हजार आध्यात्मिक ज्ञानियो का यह कहना है कि ईश्वर का भजन-पूजन इस तरह करना चाहिए कि ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी का विचार तक न आए।

—ज्ञानी के तमाम पदो को उठा लिया जाता है और ज्ञानी ईश्वर के रहस्यो से परिचित होता है।

—यदि प्रेम किसी चीज के कारण से हो तो उस चीज के समाप्त होने पर प्रेम भी समाप्त हो जाता है और प्रेम की प्राप्ति उस समय तक सम्भव नही जब तक स्वय को समाप्त न कर ले। और प्रेमीजन के वचन लोगो को अकसर व्यर्थ की बाते प्रतीत होते है।

—ईश्वर-भक्तों के लिए नफ्स (वासनामय-मन) की निगरानी से कठिन और कोई काम नही।

—ईश्वर-स्मरण से एक क्षण की गफलत (असावधानी और वेसुधी) भी हजार वर्ष के भजन-पूजन ते बुरी है, क्योकि एक क्षण की ईश्वर-दरबार से अनुपस्थिति के अपराध को हजार वर्ष का भजन-पूजन भी नही मिटा सकता । (इसका आशय यह है कि साधक को इस ससार को ही ईश्वर-दरबार समझ कर अपने व्यवहार व आचरण पर सदा नजर रखनी चाहिए। जैसा शिष्टतापूर्ण और विनम्र व्यवहार और आचरण तथा विचार साधक गुरु के सम्मुख करता है वैसी ही शिष्टता और विनम्रता उसे संसार के प्रत्येक प्राणी के साथ बरतनी चाहिए। ऐसा न करने पर इस जीवन की तपस्या और भजन-पूजन की तो वात ही क्या है एक हजार वर्ष की तपस्या और भजन-पूजन भी व्यर्थ चली जाती है।)

—सच्चा भक्त दिन में चालीस अवस्थाएँ बदलता है। परन्तु-छली कपटी चालीस वर्ष भी एक ही अवस्था पर स्थित रहता है। और सच्चा भक्त वही है जो न तो माँगने के लिए हाथ फैलाए और न झगडा करे अर्थात् जो कुछ ईश-कृपा से प्राप्त हो जाए उसी मे सन्तोष करे।

—नेक आदत वाले नास्तिक की सगत वुरी आदत वाले पूजा-पाठी से अच्छी है।

—हया (लज्जा) एक ऐसी नैमत ईश्वर की दैन और कृपा है जो वहुत से पापो की निगरानी से पैदा होती है।

—अपना आदर-सत्कार कराने के लिए चमत्कार दिखाना धोखेवाजी है।

—ससार-त्याग से परलोक मिल जाता हैं।

—साधक का परम-पाप से निर्भय हो जाना छल-कपट में सम्मिलित है। गुरु की आज्ञा का उलघनं करना परम-पाप कहलाता है। और जो नास्तिकता (अर्थात ईश्वर के अस्तित्व से इन्कार करना) से भयभीत नही होता और यह कहता है कि उसे ईश्वर-मिलन प्राप्त है वह छली-कपटी है। इसलिए कि जब वह ईश्वर के अस्तित्व से ही इन्कार करता है तो फिर जो तत्व है ही नही उसका मिलन उसे कैसे प्राप्त हुआ।

—बन्दगी (दास्य-भाव वाली भक्ति) का अर्थ उस समय मालूम होता है जब बन्दा (दास्य-भाव रखने वाला साधक) ईश्वर को हर चीज का मालिक समझते हुए यह विश्वास करले कि हर चीज उसी के अस्तित्व से जीवित है और सब को वही लौट कर जाना है।

—सच्चे का गुण सच्चाई है। और सर्वश्रेष्ठ सच्चा वह है जिसके वचन और कर्म सच्चाई पर आधारित हो।

—जो दरवेश ईश्वर की रजा पर राजी रहे वह सबसे महान है।

—ऐसे लोगो की सगत करनी चाहिए जो अहसान करके भूल जाते है और तमाम गलतियो को अनदेखा और माफ करते रहे।

—पर्दे (अर्थात ईश्वर-मार्ग की रुकावटे) छः प्रकार के तीन साधारण साधको के लिए—

नफ्स (वासनामय-मन)
२ सृष्टि के प्राणी, और
३ संसार।

और तीन विशेष साधकों के लिए—

१. भजन-पूजन,

२. पुण्य, और

३. चमत्कार (अर्थात सिद्धि)।

सांसारिक मनुष्य हलाल से हराम (धर्म से अधर्म) की ओर आकर्षित होता है। और साधक फना से बका (ईश्वर मे लयता से ईश्वर मे स्थिति) की ओर चलता है।

—जिसने परमात्मा को पहचान लिया उसकी जुबान बन्द हो गई।

महाप्रयाण

मृत्यु के समय आपने लोगो से कहा कि मुझे वुजू (मुँह-हाथ-पैर धोना) करवा दो। जब लोग वुजू करवा रहे थे तो उंगलियो के बीच की जगह को धोना भूल गए तो आपने उनको याद दिलाया और उगलियो के बीच की जगह को भी धो दिया गया। इसके बाद आपने सिजदे मे गिर कर रोना शुरू कर दिया। जब लोगो ने पूछा कि आप इतने महान भक्त होकर भी क्यो रोते है तो आपने कहा कि इस समय से अधिक असमर्थ मैं कभी नही रहा। इसके बाद कुरान शरीफ पढने में तल्लीन हो गए और बोले कि इस समय कुरान से अधिक मेरा सहायक और सहानुभूति रखने वाला और कोई नही है। और इस समय मैं अपनी आयु-भर के भजन-पूजन को इस तरह हवा में लटका हुआ देख रहा हूँ जिसको हवा के तेज झौके हिला रहे है और मुझे यह ज्ञान नही कि यह हवा जुदाई की है या मिलन की। और दूसरी तरफ मृत्यु का दूत और सिरात का पुल है

और मैं धर्मराज पर दृष्टि लगाए हुए इस बात का इन्तजार कर रहा हूँ कि न जाने मुझे किधर जाने की आज्ञा मिले। इसके बाद आपने फिर कुरान शरीफ का पाठ किया। मृत्यु के समय की अचेतनता, कठिनाई, कष्ट और दु ख की अवस्था मे लोगो ने आग्रह किया कि अल्लाह का नाम लीजिए, तो आपने फरमाया कि मैं उसकी तरफ से गाफिल नही हूँ। फिर उगलियो पर मत्र जाप करना शुरू कर दिया और जब सीधे हाथ की सकेत करने वाली उंगली पर पहुँचे तो उगली ऊपर उठा कर "बिस्मिल्ला-उल-रहमान-उल-रहीम" (मुसलमान भाई हर अच्छे काम का आरम्भ करते हुए कहते है) कहा और आँखे बन्द करते ही पाँच तत्वो के पिजरे से निकल कर प्राणपखेरू उड गए। स्नान कराते समय जब लोगो ने आँखो मे पानी पहुँचाना चाहा तो आकाशवाणी हुई—हमारे प्यारे की आँखो से पानी दूर रखो क्योकि इसकी आँखे हमारे जाप के आनन्द मे बन्द हैं और अब हमारे दर्शन के बगैर नही खुल सकतीं। जब उंगलियाँ सीधी करने की कोशिश की गई तो आवाज आई कि यह हाथ हमारे जाप मे बन्द हुआ है और हमारी आज्ञा के बगैर नही खुलेगा। जनाजे को उठाने के समय एक कबूतर पलग के एक कोने पर आकर बैठ गया और जब उसको उड़ाने की कोशिश की गई तो उसने कहा कि मेरे पजे प्रेम की मेख से कोने पर गढे हुए है और आज सत जुनैद का शरीर देवदूतों का भाग्य बन गया है। यदि तुम लोग जनाजे के साथ न होतें तो पार्थिव शरीर सफेद बाज की तरह हवा के कन्धो पर उडता।

किसी महात्मा ने स्वप्न मे आपसे पूछा कि धर्मराज को आपने क्या जवाब दिया। आपने कहा कि जब उन्होने पूछा कि 'तेरा पालने वाला कौन है' तो मैंने मुस्करा कर कहा कि मैं इसका

उत्तर आदि दिवस मे ही 'ईश्वर ही सबका पालने वाला है कह कर दे चुका हूँ। और जो मनुष्य सम्राट को जवाब दे चुका हो उसके लिए दासों को जवाब देना क्या कठिन है। अतः धर्मराज मेरा उत्तर सुन कर यह कहते हुए चल दिए कि अभी तक इस पर प्रेम के खुमार का असर बाकी है।

एक महात्मा ने स्वप्न मे आपसे पूछा कि परमेश्वर ने आपके साथ कैसा व्यवहार किया। आपने कहा कि अपनी कृपा से क्षमा कर दिया और उन दो रकात (नमाज में झुकना) नमाज के अतिरिक्त जो मै रात को पढ़ा करता था, और कोई भजन-पूजन काम न आ सका। अर्थात रात मे जो थोडी-सी भक्ति करता था वही काम आई।

आपकी पवित्र समाधि पर सूफी-संत महात्मा शिबली से किसी आध्यात्मिक समस्या का समाधान पूछा गया तो उन्होने कहा कि ईश्वर तक पहुँच रखने वाले महापुरुषो का जीवन और मृत्यु दोनो समान होते है। अतः मुझे इस समाधि पर किसी समस्या का उत्तर देने मे लज्जा आती है क्योंकि आपकी मृत्यु के बाद भी मेरे दिल मे आपके प्रति उतनी ही श्रद्धा और सम्मान तथा शिष्टता है जितनी आपके जीवन-काल मे थी। महात्मा शिबली संत जुनैद के शिष्य थे। इस घटना से साधको को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि अपने गुरु का आदर सम्मान कैसे किया जाता है।

सूफी-संत महात्मा शिबली

जीवन-धारा-प्रत्यावर्तन

ईश्वर की माया बडी विचित्र है । जब उसकी इच्छा नही होती तो बडे से बड़े महात्मा का अच्छे से अच्छा उपदेश भी मनुष्य के हृदय पर कुछ प्रभाव नही डालता और उसकी जीवन-धारा इसी प्रकार सासारिक माया-मोह की भ्रमपूर्ण दिशा ही में प्रवाहित होती रहती है ····और जनम पर जनम बीते चले जाते है·· और उसके कल्याण का समय नही आ पाता ·······। परन्तु जब उसकी कृपा होनी होती है तो साधारण से साधारण और छोटी से छोटी घटना ही मनुष्य के दिल को छू लेती है · उसके हृदय के जनम-जनम से वन्द नेत्र क्षणभर मे खुल जाते है और उसे ज्ञान प्राप्त हो जाता है··· बस उस परम दयालु परम कृपालु की नजरे-करम की बात है · जिस पर हो जाय · जब भी हो जाय · ।

सूफी-सत महात्मा शिबली इस राह मे कदम रखने से पहले अपने सासारिक जीवन काल मे निहावन्द नामक स्थान के गवर्नर थे। एक बार राजा ने एक जलसा आयोजित किया और देशभर के गवर्नरो को दरबार मे बुलाया। आप भी वहाँ तशरीफ ले गए। जिस समय राजा सब गवर्नरो को खिलअत

(वह वस्त्र आदि जो राजा किसी को सम्मानार्थ प्रदान करे) प्रदान करके विदा करने वाला था, उस समय एक गवर्नर को छीक आ गई और उसने खिलअत के वस्त्र की आस्तीन से नाक साफ कर ली। इस अशिष्ट व्यवहार की सजा मे राजा ने खिलअत वापिस लेकर उस गवर्नर को वर्खास्त कर दिया। इस घटना को देखकर गवर्नर शिबली को चेतावनी-स्वरूप यह विचार आया कि जब मनुष्य एक अन्य मनुष्य द्वारा प्रदान की हुई खिलअत के साथ अशिष्टता करके ऐसी सजा पाता है तो ईश्वर की प्रदान की हुई जीवन-रूपी-खिलअत के साथ अशिष्टता करने वाले को तो न जाने क्या सजा मिलेगी। इस विचार के आते ही आपने राजा के पास जाकर विनम्रतापूर्वक कहा कि जब आप एक मनुष्य होकर इस बात को पसन्द नही करते कि कोई आपकी प्रदान की हुई खिलअत से अशिष्टता करे जब कि आपका और आपकी खिलअत का परमेश्वर की खिल-अत के सामने कोई मूल्य नही, तो मै भी यह पसन्द नही करता कि ईश्वर ने जो मुझ को यह जीवन-रूपी-खिलअत दी है, उसे एक मनुष्य के सामने दूषित करूँ। यह कह कर अपना पद त्याग दिया और दरबार से उठकर चले गए।

ईश्वर ज्ञान का मोती

आप कहा करते थे कि मैंने तीस वर्ष तक धर्म-शास्त्रो का मनन-चिन्तन किया और इसके बाद मेरे सीने से एक सूर्य उदय हो गया और जब मुझको ईश्वर दर्शन की उत्कट चाह हुई तो मैं बहुत से गुरुओ की सेवा मे उपस्थित हुआ और अपनी इच्छा प्रकट की। परन्तु कोई भी मुझे रास्ता न दिखा सका क्योकि उनमे से एक भी स्वय इस रास्ते से परिचित नही था।

बस मुझ से तो वो इतना कह देते थे कि हम ईश्वर के अतिरिक्त सब कुछ जानते है। अत. मैने आश्चर्यचकित होकर उनसे कहा कि आप लोग अधकार मे है और मै प्रकाश मे हूँ। तथा मै ईश्वर को धन्यवाद करता हूँ कि मैने अपनी सरक्षकता चोरो के सुपुर्द नही की। यह सुनकर वह लोग मुझ से नाराज हो गए और मेरे साथ बड़ा दुर्व्यवहार किया।

इसके बाद आप महात्मा जबरन्निसाज के शिष्य हो गए, परन्तु आपको उनके सत्सग मे वह चीज मिलती नजर नही आई जिसके लिए आपने इस मार्ग पर कदम रखा था। और आप अशान्त और परेशान रहने लगे। उसी दौरान किसी ने आपको बगदाद मे सत जुनैद की सेवा मे जाने की सलाह दी। अत. एक दिन आप अध्यात्म-विद्या सीखने के लिए सूफी-सत महात्मा जुनैद की सेवा मे उपस्थित हुए और विनय की—लोग कहते है कि ईश्वर-ज्ञान का मोती तुम्हारे पास है। या तो उसे मुझे दे दो अथवा उसे मेरे हाथ बेच दो। सत जुनैद ने कहा—मैं उसे बेच नही सकता क्योकि तुम्हारे पास इतना धन नही है कि उसका मूल्य चुका सको। और यदि मैं उसे तुम्हे मुफ्त मे दे दूंगा तो तुम उसका मूल्य और कद्र नही समझ सकोगे क्योकि बिना मेहनत किए प्राप्त हुई वस्तु की कोई कद्र और कीमत नही होती। अत. यदि तुम वह मोती प्राप्त करना चाहते हो तो "परम-सत्य" रूपी महासागर मे सिर के बल कूद कर लय हो जाओ और धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करो। जब तुम इन दोनो को सहन करने के योग्य हो जाओगे तो वह मोती तुम्हे प्राप्त हो जाएगा। महात्मा शिबली ने पूछा—मुझे क्या करना चाहिए। संत जुनैद ने उत्तर दिया—जाकर गधक बेचो। साधक शिबली ने एक वर्ष तक गधक बेची और इस व्यापार

में धन के साथ-साथ काफी मान-सम्मान और ख्याति अर्जित की। एक वर्ष बाद आप फिर संत जुनैद की सेवा मे उपस्थित हुए। संत जुनैद ने कहा—इस व्यापार से वगदाद में तुम्हारी बहुत ख्याति हो गई है और लोग तुम्हारी बडी इज्जत करने लगे हैं। अब तुम भिक्षु बनकर एक वर्ष तक इस शहर में भीख माँगो। पूरे वर्ष भर शिवली बगदाद की गलियों में द्वार-द्वार जाकर भीख माँगते रहे। कितना कठिन काम है कि जहाँ मान-सम्मान के साथ रहे हो वही भीख माँगनी पड़े। पहले तो लोगों को आश्चर्य होता था। परन्तु धीरे-धीरे लोगो ने उनकी ओर ध्यान देना बन्द कर दिया। वर्ष भर भीख माँगने के बाद आप लौटकर फिर संत जुनैद के पास आए। सत जुनैद ने कहा—अब देखो, तुम लोगो की निगाह मे कुछ नही रहे। अतः कभी भी अपने मन को इन संसारियों की ओर न लगाओ और न उनकी किसी भी मान-सम्मान की बात पर तनिक भी ध्यान दो। उन्होने आगे कहा—कुछ समय तक तुम एक प्रान्त का गवर्नर के रूप में शासन कर चुके हो। उस प्रदेश में जाओ और उन सब लोगो से माफी माँगो जिनका तुमने कोई अपकार किया है और दिल दुखाया है। शिवली ने आज्ञा का पालन किया और चार वर्षों तक द्वार-द्वार घूम कर प्रत्येक व्यक्ति से, सिवाय एक के जिसका पता वह न पा सके, क्षमा प्राप्त कर ली। लौटने पर सत जुनैद ने उनसे कहा—अब भी तुम्हारे मन मे कीर्ति के लिए कुछ स्थान बाकी है। जाओ, एक वर्ष तक और भीख माँगो। प्रत्येक दिन शिवली जो कुछ भिक्षा पाते लाकर संत जुनैद को दे देते। सत जुनैद उस भिक्षा को गरीबो मे बाँट देते और शिवली को दूसरे दिन प्रात.काल तक भूखा रखते। जब इस प्रकार एक वर्ष बीत गया तो सत जुनैद ने

शिबली को अपना शिष्य बनाना इस शर्त पर स्वीकार किया कि आप आश्रम मे अन्य साधको की सेवा का कार्य करे। जब आप एक वर्ष तक आश्रमवासियो की सेवा कर चुके तो सत जुनैद ने उनसे पूछा—अब तुम अपने बारे मे क्या सोचते हो। आपने उत्तर दिया—मैं अपने को ईश्वर द्वारा पैदा किए गए सभी प्राणियो मे सबसे तुच्छ समझता हूँ। सत जुनैद ने कहा—अब तुम्हारी श्रद्धा और विश्वास पक्के हो गए। इस कदर प्रचण्ड अग्नि मे तपाने के बाद संत जुनैद ने शिबली को अपना शिष्य बनाया था। आपने और भी अनेक भीषण तपस्याएँ की थी तब कही आपको वह मोती प्राप्त हुआ और तभी आप उसका मूल्य, उसका महत्व समझ पाए।

तपस्या

साधना के आरम्भिक समय मे आप हर समय रोते रहते थे। जब अन्य शिष्यो ने इसका जिक्र सत जुनैद से किया तो उन्होने कहा कि ईश्वर ने शिबली को एक अमानत (धरोहर) सौप कर चाहा कि वह उसमे खनायत (बेईमानी) न करे, इसलिए उसको रोने मे लगा दिया।

साधनावस्था मे महात्मा शिबली अपनी आँखो मे नमक भर लेते थे ताकि नीद आने पर सो न सके। कहते है कि इस तरह थोडी-थोडी मात्रा करके आपने सात मन नमक आँखो मे भर लिया था। आप कहा करते थे कि ईश्वर ने मेरे हृदय मे प्रकाश करके यह प्रकट किया है कि सोने वाले ईश्वर से बेखबर हो जाते है और ईश्वर से बेखबर होने वाले की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। जब लोगो ने आप से निवेदन किया कि आप अपनी आँखो मे इतनी अधिक मात्रा मे नमक न भरा करे

क्योंकि इससे अधा होने का खतरा है तो आपने कहा कि अंधा हो जाने मे मेरे लिए कोई खतरा नही है क्योकि मेरा हृदय जिस वस्तु के दर्शन की इच्छा करता है वह इन बाहरी आँखो से दिखाई नही देती।

आप साधना-काल मे अपने नित्य-नियम के अनुसार तहखाने मे भजन-पूजन किया करते थे और लकडियो का एक गट्ठा भी अपने साथ तहखाने मे ले जाते थे और जब भी मन भजन-पूजन से जरा हटता तो अपने शरीर मे एक लकडी मारते, यहाँ तक कि गट्ठे की तमाम लकडियाँ टूट जाती थी तो दीवारो से टकरा-टकरा कर शरीर को कष्ट दिया करते ताकि कष्ट के डर से मन ईश्वर-भजन मे लगा रहे।

एक बार आप एकान्त मे भजन कर रहे थे कि बाहर से एक मनुष्य ने दरवाजा खटखटाया। आपने पूछा—कौन है। उसने जवाब दिया—अबू बक्र उपस्थित हुआ है। आपने कहा कि यदि इस समय स्वय हजरत अबू बक्र सदीक (हजरत मुहम्मद साहब के उत्तराधिकारी) भी तशरीफ ले आएँ तब भी मैं दरवाजा नही खोल सकता। अत कृपा करके आप वापिस चले जाएँ।

घटनाएँ

सूफी-सत महात्मा शिबली ईश्वर-प्रेम के अपने प्रारम्भिक काल मे उस मनुष्य का मुँह शक्कर से भर देते थे जो आपके सामने ईश्वर का नाम लेता था। तथा बच्चो को मिठाई बाँटा करते थे कि वह आपके सामने ईश्वर-नाम का उच्चारण करते रहे। फिर बाद मे आपका यह हाल हो गया

कि ईश्वर का नाम लेने वालो को रुपया और अशर्फियाँ दे दिया करते। इसके वाद ईश्वर-प्रेम पथ पर चलते-चलते उस मंजिल पर पहुँच गए कि हाथ मे नगी तलवार लेकर घूमते रहते और कहते कि जो कोई मेरे सामने ईश्वर का पवित्र नाम लेगा उसका सिर काट दूँगा। जब लोगो ने पूछा कि पहले तो आप ईश्वर का नाम लेने वालो को इनाम दिया करते थे और अब कत्ल करने की वात करते है, ऐसा क्यो है। तो आपने कहा कि पहले मैं समझता था कि लोग सच्चे दिल से ईश्वर का नाम लेते है लेकिन अव मुझे यह मालूम हो गया है कि लोग ऐसा नही करते बल्कि लोगो की यह आदत बन गई है कि ईश्वर का नाम ले और इस बात को मै उचित नही मानता।

एक वार आकाशवाणी सुनी कि नाम से कब तक बँधा रहेगा, यदि सच्ची चाह है तो नाम वाले की खोज कर। यह आवाज सुन कर आप ईश्वर-प्रेम मे इतने लीन हुए कि दजला नदी मे छलाग लगा दी लेकिन लहरो ने फिर किनारे पर फेक दिया। फिर इसी दशा मे आग मे कूद पडे लेकिन आग का भी आपके ऊपर कोई असर नहीं हुआ। प्रेम के दीवानेपन मे आत्महत्या करने की और भी कई तरह कोशिशे करते परन्तु हर बार बच जाते। इस प्रकार ईश्वर के प्रति प्रेम की दीवानगी दिन प्रतिदिन बढती ही चली गई और आप चीख-चीख कर कहते कि उस मनुष्य पर खेद है जो न पानी मे डूब सका, न आग मे जल सका, न जंगली जानवरो ने फाड खाया और न पहाड से गिर कर मरा। फिर आपने आकाशवाणी सुनी— चूँकि ईश्वर अपने प्रेमियो की स्वय रक्षा करता है, अत. ईश्वर-प्रेमी को ईश्वर के अतिरिक्त दूसरा कोई नही मार सकता—

जाको राखे साईयाँ मार सके न कोय ।
बाल न बाँका कर सकै जो जग बैरी होय ॥

इसके बाद प्रेम मे इतने पागल हो गए कि लोगो ने दस बार जंजीरो में जकडा परन्तु फिर भी आप शान्त न हुए। फिर आपको पागलखाने मे भेज दिया गया और हर मनुष्य आपको दीवाना (पागल) कहने लगा। परन्तु आप कहा करते थे कि तुम सब मुझको दीवाना कहते हो यद्यपि वास्तव में तुम सब खुद दीवाने हो और मुझे पूरा विश्वास है कि ईश्वर-कृपा से कयामत के दिन तुम्हारी दीवानगी से मेरी दीवानगी अधिक श्रेष्ठ मानी जाएगी।

पागलखाने मे जब कुछ कुलीन लोग आपसे मिलने के लिए आए तो आपने पूछा कि तुम कौन हो। उन्होने निवेदन किया कि हम सब आपके मित्र हैं। यह सुनते ही आपने उन पर पत्थर मारने शुरू कर दिए और कहा कि तुम कैसे मित्र हो जो मेरी विपद पर धैर्य नही रखते। (सूफी-संतो के यहाँ विपदाओ को ईश्वर की कृपा माना जाता है। अतः उन्हे धैर्यपूर्वक और धन्यवाद के साथ सहना ही साधक का कर्त्तव्य है।)

एक दिन आप हाथ मे आग लिए हुए फिर रहे थे तो लोगो ने पूछा कि आपने आग क्यो ले रखी है। आपने कहा कि मैं इससे काबे को फूँक देना चाहता हूँ ताकि लोग काबा-वाले की तरफ आकृष्ट हो जाएँ। फिर दूसरे दिन लोगो ने देखा कि आप दो जलती हुई लकडियाँ लिए फिर रहे है। और जब उन्होने इसकी वजह पूछी तो बोले कि मैं जन्नत और दोजख को जलाकर समाप्त कर देना चाहता हूँ ताकि लोग इनसे ध्यान हटाकर ईश्वर के लिए ही ईश्वर का भजन करे। इसके बाद

बोले पेड पर बैठी हुई कोयल "कू-कू" करके पूछती रहती है कि वह कहाँ है। और मैं भी उसी के अनुसार "हू-हू" (है-है अर्थात् ईश्वर है) करता रहता हूँ। आपकी इस क्रिया का कोयल पर ऐसा असर हुआ कि जब आप खामोश हो जाते तो वह भी चुप हो जाती।

एक बार आप ईद के दिन काले कपडे पहने ईश्वर-प्रेम की मदिरा के नशे मे झूमते फिर रहे थे। जब लोगो ने आपसे ईद (खुशी) के दिन भी काले कपड़े (जो शोक प्रदर्शित करने वाले वस्त्र होते है) पहनने का कारण पूछा तो बोले कि मैंने मनुष्य-मात्र के शोक मे काले कपडे पहने है इसलिए कि सब मनुष्य ईश्वर से विमुख हो गए है और ईश्वर से विमुख मनुष्यो को मैं मुर्दा समझता हूँ। फिर आपने अपने काले कपडो को सम्बोधन करके कहा कि कालिख ने हमको अँधेरे की ऐसी दशा मे पहुँचा दिया कि हम मंझधार मे डूब गए।

एक बार अपने सत्गुरु सूफी-सत महात्मा जुनैद की सभा मे अन्य शिष्यो तथा श्रद्धालुओ के साथ सूफी-सत महात्मा शिबली भी उपस्थित थे। उस समय कुछ शिष्यो ने महात्मा शिबली की तारीफ मे कहा कि अध्यात्म-पथ मे सच्चाई, लगन और साहस मे उनके समान कोई नही है। यह सुनकर संत जुनैद ने कहा कि तुम झूठ बोलते हो। सच यह है कि शिबली निकम्मा और नीच है और ईश्वर से बहुत दूर है। अतः उसे मेरे सत्संग से बाहर निकाल दो। जब महात्मा शिबली सत्संग से उठकर चले गए तो सत जुनैद ने सत्सग मे उपस्थित लोगो से कहा कि तुम तारीफ करके उसकी हत्या करना चाहते थे। अरे तुम्हारे यह तारीफ के शब्द उसके लिए तलवार का काम

करते और अगर उन शब्दो का उस पर थोडा-सा भी असर हो जाता तो उसके मन मे अहकार पैदा हो जाता और वह ईश्वर से दूर हो जाता। यह ईश्वर-विछोह की स्थिति उससे वर्दाश्त न होती और वह तुरन्त मर जाता। लेकिन मेरे कहे हुए उसकी बुराई के शब्दो ने ढाल वनकर उसे वचा लिया।

एक वार आपने नए कपडे पहने। फिर थोडी देर पहनने के वाद उतार कर जला डाले। जव लोगो ने कहा कि शास्त्र के अनुसार बगैर किसी कारण के माल को क्षति पहुँचाना पाप है तो आपने कहा कि शास्त्र में यह भी तो लिखा है कि जिस वस्तु की तरफ आपका हृदय आकृष्ट होगा ईश्वर उसको भी तुम्हारे साथ कयामत मे आग में जला देगा। चूँकि मेरा हृदय इन नए कपड़ो की तरफ आकृष्ट हो गया था इसलिए मैंने इनको दुनिया मे ही जला दिया।

जब आपको अध्यात्म के ऊँचे पद प्राप्त होने आरम्भ हुए तो आप धर्मोपदेश देने लगे। अक्सर अपने उपदेशो मे आप गूढ सत्यो को प्रकट कर देते थे। इस वात की खवर जब आपके सत्गुरु संत जुनैद को हुई तो उन्होने आपको वुलाकर कहा—हमने जिन चीजो को दिल मे छिपाकर रखा था तुम उन्हे भरी सभा मे सबके सामने वर्णन करते हो। आपने निवेदन किया कि मैं जिन सत्यो को प्रकट करता हूँ वह लोगो की वुद्धि से परे है क्योकि मेरी वाते परमात्मा की तरफ से आई हुई होती है और परमात्मा की ही तरफ लौट जाती है और उस वक्त मेरा अस्तित्व मध्य मे नहीं होता। यह सुनकर आपके सत्गुरु ने कहा कि यद्यपि तुम्हारी वात ठीक है फिर भी तुम्हारे लिए इस प्रकार की चीजो को वर्णन करना उचित नही है। आपने

निवेदन किया कि इहलोक और परलोक की इच्छा रखने वालो के लिए हमारी सभा मे आना पाप है।

एक दिन सत जुनैद की पत्नि अपने घर मे बैठी अपने बालो मे कघी कर रही थी कि इतने मे अचानक महात्मा शिवली वहाँ आगए। जब संत जुनैद की पत्नि ने पर्दा करने का विचार किया तो सत जुनैद ने कहा कि पर्दा करने की जरूरत नही है क्योकि सूफियो की श्रेणी के मस्तो को तो स्वर्ग और नर्क तक की भी खबर नही होती। फिर भला किसी औरत पर क्या नजर डालेगे। कुछ देर बाद जब महात्मा शिवली ने ईश्वर-प्रेम के अतिरेक मे रोना शुरू किया तो सत जुनैद ने अपनी पत्नि से कहा कि अब यह अपनी चेतना मे लौट रहा है अत: आप पर्दे मे चली जाएँ।

एक वार आपने वुजू करके (मुंह-हाथ-पैर धोकर) मस्जिद मे जाने का विचार किया तो मार्ग मे आकाशवाणी सुनी कि ऐसी अशिष्टतापूर्वक वुजू के साथ हमारे घर मे जाना चाहता है। यह सुन कर जब आप वापिस होने लगे तो यह आवाज सुनी कि हमारे घर से लौट जाना चाहता है,भला यहाँ से लौट कर कहाँ जायगा। यह सुन कर आपने एक जोर की थपकी लगाई तो यह आवाज आई कि तू हम को ताना मारता है। यह सुन कर आप खामोशी के साथ बैठ गए। फिर आवाज आई कि तू धैर्य और सहनशीलता का दावा करता है। यह सुन कर आपने निवेदन किया—मैं तुम से ही न्याय की प्रार्थना करता हूँ। हे ईश्वर, तू ही वता कि मैं क्या करूँ।

एक वार आप कुछ शिष्यो के साथ जगल मे होकर जा रहे थे। मार्ग मे उन्होने एक खोपड़ी देखी। उस पर लिखा

हुआ था -"दीन-ओ-दुनिया (इहलोक और परलोक) का घाटा"। आपने एक थपकी लगाई और कहा कि यह खोपडी किसी ईश्वर के दूत या सत की है। जव शिष्यों ने पूछा कि आपने यह कैसे जान लिया तो आपने उत्तर दिया कि इस वाक्य में यह रहस्य छिपा हुआ है कि जिस समय तक ईश्वर के मार्ग मे दीन और दुनिया को न खत्म कर दोगे (अर्थात लोक-परलोक की तमाम इच्छाओ को न त्याग दोगे (ईश्वर का सामीप्य और ईश्वर-दर्शन प्राप्त नही हो सकता।

एक बार आप वीमार हो गए। हकीमो ने परहेज करने की सलाह दी तो आपने पूछा-क्या मैं उस चीज से परहेज करूँ तो मेरा रिज्क (खाना, जीविका) है या उस चीज का परहेज करूँ जो मेरे रिज्क में सम्मिलित नही है,क्योकि जो मेरा रिज्क है वह तो स्वयं ही मुझे मिल जाएगा और जो मेरा रिज्क नही है उससे परहेज करना मेरे लिए सम्भव नही। (प्रत्येक प्राणी का प्रति दिन का रिज्क ईश्वर द्वारा नीयत है वह उसे अवश्य मिलेगा और जो उसके रिज्क मे शामिल नहीं है वह लाख प्रयत्न करने पर भी उसे नही मिलेगा। सत शिबली का सूफी-सतों के इसी तथ्य की ओर इशारा है।)

एक वार एक प्याली-बेचने-वाले ने आवाज लगाई-केवल एक प्याली वाकी रह गई है। यह आवाज सुन आपने थपकी लगा कर कहा कि सावधान हो जाओ केवल एक ही बाकी रह गया है। ("एक" से आपका अभिप्राय "ईश्वर" से था।)

एक वार आपने एक मनुष्य की मृत्यु पर वजाए चार के पाँच वार तकवीरे कही (अल्लाह-हू-अकबर का नारा लगाया और जव लोगो ने निवेदन किया कि जनाजे की नमाज में तो

शास्त्र ने चार तकबीरे रखी है फिर आपने पाँच तकबीरे क्यो कहा कि मैंने चार तकवीरे मृतक पर और एक तकवीर संसार वालो पर कही ।

एक बार आप कई दिनो तक लापता रहे और तलाश करने पर हीजड़ो के मुहल्ले मे मिले। जब लोगों ने प्रश्न किया कि आप यहाँ क्यो रह रहे हैं। तो आपने कहा जिस तरह इस समुदाय की गिनती न मर्दो मे है न औरतो में इसी तरह मैं भी दुनिया मे उन्ही के जैसा हूँ। इसलिए उन्ही के साथ जिन्दगी गुजारना चाहता हूँ।

एक बार कुछ वच्चे एक अखरोट को आपस मे बाँटने के सवाल पर झगड रहे थे कि अचानक महात्मा शिवली उधर आ निकले और उन्हे झगडा करते देख कर कहा कि लाओ अखरोट मुझे दो मैं बॉट दूं। बच्चो ने अखरोट आपको दे दिया परन्तु जब आपने उसको तोड़ा तो उसमे से कुछ भी नही निकला। उस समय आकाशवाणी हुई कि तुमने अपनी तरफ से बाँटने का जो विचार किया था उसी के अनुसार बाँट दो। यह सुन कर आप विमूढता की स्थिति मे खडे के खड़े रह गए।

जब लोगो ने आपसे निवेदन किया कि हम आपको अशान्त और बेचैन दशा मे देख कर यह समझते है या तो आप ईश्वर के साथ नही है या ईश्वर आपके साथ नही है। आपने उत्तर दिया कि अगर मैं उसके साथ होता तो मैं "मैं" होता, परन्तु मैं तो उसके अस्तित्व में लय हो चुका हूँ। फिर बोले कि मै हमेशा इस खयाल से खुश हूँ कि मुझे ईश्वर का दर्शन और प्रेम प्राप्त है परन्तु अब महसूस हुआ कि प्रेम तो सिर्फ अपने ही जैसे से हो सकता है ।

जब आपसे आपके गुरु संत जुनैद ने पूछा कि जब तुम ईश्वर का भजन सच्चे दिल से नहीं करते तो फिर तुम किस तरह उसको याद करते हो। आपने निवेदन किया कि मैं जब झूठ-मूठ ही उसको बहुत याद करता हूँ तो एक बार वह भी मुझे सचमुच में याद कर लेता है। यह सुन कर संत जुनैद ईश्वर का नाम पुकारते-पुकारते बेहोश हो गए।

एक बार लोगों ने आपसे निवेदन किया कि महात्मा अबू तराब की भूख की वजह से तमाम जंगल उनके लिए खाद्य-पदार्थ बन गया था। आपने कहा कि वह तो रिजा-व-तवक्कुल की स्थिति में नहीं थे। यदि रिजा-व-तवक्कुल की स्थिति में होते तो यह कहते कि मैं ईश्वर की सेवा में रहता हूँ और वही मुझको खिलाता-पिलाता है।

एक बार बच्चों ने आपके पैर पर ऐसा पत्थर मारा कि वह लहू-लुहान हो गया और जख्म से जो खून की बूँदे जमीन पर गिरती तो हर बूँद में से "अल्लाह" शब्द उभरता था।

एक बार सभा मे आपने कई बार अल्लाह-अल्लाह कहा। परन्तु उसी सभा में एक महात्मा ने ऐतराज किया कि आप "ला इलाहा इल्लिल्लाह" क्यों नहीं कहते। आपने एक थपकी लगाकर कहा कि मुझे यह भय रहता है कि मैं "ला" (नहीं) कहूँ और मेरे प्राण निकल जाएँ और मैं अल्लाह कहने अर्थात अन्तिम समय में उसका नाम लेने से वंचित रह जाऊँ। आपके यह गूढ़ वचन सुन कर वह महात्मा भयभीत होकर काँपने लगे और उसी समय उनके प्राणपखेरू उड़ गए। जब उस महात्मा के शिष्य आप को उनका कातिल कह कर खलीफा के दरबार में ले गए तो आप के ऊपर ईश्वरलयता की दशा छाई

हुई थी दरबार में हाजिरी के बाद अपने बचाव मे सफाई पेश करने के लिए कहा गया तो आपने कहा कि उस महात्मा के प्राण तो ईश्वर के प्रेम मे पहले ही निकल कर ईश्वर की सत्ता में विलीन होने वाले थे और उसकी रूह ससार से सम्बन्ध समाप्त कर चुकी थी। इसलिए उसको मेरे वचन सुनने की सामर्थ्य न रही और ईश्वर के तेजोमयी-स्वरूप के दर्शन करके उसके प्राण निकल गए। अत इसमे मेरा कोई दोष नही है। यह प्रभावपूर्ण वचन सुन कर खलीफा ने आज्ञा दी कि इन्हे बाहर ले जाओ क्योकि यदि मैं कुछ देर और इसकी बाते सुनता रहूँगा तो मैं भी बे-होश हो जाऊँगा।

जब कोई मनुष्य आपका शिष्य बनने की इच्छा लेकर आता था और आन्तरिक साधना पूछता तो आप आज्ञा देते कि जगल में जाकर सतोष ग्रहण करो और बिना सवारी और रास्ते का खर्चा लिए हुए हज की यात्रा पर चले जाओ। उसी समय तुम्हे संतोष और पवित्रता प्राप्त होगी और जब इन दोनो तपस्याओ से निवृत हो जाओ उस समय मेरे पास आना क्योकि अभी तुम्हारे अन्दर मेरा सत्सग करने की सामर्थ्य नही है। आप अकसर शिष्य होने वालो को अपने साथियो के साथ बिना किसी रास्ते का खर्च और सवारी दिए जगल मे भेज दिया करते थे। और जब वह कहते कि आप तो साधको के प्राण हरने पर उतारू हैं तो आप कहते कि मेरी यह इच्छा हरगिज नही। परन्तु जो लोग मेरे पास आते है उनका उद्देश्य मेरा सत्संग नही होता बल्कि वह अध्यात्म ज्ञान के इच्छुक होते हैं। यदि वो मेरी सेवा के इच्छुक हो तो मानो मूर्ति पूजक कहलाए जायँगे। अत उनके लिए यही बेहतर है कि अपनी पहली अवस्था मे स्थित रहे इसी कारण मैं अपने पास आने

वालों को ईश्वर का रास्ता बता देता हूँ और इसमे यदि वह मर जाएँ तब भी अपने उद्देश्य से वचित नही रहेगे और यदि यात्रा की मुसीबतें झेलते हुए आगे बढ़ जाएँगे तो उन्हे वह स्थान प्राप्त हो जायगा जो दस वर्ष की तपस्या से भी प्राप्त नही हो सकता ।

कभी कभी आप थपकी लगाकर "हाय गरीबी, हाय गरीबी" कहा करते थे। जब लोगो ने यह कहने का कारण पूछा तो बोले कि मनुष्यो की संगत, उनके प्रेम, उनसे मेल-झोल और उनकी सेवा करने से गरीब हूँ। अर्थात् मैं सांसारिक कार्यों मे व्यस्त रहने के कारण ईश्वर का भजन रूपी धन नही कमा पाता अतः मै गरीब हूँ।)"

एक बार संत जुनैद ने कहा "जिसने ईश्वर को चाहा उसने पा लिया"। आपने कहा—यह बात नही बल्कि यूँ कहिए "जिसने पा लिया उसने ईश्वर को चाहा"।

महात्मा अबू अब्दुल्ला अल-राजी का कहना है कि महात्मा इब्न अलअबारी ने मुझे एक ऊनी चोगा दिया। मैंने संत शिबली, जो उस समय वही थे, के सिर पर एक टोपी देखी। मैंने सोचा कि वह टोपी यदि मुझे मिल जाती तो इस चोगे के साथ खूब जमती। सत शिबली जब चलने को हुए तो अपनी आदत के अनुसार इन्होने मेरी ओर देखा जिसका मतलब था कि मुझे उनके साथ चलना चाहिए। जब मैं संत-शिबली के साथ उनके घर पहुँचा तो उन्होने चोगे और टोपी दोनो को आग मे जला दिया। महात्मा राजी ने जब संत-शिबली से इसका कारण पूछा तो आपने कहा कि मैं नही चाहता कि तुम्हारा दिल ईश्वर की इच्छा के अतिरिक्त किसी

अन्य वस्तु की इच्छा करे। अतः मैंने यह दोनो चीजे जो तुम्हें ईश्वर से अलग किए हुए थी नष्ट करदी और अब तुम एकाग्र होकर ईश्वर का भजन करो।

एक बार लोगो ने प्रश्न किया कि आपके वचनो मे विरोधाभास क्यो होता है। कभी आप एक बात कहते है और कभी दूसरी बात। आपने कहा—कभी हम खुदी (अहं) की अवस्था मे होते है और कभी बेखुदी (आत्म-विस्मृति) की अवस्था मे।—

होश में बेहोशी बेहोशी में होश
सूफियो की भी निराली शान है
—ग़ाफिल बरनी

एक दिन आपको वज्द (आनन्दातिरेक) की अवस्था मे बेचेन देखकर आपके गुरु सत जुनैद ने कहा कि यदि तुम अपने आप को ईश्वर के सुपुर्द करदो तो तुम्हे शान्ति मिल सकती है। आपने उत्तर दिया कि मुझे तो उसी समय शान्ति मिल सकती है जब ईश्वर मुझे मेरे हाल पर छोड दे। यह सुन कर संत जुनैद ने कहा कि शिबली की तलवार से खून टपकता है।

आपने किसी को "या अल्लाह, या अल्लाह" कहते हुए सुन कर कहा कि तू कब तक यह वाक्य कहता रहेगा जबकि अल्लाह हर वक्त "मेरे बन्दे, मेरे बन्दे" कहता रहता है। अत. उसकी बात सुनले। उस मनुष्य ने जवाब दिया—मैं तो "मेरे बन्दे, मेरे बन्दे" सुन कर ही "या अल्लाह, या अल्लाह" कहता हूँ। आपने कहा कि फिर तो तेरे लिए यह वाक्य कहना उचित है।

परिभाषाएँ

संत शिबली ने अध्यात्म-पथ में आने वाली अवस्थाओं के सम्बन्ध मे अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए है—

तसव्वुफ (सूफीमत)

—तसव्वुफ बुद्धि और इन्द्रियो की देखभाल और निगरानी का नाम है।

—ईश्वर के दरबार मे अज्ञानी होकर जीवन-यापन करने का नाम तसव्वुफ है ।

—यह परम त्याग है और इस ससार मे अथवा आनें वाले जीवन मे परमात्मा के सिवाय अन्य किसी ओर ध्यान नही जाने देना ही इसकी विशेषता है ।

सूफी

—सूफी वही है जो ससार में इस प्रकार जीवन-यापन करे जैसे ससार मे आने से पहले थे।

—सूफी उसी समय सूफी हो सकता है जब सारे प्राणियो को अपने बच्चो जैसा समझ कर सबका बोझ सहन कर सके। और सूफी हमेशा ईश्वर की कृपालु गोद मे बच्चो की तरह पालन-पोषण पाते रहते है।

प्रेम

—जिस वस्तु से प्रेम हो उसको प्रेमी के नाम पर खर्च करना ही प्रेम है और अगर ईश्वर-प्रेम का दावा करने वाला

ईश्वर के अतिरिक्त किसी और वस्तु का इच्छुक हो तो वह ईश्वर को प्रेम करने के बजाय ईश्वर का मजाक उडाता है।

ईश्वर का भय हृदय को घुलाता है और प्रेम की अग्नि प्राण को पिघलाती है और मन की वासनाओ को फना (मिटा) कर देती है।

—प्रेम प्रज्वलित अग्नि के समान है जो परम प्रियतम की इच्छा के अतिरिक्त हृदय की समस्त वस्तुओ को जला कर खाक कर डालता है।

—प्रेम का अर्थ यह है कि अपने अस्तित्व से भी घृणा पैदा हो जाय।

मारफत (अध्यात्म-ज्ञान)

मारफत की तीन किस्मे है—

१ मारफते-इलाही जो जाप की मोहताज है।

२ मारफते-नफ्स जो कर्तव्य निभाने की मोहताज है। और

३. मारफते - बातिन (आन्तरिक अध्यात्मज्ञान) जो ईश्वर की राजी मे राजी रहने के बगैर प्राप्त नही होती।

आरिफ़ (अध्यात्म-ज्ञानी)

—आरिफ की शान यह है कि कभी तो अपने शरीर पर मच्छर नही बैठने देता और कभी पलको पर सातो आसमान और पृथ्वी को उठा लेता है।

दीवाने हैं हम मत छेड़ हमें फितरत है अजब अपनी जाहिद,
कभी जुल्मो-सितम सह लेते हैं कभी महरो-करम सहते भी नहीं।

—ग़ाफ़िल बरनी

—ज्ञानी वही है जो न तो ईश्वर के अतिरिक्त किसी का दर्शन करे और न किसी से प्रेम और बात करे और न किसी को अपने प्राणो का रक्षक समझे।

जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है।
कि हर शै में जलवा तेरा हू-ब-हू है।।
जर्रे जर्रे में गुमाँ माबूद का रखता हूँ मै
इसलिए सिजदे में सिर को जा-ब-जा रखता हूँ मै।।

—ज्ञानी का समय बसन्त ऋतु की तरह होता है जिस तरह बहार में घटाओ से गरज-गरज कर और बिजली चमक-चमक कर पानी बरसने के बाद शीतल हवाएँ चलती है, रग रग के फूल खिलते हैं और फूलों पर भाति-भांति के पक्षी चह-चहाते हैं उसी तरह ज्ञानी भी घटा की तरह रोता है और बिजली की तरह मुस्कराता है, बादल की गरज की तरह नारे लगाता है और हवा की तरह आहें भरता है और सिर को हिला हिला कर अपनी कामनाओ के फूल खिलाता है और फूलो को देख कर पक्षियो की तरह ईश्वर की याद में कीर्तन करता है।

—ईश्वर जब बलाओ को सजा देना चाहता है तो उनको ज्ञानियो के हृदय में स्थान दे देता है।

—एक बार लोगो ने पूछा कि ईश्वर ने जो पद ज्ञानियों को प्रदान किए है उनका ज्ञान किस तरह हो सकता है। आपने कहा जिस चीज का कोई प्रमाण ही न हो उसका अनु-संधान संभव नही और जो चीज छिपी हुई हो उस पर मनुष्य को शान्ति नहीं मिल सकती और जो चीज प्रकट हो उससे निराशा नहीं हो सकती।

हिम्मत

हिम्मत नाम है ईश्वर की इच्छा करने का, ईश्वर को माँगने का क्योकि ईश्वर के सिवा किसी दूसरे की इच्छा करने को हरगिज हिम्मत का नाम नही दिया जा सकता और हिम्मत वाला ईश्वर के सिवा कभी दूसरी तरफ ध्यान नही दे सकता। परन्तु श्रद्धालु-जन बहुत शीघ्र दूसरी तरफ ध्यान देने लगते है।

फ़ुक्र (दैन्य)

ईश्वर के सिवा हर वस्तु से बेपरवाही (उदासीनता) का नाम फ़ुक्र है।

ज़ुहद (तपस्या)

ईश्वर की याद मे ससार से बेनियाज़ (नि स्पृह,बेपरवाह) हो जाने का नाम ज़ुहद है।

दरवेश

दरवेशो के चार सौ आध्यात्मिक पद है। जिनमे सबसे तुच्छ पद यह है कि अगर ससार की सारी धन-सम्पत्ति भी उनको प्राप्त हो जाय और ससार के सारे मनुष्य उनके धन-दौलत को इस्तेमाल करे तव भी उन्हे अगले दिन के खाने की फिक्र न हो।

सच्चा

सच्चा वही है जो हराम (धर्म-विरुद्ध) वस्तु को जीभ पर न रखे।

शरीअत-व-तरीकत

ईश्वर का भजन-पूजन शरीअत है (कर्म-काण्ड है) और ईश्वर-दर्शन की इच्छा तरीकत (आन्तरिक साधना) है।

वाणी

आप कहा करते थे कि मेरा पूरा जीवन इसी इच्छा मे व्यतीत हो गया—काश, एक क्षण के लिए ईश्वर से मुझे ऐसा एकान्त प्राप्त हो जाता कि मेरा अस्तित्व बाकी न रहता। और चालीस वर्ष से यह इच्छा है कि काश, एक क्षण के लिए ईश्वर को जान और पहचान सकता। और काश मैं पहाड़ों में इस तरह छिप जाता कि न तो ससार मुझको देख सकता और न मेरा हाल जान पाता।

मैं अधर्मियो से भी अधिक अपने आपको अपमानित महसूस करता हूँ कि मै मन, ससार, शैतान और इच्छाओ-रूपी बलाओ मे गिरफ्तार हूँ। और मुझे तीन मुसीबते यह भी लगी हुई हैं—पहली, मेरे हृदय से ईश्वर दूर हो गया है। दूसरी, मेरे हृदय में असत्य का वास हो गया है। और तीसरी, मेरा मन ऐसा अधर्मी बन गया है कि उनको इन मुसीबतो को दूर करने का विचार तक नही आता।

ससार प्रेम का और परलोक कृपा का घर है। परन्तु इन दोनो से हृदय अच्छा है क्योकि यह ईश्वरीय-ज्ञान का घर है।

आप कहा करते थे कि जब रास्ते मे मेरी नजर प्राणियो पर पड़ती है तो मैं देखता हूँ कि हर भाग्यशाली के माथे पर

"शुभ" और हर अभागे के माथे पर "अशुभ" शब्द लिखा होता है।

आप कहा करते थे कि ईश्वर के दरबार से कभी तो उपहार प्रदान किया जाता है और कभी कोडे मारे जाते है।

असीम को अपनी तरफ बुलाने वाला कभी सीमित नही हो सकता।

आप कहा करते थे कि मन और बुद्धि से जिस तत्व को पहचाना जा सके वह मिथ्या और अलाभकारी है क्योकि ईश्वर विचार और ज्ञान की पहुँच से बाहर है।

ईश्वर को जानने वाला कभी ईश्वर के सिवा किसी से नही मिलता और जो ऐसा करते है वह ईश्वर को कदापि नही पा सकते।

दावत तीन प्रकार की होती है—पहली ज्ञान की दावत, दूसरी अध्यात्मा ज्ञान की दावत और तीसरी अनुसधान अथवा निरीक्षण की दावत। ज्ञान की दावत का अर्थ है कि अपने स्वरूप के निरीक्षण के बाद अपने नफ्स (मन) का तत्व-ज्ञान प्राप्त करे। विश्वास का तत्व-ज्ञान हमें पैगम्बरो से प्राप्त हुआ क्योकि विश्वास के तत्व-ज्ञान का अर्थ यह है कि जो हृदय मे बिना किसी मार्ग-प्रदर्शन के और बिना किसी प्रकाश के माध्यम के प्राप्त हुआ हो और परम-विश्वास वो ज्ञान है जिसकी सीमा तक ससार मे कोई हिदायत के प्रकाश के बिना नही पहुँच सकता।

मनुष्य का मनुष्य की नजर मे प्रकट होना दासत्व और ईश्वर के गुणो का प्रकट होना दर्शन कहलाता है।

लोगों से प्रेम करना पवित्रता और सरलता का चिन्ह है। और ईश्वर के जाप के सिवा किसी दूसरे के नाम का जाप करने के लिए मुँह खोलना विकार है। और ईश्वर के सिवा हर वस्तु से सम्बन्ध तोड़ लेना सत्य का चिन्ह है।

अपनी आवश्यकताओ से अधिक दूसरे प्राणियो की आवश्यकताओ का ध्यान रखना महान साहस है ।

प्रत्येक वह सास जो ईश्वर के लिए हो, तमाम ससार के पूजा करने वालो की पूजा से श्रेष्ठ है ।

जिस दिन भी मुझ पर भय की प्रबलता हो जाती है उसी दिन मेरे हृदय पर अध्यात्मज्ञान और चेतावनी के दरवाजे खुल जाते है ।

कृपाओ को अनदेखा करके दर्शन शुक्र (कृतज्ञता, उपकार मानना) है।

रात को एक घडी गफलत (असावधानी, बेसुधी) के साथ सोने से परलोक का रास्ता एक हजार वर्ष पीछे रह जाता है और अध्यात्म ज्ञानी के लिए थोड़ी सी गफलत भी द्वैतवाद है

जिसने ईश्वर की पवित्रता को पा लिया वह अध्यात्म-पद मे उस साधक से बढ जाता है जिसको ईश्वर की कृपा और क्षमा ने सहारा दिया हो। और जो ईश्वर से दूर हो जाता है ईश्वर भी उससे दूरी ग्रहण कर लेता है।

जो मनुष्य प्रवचन और उपदेश सुनने के लिए इसलिए जाता है कि उसे प्रवचन और उपदेश सुनने की आदत हो गई है, उसको प्रवचन और उपदेश सुनने से कुछ लाभ नहीं होता बल्कि वह मनुष्य कष्ट का अधिकारी हो जाता है।

ईश्वर के अतिरिक्त सब से मुँह मोड कर हमेशा ईश्वर की आधीनता मे कर्म रत रहो। आपने आगे कहा और यदि मैं पूरी तरह ईश्वर से परिचित हो जाता तो ईश्वर के सिवा कभी किसी से भयभीत न होता।

मैंने अपना सारा जीवन इसी इच्छा मे व्यतीत कर दिया कि ईश्वर के साथ केवल एक सास ऐसा ले सकूं जिसकी खबर हृदय को भी न होने पाए, परन्तु आज तक मेरी यह इच्छा पूरी नही हुई।

यदि पूरे ससार का ग्रास बना कर दूध पीते बच्चे के मुँह में रख दिया जाए तब भी मैं यही समझूंगा कि उसका पेट नहीं भरा। और यदि सारी दुनिया मेरे अधिकार मे आ जाए और मैं उसको एक यहूदी के सुपुर्द कर दूं तो उसके स्वीकर कर लेने पर मैं उसका आभारी रहूँगा। (इसका भी यही अर्थ है कि ईश्वर के सिवा हर कीमतो से कीमती ससारी वस्तु अधर्मी तक को दे देने से कोई नुकसान नही होता—हाँ साधक यदि ईश्वर की याद भूल जाए तो कही का नही रहता)

ससार मे यह शक्ति बिल्कुल नही कि मुझे अपना बना कर मेरे हृदय पर काबू पा सके, फिर भला संसार उस मनुष्य पर किस तरह काबू पा सकता है जो ईश्वर से परिचित हो।

आप अक्सर यह कहा करते थे कि यदि ईश्वर मेरी गर्दन मैं आकाश का पट्टा और पैरो मे पृथवी की बेडी डाल दे और सारा संसार भी शत्रु हो जाए तब भी मैं उससे मुंह नही मोड़ सकता।

आप सूफी-सन्त महात्मा मन्सूर अल हल्लाज के सम्बन्ध मे फरमाते हैं कि "हल्लाज और मैं एक ही बात पर ईमान

लाते हैं, लेकिन मेरे पागलपन ने मुझे बचा लिया और उसकी बुद्धिमत्ता ने उसका विनाश कर दिया।"

जब लोगो ने आपसे तौहीद (ईश्वर को एक मानना, एक जानना) के विषय पर कुछ बोलने के लिए कहा तो आपने फरमाया कि तौहीद की खबर देने वाले को नास्तिक और अधर्मी कहा जाता है, उसकी तरफ इशारा करने वाले को मूर्तिपूजक कहा जाता है, और उसके सम्बन्ध मे बातचीत करने वाले को गाफिल (बेसुध) कहते है, और चुप रहने वाले को "पूर्ण-पुरुष" कहा जाता है। और जो लोग यह समझते है कि हमने उसको प्राप्त कर लिया वह झूठे है।

(तौहीद के विषय मे सन्त जुनैद की जीवनी में लिख दिया है, यहाँ दोहराने की वजह से नही लिखा जा रहा। पाठक कृपया इसके विषय मे सन्त जुनैद की जीवनी मे पढ़ ले।)

महाप्रयाण

मृत्यु के समय जब आपकी आँखो के सामने अँधेरा छा गया तो आप इतने बैचैन हुए जिसका वर्णन नही किया जा सकता। उस समय आप लोगो से राख माँग कर अपने सिर पर डालते रहते और जब लोगो ने बेचैनी का कारण पूछा तो बोले कि इस समय मुझे शैतान से ईर्ष्या हो रही है। और ईर्ष्या की अग्नि मेरे तमाम शरीर को भस्म किए दे रही है। इस ईर्ष्या का कारण बताते हुए आपने कहा ईश्वर ने कृपा करके शैतान को तो उपहार-स्वरूप "धिक्कार" भेंट कर दिया, परन्तु मुझ प्यासे को ईश्वर ने वह उपहार इसलिए नही दिया क्योकि इस उपहार को वह पहले ही शैतान को दे चुका था।

और अब मेरी बेचैनी का कारण मेरा यह असमजस है कि जब ईश्वर के उपहार का अधिकारी शैतान कभी नही हो सकता, तो यह उपहार स्वयं ईश्वर ने उसे क्यो प्रदान किया। यह कह कर आप खामोश हो गए। परन्तु फिर बेचैनी की अवस्था मे बोले कि इस समय एक हवा तो कृपा की चल रही है और दूसरी हवा सकट की चल रही है। जिन पर कृपा की हवा चली उनको लक्ष्य तक पहुँचा दिया और जिन पर सकट की हवा चली वह लोग रास्ते मे ही रह गए। और उनके सामने इस तरह की रुकावटे आ गई कि वह मजिल तक न पहुँच सके। परन्तु मुझे यह बेचैनी है कि मेरे ऊपर न जाने कौन-सी हवा चलने वाली है। यदि मुझे यह पता चल जाए कि कृपा की हवा चलेगी तो मैं कृपा की आशा मे तमाम निराशाओ को प्रसन्नता के साथ सहन कर सकता हूँ, और ईश्वर न करे सकट की हवा चल गई तो ऐसी मुसीबतो का सामना करना पडेगा जिसके सामने मुसीबते तुच्छ हैं।

मृत्यु के समय आप अपने यह दो शेर पढते रहे—

१. **जिस घर में तू वास करता है।**
उसे दिये की जरूरत नहीं होती ।।

२. **तेरा चेहरा हमारी दलील की उम्मीद है।**
जिस दिन लोग दलीलें पेश कर सकेंगे ।।

फिर मृत्यु से पहले ही जब कुछ लोग नमाजे-जनाजा पढने के ख्याल से आ पहुँचे तो आपने अपनी दिव्य दृष्टि से उन लोगो के विचारो को जान कर कहा कि यह आश्चर्य की बात है कि अभी तो मैं जीवत हूँ और लोग जनाजे की नमाज पढने चले आए हैं। उस समय लोगो ने कहा कि "ला इलाह

इल्लिल्लाह्'' कहिए (ईश्वर ही है और ईश्वर के अतिरिक्त कुछ नही है—यह कलमा पढते है।) तो आपने कहा—जब ईश्वर के अतिरिक्त कोई गैर है ही नही तो नफी किसकी करूं। लोगों ने कहा कि शास्त्र की आज्ञा है कि ऐसे समय मे कलमा पढना चाहिए। आपने कहा—प्रेम का सम्राट कह रहा है कि मैं रिश्वत स्वीकार नही करूँगा। इसके बाद किसी ने ऊँची आवाज मे कलमा पढने का उपदेश दिया तो आपने कहा—मुर्दा जीवित को नसीहत करता है। फिर कुछ देर बाद जब लोगो ने पूछा कि अब आपकी हालत क्या है तो आपने कहा कि मैं अपने प्रेमी से मिल गया। यह कह कर संसार से विदा हो गए। मृत्यु के बाद किसी ने स्वप्न मे देख कर आपसे प्रश्न किया कि नकीरीन (कब्र मे मुर्दे से सवाल-जवाब करने और यातना देने वाले दो फरिश्ते) से आपने कैसे छुटकारा प्राप्त किया। आपने कहा कि जब उन्होने मुझ से प्रश्न किया कि तेरा ईश्वर कौन है तो मैंने उत्तर दिया कि मेरा ईश्वर वो है जिसने आदि पुरुष आदम की रचना करके तुम्हें और दूसरे फरिश्तों को सिजदे (दडवत प्रणाम करने) की आज्ञा दी और उस समय मै हजरत आदम के पीछे मौजूद रहकर तुम सबको सिजदा करते देख रहा था। यह जवाब सुन कर नकीरीन ने कहा कि इस मनुष्य ने तो हजरत आदम की सम्पूर्ण संतानो की तरफ से जवाब दे दिया और यह कह कर वापिस चले गए।

किसी महात्मा ने आपको स्वप्न में देख कर पूछा कि ईश्वर ने आपके साथ क्या व्यवहार किया। आपने कहा—संसार में मैंने अपनी महानता के जो बड़े-बडे दावे किए थे ईश्वर ने उनके बारे में मुझसे कोई पूछताछ नही की। हाँ,

एक बात अवश्य पूछी गई कि एक बार मैंने यह कह दिया था इससे अधिक हानिकारक और कोई बात नही कि मनुष्य स्वर्ग का अधिकारी हो और नरक में भेज दिया जाय। इस पर ईश्वर ने कहा कि बन्दो (भक्तो) के लिए सबसे अधिक हानिकारक यह है कि वह माया-मोह के जाल मे फँस कर मेरे दर्शन से वंचित हो जाएँ।

किसी ने आपको स्वप्न मे देख कर प्रश्न किया कि आपने परलोक के बाजार को कैसा पाया। आपने कहा कि उस बाजार मे बिल्कुल रौनक नही है क्योकि उसमे दिल-जले और दिल-टूटे मनुष्यो अर्थात् प्रेमी-जनो के अतिरिक्त कोई नही दिखाई देता। और ऐसे लोगो की यहाँ इतनी गहमा-गहमी है कि जले हुए दिलवालो के घावो पर मरहम लगा कर उनकी जलन को दूर कर दिया जाता है और टूटे हुए दिलो को जोड़ कर उनकी टूटन दूर कर दी जाती है और इसके बाद वह ईश्वर के दर्शन के अतिरिक्त किसी दूसरी चीज पर दृष्टि नही डालते।

सूफी-संत

महात्मा अबुल हसन खिरकानी

महान सूफी-सन्त महात्मा फज्ल अहमद खाँ साहब के विषय मे प्रसिद्ध है कि आप यह बता दिया करते थे कि आपका कौन-सा शिष्य किस स्थान पर बैठकर भजन-पूजन करता है। जब आपसे पूछा कि हजरत जब एक स्थान पर इतने सारे साधक ध्यान करते है तो आपको यह कैसे मालूम हो जाता है कि इस जगह अमुक और इस जगह अमुक साधक बैठते हैं। आपने फरमाया इसमे हैरत की क्या बात है। अरे बाग मे कितनी किस्मो के फूल होते हैं परन्तु जिस तरह तुम यह जान लेते हो कि बाग में अमुक जगह गुलाब का फूल खिल रहा है, अमुक जगह चमेली का फूल महक रहा है, अमुक जगह गैंदे का फूल लहलहा रहा है, आदि आदि। इसी प्रकार मुझे भी मालूम हो जाता है कि कौन-सी जगह कौन-सा साधक बैठता है। यह बात तो समझ मे आती है क्योकि प्रत्येक साधक की अपनी अलग सूक्ष्म किरणे होती हैं, अपनी अलग सुगन्ध होती है जिन्हें पहुँचे हुए सन्त पहचान कर जान लेते है कि यह किरणे, यह सुगन्ध किस साधक की है। परन्तु आश्चर्य तब होता है जब पौधा लगने से पहले ही कोई माली यह बता दे कि इस स्थान

से गुलाब की महक आती है और उस जगह कई वर्ष पश्चात वास्तव मे कोई मनुष्य गुलाब का पौधा लगा दे और उसमें गुलाब के फूल खिल उठे, महक उठे। इसी प्रकार हैरत तब होती है जब कोई महात्मा किसी महात्मा के जन्म से पचासो वर्ष पहले ही बता दें कि असुक स्थान से उन्हे एक सन्त की खुशबू आती है और फिर वास्तव मे उस स्थान पर किसी सन्त का जन्म हो जाय। कहते है महान सूफी-सन्त महात्मा बायजीद बिस्तामी वर्ष मे एक बार शहीदो की समाधियो के दर्शन करने के लिये यात्रा किया करते थे और जब भी खिरकान नामक स्थान पर पहुँचते तो मुँह ऊपर उठाकर इस तरह साँस खीचते जैसे कोई खुशबू सूंघने के लिए साँस खीचता है। एक वार शिष्यो ने पूछा कि आप किस चीज की खुशबू सूंघते है, हमे तो कोई सुगन्ध नही आती। आपने कहा कि मुझे खिरकान की धरती से एक ईश्वर भक्त की सुगन्ध आती है, जिसका नाम अबुल हसन होगा और वह खेती-बाडी करके अपने परिवार का पालन-पोषण करेगा। वह अध्यात्म-पद मे मुझ से तीन गुना श्रेष्ठ होगा। आगे चलकर यह भविष्य वाणी सच सावित हुई और खिरकान मे महात्मा अबुल हसन एक महान सूफी-सन्त हुए।

तपस्या

सूफी-सन्त महात्मा अबुलहसन खिरकानी का बीस वर्ष तक यह नित्य-नियम रहा कि रात के पहले पहर की नमाज के बाद अपने शहर खिरकान से चलकर सन्त बायजीद बिस्तामी की समाधि पर पहुँच कर यह प्रार्थना करते कि हे ईश्वर जो अध्यात्म-पद तूने महात्मा बायजीद को प्रदान किया वही

मुझ को भी प्रदान करने की कृपा कर दे। इस प्रार्थना के बाद खिरकान वापिस आकर प्रभात की नमाज अदा करते। आप शिष्टता का इतना ध्यान रखते थे कि बिस्ताम से इस नीयत से उल्टे पाँव वापस होते कि कही सन्त बायजीद की समाधि की शान में कोई अशिष्टता न हो जाय। इस तरह बारह वर्ष तक आप इस नित्य-नियम का पालन करते रहे। बारह वर्ष के बाद सन्त बायजीद की समाधि से आवाज आई कि ऐ अबुलहसन, अब तेरी उन्नति का समय आ गया है। आपने उत्तर दिया कि मैं तो बिलकुल अनपढ होने के कारण शास्त्रो से अनभिज्ञ हूँ, अतः आप मेरी सहायता कीजिए। आवाज आई कि मुझे जो कुछ अध्यात्म-पद प्राप्त हुआ है वह केवल तुम्हारी बदौलत प्राप्त हुआ है। आपने जवाब दिया कि आप तो मेरे जन्म से उन्तालीस वर्ष पहले ही ससार से विदा हो चुके है। आवाज आई कि तू सच कहता है, परन्तु वास्तविकता यह है कि जिस समय भी मैं खिरकान की धरती से गुजरता था तो इस धरती से आकाश तक एक प्रकाश-पुञ्ज दृष्टिगोचर होता था। और मैं अपनी एक आवश्यकता को पूरा करने के लिए तीस वर्ष तक प्रार्थना करता रहा परन्तु मेरी प्रार्थना स्वीकार नही हुई और मुझ से यह कहा गया कि यदि यह प्रकाश-पुञ्ज तेरे पाप क्षमा करने की सिफारिश कर दे तो हम तेरी प्रार्थना स्वीकार कर लेगे। अतः मैंने उस प्रकाश-पुञ्ज से मेरी सिफारिश करने की प्रार्थना की और उसकी सिफारिश पर मेरी प्रार्थना स्वीकार करली गई। इस घटना के बाद जब आप खिरकान वापस आए तो तमाम शास्त्र आपको स्वय ही कंठस्थ हो चुके थे।

परीक्षा

साधक को पूर्णता प्रदान करने से पहले ईश्वर उसको

सिद्धियाँ प्रदान करता है तथा नाना प्रकार के अन्य माया के प्रलोभन देता है। इससे ईश्वर उसकी जाँच-पडताल करके यह देखता है कि उसका मन सांसारिक वासनाओ से निर्मल हुआ है या नही। क्योकि यदि साधक का मन पूरी तरह निर्मल नही हुआ है तो वह इन सिद्धियो और मायावी प्रलोभनो की ओर उन्मुख होकर सिद्धियो आदि का अपने स्वार्थ के लिए प्रयोग करने लगता है और इस तरह अपना आध्यात्मिक नुकसान तो करता ही है, ससार मे भी नाना प्रकार की बुराइयो के पैदा होने का कारण बनता है। अलग-अलग साधको से अलग-अलग प्रकार की परीक्षा ली जाती हैं। अत जब समय आया तो संत खिरकानी की परीक्षा भी ली गई। एक बार जब आप अपने बाग की खुदाई कर रहे थे तो एक जगह से चाँदी निकली। आपने उस जगह को बन्द करके दूसरी जगह खुदाई शुरू की तो वहाँ से सोना निकला। आपने वह जगह भी बन्द करदी और तीसरी जगह खोदना शुरू किया तो वहाँ से मोती निकले। आपने वह जगह भी वन्द करदी और चौथी जगह खोदना शुरू किया तो वहाँ से हीरे-जवाहिरात निकले। परन्तु आपने किसी को भी हाथ नही लगाया और कहा कि अबुलहसन इस माया-जाल मे नही फँस सकता। यह तो क्या यदि यह लोक और परलोक दोनो मिल जाएँ तब भी तुझ से मुँह नही मोड़ सकता।

हल चलाते-चलाते जब नमाज का समय आ जाता तो आप बैलो को छोडकर नमाज अदा करने लगते और जब नमाज पढ़कर खेत पर पहुँचते तो जमीन जुती हुई तैयार मिलती।

महात्मा अबुल उमर

एक बार सूफी-सन्त महात्मा अबुल उमर अबू अबास ने, जिन्हे सन्तो का सन्त कहा जाता था, आपसे कहा कि चलो मैं और तुम पेड़ पर चढकर छलाँग लगाएँ। आपने कहा कि चलिए मैं और आप स्वर्ग और नर्क से बेपरवाह (उदासीन) होकर और परमेश्वर का कृपालु हाथ पकड़ कर छलाँग लगाएँ। फिर एक बार महात्मा अबुल उमर ने पानी मे हाथ डालकर जीवित मछली पकड़ कर महात्मा खिरकानी के सामने रख दी। इसके उत्तर में महात्मा खिरकानी ने दहकते हुए तन्दूर मे हाथ डालकर जीवित मछली निकाल कर उनके सामने रख दी और कहा कि आग मे से जीवित मछली पकड़ कर पानी मे से मछली निकालने से कही अधिक अर्थपूर्ण है। फिर एक दिन महात्मा अबुल उमर ने कहा कि चलो हम दोनो तन्दूर मे कूद जाएँ फिर देखे जीवित कौन निकलता है। आपने कहा कि इस तरह नही बल्कि हम दोनो अपनी-अपनी नेस्ती (अस्तित्व के अभाव की अवस्था) मे गोता लगा कर देखे कि परमेश्वर के अस्तित्व से कौन बाहर आता है। यह सुनकर महात्मा उमर मौन हो गए।

महात्मा उमर कहा करते थे कि महात्मा अबुल हसन खिरकानी के भय के कारण मुझे बीस वर्ष तक नीद नही आई और अध्यात्म-पथ मे जिस स्थान पर मै पहुँचता हूँ उन्हे अपने से चार कदम आगे ही पाता हूँ। महात्मा उमर ने आगे कहा कि दस बार मैंने यह कोशिश की कि किसी तरह मैं उनसे पहले सन्त बायजीद की समाधि पर पहुँच जाऊं, परन्तु सफलता नही मिल सकी क्योकि ईश्वर ने उन्हे ऐसी शक्ति प्रदान की है कि

तीन मील का रास्ता क्षणभर मे तय करके बिस्ताम पहुँच जाते है।

चमत्कार (सिद्धि) के लिए तपस्या

आप कहा करते थे कि चमत्कारी बनने के लिए आवश्यक है कि एक दिन खाना खा कर तीन दिन तक उपवास किया जाए। फिर एक बार खाना खा कर चौदह दिन तक उपवास किया जाए। फिर एक बार खाना खा कर तीस-चालीस दिन तक भूखा रहा जाए। फिर एक बार खाने के बाद चार महीने तक कुछ न खाया जाए। फिर एक बार खाने के बाद एक वर्ष तक भूखा रहना चाहिए। और जब एक साल तक भूखा रहने की ताकत तुम्हारे अन्दर पैदा हो जाएगी तो आकाश से एक ऐसी चीज प्रकट होगी जिसके मुँह मे साँप जैसी कोई चीज होगी और वह तुम्हारे मुँह मे दे दी जाएगी जिसके बाद कभी खाने की इच्छा नही होगी। आप कहते है कि इस प्रकार तपस्या और उपवास करते-करते जब मेरी आँते बिलकुल सूख गई उस समय वह साँप प्रकट हुआ। मैने ईश्वर से विनती की कि मुझे किसी के माध्यम की आवश्यकता नही। जो कुछ भी प्रदान करना है बिना किसी माध्यम के प्रदान कर दे। इसके बाद मेरे पेट मे एक ऐसी मिठास पैदा हो गई जो कस्तूरी से अधिक सुगन्ध वाली थी और शहद से अधिक मीठी थी। फिर आवाज आई कि हम तेरे लिए खाली पेट से खाना पैदा करेगे और प्यासे जिगर से पानी प्रदान करेगे। आपने अपने शिष्यो से कहा कि यदि उसकी यह आज्ञा न होती तो मैं ऐसी जगह से खाना खाता और पानी पीता कि ससार को पता भी न चलता।

चालीस वर्ष तक कभी आपने एक क्षण के लिए भी आराम नही किया और रात की नमाज की वुजू (मुँह-हाथ-पैर धोना) से ही प्रात:काल की नमाज अदा करते रहे। अर्थात रात की नमाज पढ़ने के बाद प्रात:काल की नमाज के समय तक पूर्ण पवित्रता से ईश्वर-भजन करते रहते थे और एक क्षण को भी सोते नही थे। चालीस वर्ष इस प्रकार भजन-पूजन करने के बाद एक दिन शिष्यो से बोले कि मुझे तकिया दे दो, मै आराम करना चाहता हूँ। शिष्यो को यह बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होने विनयपूर्वक पूछा कि आज आपको आराम की इच्छा क्यो हुई। आपने कहा कि आज मैंने ईश्वर की बेनियाजी (किसी चीज की चाह या आवश्यकता न होना, नि:स्पृहता, उदासीनता) और बेपरवाही का दर्शन कर लिया है। परन्तु इससे पहले तीस वर्ष तक ईश्वर के भय के अतिरिक्त मेरे दिल मे अन्य कोई विचार नही आया। यह एक बड़ी रहस्यमयी बात है। ईश्वर को हमारे भजन-पूजन की न तो चाह है न आवश्यकता, बल्कि भजन-पूजन की आवश्यकता तो स्वयं हमे है। क्योकि ईश्वर का भजन-पूजन करने ही से हमे सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है, और सच्चा ज्ञान प्राप्त हो जाने के बाद ही हम मनुष्य कहलाने के अधिकारी होते है और तभी हमें यह समझ आती है कि संसार मे जीवन कैसे व्यतीत करना चाहिए ताकि यह ससार सुख, शान्ति और आनन्द का स्थान बन जाय। अत: हम भजन-पूजन करे या न करे इससे ईश्वर पर कुछ प्रभाव नही पड़ता—वह तो सर्वशक्तिमान, सर्वसमर्थ, सर्वज्ञ रहेगा ही। वह हमारी इस बात से बेनियाज और बेपरवाह रहकर कि हम उसका भजन-पूजन करते है अथवा नही, हमेशा हमारे ऊपर दया-कृपा करता रहता है। अत: हमे

भी चाहिए कि हम इस बात से बेपरवाह और उदासीन रहकर कि ईश्वर हमे अध्यात्म-पद प्रदान करता है या नही, सच्चे दिल से उसका भजन-पूजन करते रहे। इस रहस्य का ज्ञान हो जाना ही ईश्वर की बेनियाजी और बेपरवाही का दर्शन होना है। और ईश्वर के भय से आशय यह सोचना है कि यदि हम ईश्वर का भजन-पूजन नही करेगे तो पाप के भागी बनेगे और इस अपराध की न जाने क्या सजा दी जाएगी। उस सजा से बचने के लिए जो भजन-पूजन किया जाता है वह "ईश्वर के भय" के अन्तर्गत आता है। और यह "सच्चा भजन-पूजन" नही होता। महात्मा खिरकानी कहते है कि मैंने इसी भय के कारण तीस वर्ष तक आराम नही किया क्योकि आराम करने को मैं बेअदबी (अशिष्टता) समझता था। परन्तु अब जब मुझे यह रहस्य मालूम हो गया है तो आराम करने के लिए कहा है।

जीवन की घटनाएँ

एक बार कुछ आदमी एक यात्रा पर जाना चाहते थे परन्तु रास्ते मे डाकुओ और लुटेरो का भय था। अतः उन्होने महात्मा खिरकानी से विनय की कि हमे कोई ऐसी प्रार्थना बता दीजिए जिससे हम मार्ग के खतरो से सुरक्षित रह सके। आपने कहा कि जब तुम्हे किसी मुसीबत का सामना हो तो मुझको याद कर लेना। परन्तु लोगो ने आप की बात पर कोई ध्यान नही दिया और अपनी यात्रा आरम्भ कर दी। मार्ग मे उन्हे डाकुओ ने घेर लिया तो एक आदमी ने जिसके पास बहुत धन-सम्पत्ति थी, सच्चे दिल से महात्मा खिरकानी का नाम लिया और देखते ही देखते वह मनुष्य अपने धन-सम्पत्ति तथा

ऊँट सहित उन डाकुओ और अन्य साथी यात्रियो की आँखो से ओझल हो गया और लुटने से बच गया। परन्तु बाकी तमाम लोगों को डाकुओ ने लूट लिया। जब डाकू चले गए तो वह आदमी फिर सबको दिखाई देने लगा। जब उससे लोगो ने पूछा कि तू कहाँ गायब हो गया था तो उसने कहा कि मैने सच्चे दिल से महात्मा अबुल हसन खिरकानी को याद किया था और ईश्वर ने अपनी दया से मुझे सबकी दृष्टि से ओझल कर दिया।

जब वह यात्री खिरकान वापिस आए तो सन्त अबुल हसन खिरकानी के पास गए और बोले कि हम सच्चे दिल से ईश्वर को याद करते रहे इसके बावजूद भी हमारी धन-सम्पति लूट ली गई। परन्तु जिस मनुष्य ने आपको याद किया वह बच गया, इसका क्या कारण है ? महात्मा खिरकानी ने कहा कि तुम केवल स्वार्थ के लिए ईश्वर को याद करते थे और मैं सच्चे दिल से ईश्वर को याद करता हूँ। अतः तुम्हे चाहिए कि तुम मुझे याद कर लिया करो क्योकि मै तुम्हारे लिए ईश्वर को याद करता हूँ और ईश्वर को स्वार्थ के लिए याद करने से कोई लाभ नही होता।

महात्मा खिरकानी के एक शिष्य को यह पता चला कि उस समय के सबसे बड़े संत लबनान नामक पहाड़ पर आया करते है। अतः उनके दर्शन करने के लिए लबनान पहाड़ पर जाने की उसने आपसे आज्ञा माँगी। आपने आज्ञा दे दी। जब वह लबनान पहाड़ पर पहुँचा तो देखा कि एक जनाजा रखा हुआ है और तमाम लोग किसी के आने का इन्तजार कर रहे है। उस शिष्य ने जब उन लोगो से पूछा कि तुम्हे किसका इन्जार है तो उन्होने कहा कि यहाँ पाँचो वक्त की नमाज पढ़ाने के लिए संसार के सबसे बड़े सूफी-सत आते है।

हमे उन्ही का इन्तजार है। यह सुन कर वह शिष्य बहुत प्रसन्न हुआ कि बहुत शीघ्र उन महान सत का दर्शन हो जाएगा। अतः कुछ ही देर बाद वह सत वहाँ आ गए। लोग पक्तियो मे खड़े हो गए और नमाजे-जनाजा शुरू हो गई। परन्तु जब उस शिष्य ने ध्यान से देखा तो पता चला कि स्वय उसके सत्गुरु सत अबुलहसन खिरकानी ही नमाज पढा रहे है। यह देख कर वह डर के मारे बेहोश हो गया। होश आने के बाद देखा तो लोग जनाजे को दफ्न कर चुके थे और उसके गुरू वहाँ से जा चुके थे। फिर उस शिष्य ने जो कुछ देखा था उसकी सच्चाई जानने के लिए लोगो से पूछा कि इन सत महाराज का क्या नाम है। लोगो ने कहा कि यही तो ससार मे इस समय के सबसे बड़े सत महात्मा अबुलहसन खिरकानी थे और अब अगली नमाज के समय फिर आयेगे। अत वह शिष्य इन्तजार करने लगा और अब आप नमाज पढा चुके तो उसने आगे बढ़ कर चरण-स्पर्श करके प्रणाम किया और आपका दामन थाम लिया परन्तु वह इतना भयभीत था कि उसके मुँह से एक शब्द भी नही निकला। आपने उसे अपने साथ आश्रम वापस ले जाते हुए कहा कि तूने यहाँ जो कुछ देखा है उसको कभी किसी से मत कहना क्योकि मैंने परमेश्वर से प्रार्थना की है कि मुझे ससार की दृष्टि से छिपाकर रखना ताकि ससार को मेरे अध्यात्म-पद का पता न चले।

एक शिष्य ने महात्मा खिरकानी से कहा कि मैं इराक जाकर हदीस (हजरत मुहम्मद साहब के कार्य-कलापो का सग्रह) पढना चाहता हूँ। आपने कहा—क्या यहाँ कोई हदीस पढ़ाने वाला नही है। उसने कहा कि यहाँ तो कोई प्रसिद्ध हदीस पढ़ाने वाला नही है। आपने कहा कि एक तो मैं ही मौजूद हूँ।

परमेश्वर ने मुझे अनपढ होने के बावजूद सारा ज्ञान प्रदान किया है और हदीस तो मैंने स्वयं हुजूर अकरम (अ० मुहम्मद सा०) से पढ़ी है। उस शिष्य को आपकी बात का विश्वास न हुआ क्योकि हजरत मुहम्मद साहब का देहावसान तो आपके जन्म से कई सौ वर्ष पहले ही हो चुका था। परन्तु उसी रात उस शिष्य को स्वप्न मे हजरत मुहम्मद साहब के दर्शन हुए और उन्होने उससे कहा कि भक्तजन झूठ नही बोलते। इस स्वप्न के बाद वह शिष्य महात्मा खिरकानी से हदीस पढ़ने लगा। हदीस पढ़ाते हुए कभी-कभी आप कहते कि वह हदीस सत्य नही है बल्कि बाद मे किसी ने लिखदी है। उस शिष्य ने पूछा कि आपको कैसे मालूम हो जाता है कि यह हदीस सत्य है और यह हदीस असत्य है। आपने कहा कि जब तू हदीस पढ़ता है उस समय मैं ह० मुहम्मद सा० के दर्शन करता रहता हूँ। और किसी हदीस पर तो हुजूर का मुख-मण्डल खिल-उठता है और किसी हदीस पर आपके माथे पर बल पड़ जाते है—जिससे मुझे अनुमान हो जाता है कि कौन-सी हदीस सत्य हैं और कौन-सी असत्य

एक बार सूफी संत महात्मा अबू सईद अपने कुछ शिष्यो के साथ महात्मा खिरकानी के यहाँ आये। उस समय आपके घर में कुछ रोटियाँ ही थीं तथा आटा भी नही था कि और खाना तैयार किया जा सके। अतः आपने अपने सेवक को आज्ञा दी कि इन रोटियो के बर्तन पर कपडा ढक दे और बिना देखे बरतन में से आवश्यकतानुसार रोटियाँ निकाल-निकाल कर अतिथियो को देता रह। जब सब महमानो ने भोजन कर लिया तो सेवक ने जिज्ञासावश कपड़ा उठा कर देखा तो बर-तन खाली था। आपने उससे कहा कि यह तूने क्या किया।

यदि चादर यूँ ही ढकी रहने देता तो अनन्त काल तक बरतन मे से रोटियाँ निकलती रहती।

खाना खाने के बाद महात्मा सईद ने संत खिरकानी से भजन-कीर्तन सुनने का अनुरोध किया। यद्यपि आपने कभी सगीत नही सुना था परन्तु आतिथ्य के विचार से सगीतकारो को बुलाकर अतिथियो को भजन-कीर्तन सुनवाने का इन्तजाम कर दिया। जब सगीतकार चुटकियाँ बजा-बजा कर भजन गा रहे थे तो महात्मा सईद ने भाव-विभोर हो कर कहा कि अब खड़े होने का समय आ गया है। यह सुन कर सत खिर-कानी खड़े होकर आनन्दातिरेक मे झूमने लगे और तीन बार आस्तीन छिटक कर इतने जोर से जमीन पर पाँब मारे कि आश्रम की दीवारे तक हिल गईं। महात्मा सईद ने घबडा कर विनय की कि बस कीजिए, मकान के गिरने का खतरा हो गया है तथा पृथ्वी और आकाश आपके साथ भाव-विभोर होकर आनन्दातिरेक मे नृत्य करते हुए दिखाई दे रहे है। उस समय संत खिरकानी ने कहा कि सगीत सुनना केवल उसी के लिए उचित है जिसके हृदय पर आकाश से लेकर सत-लोक तक के और पृथ्वी से लेकर पाताल तक के तमाम पर्दे हटा दिए गए हो अर्थात् उसको समस्त रहस्य बता दिए गए हो।

जब महात्मा बू अली सीना सन्त खिरकानी की प्रशंसा से प्रभावित होकर उनसे मिलने के विचार से खिरकान मे उनके घर पहुँचे और उनकी पत्नि से पूछा कि सन्त अबुलहसन कहाँ हैं तो उन्होने उत्तर दिया कि तुम एक झूठे, पाखण्डी और अधर्मी को सन्त कहते हो। मुझे पता नही कि संत कहाँ है। हाँ, मेरे पति तो जंगल मे लकड़ियाँ लाने गए है। यह सुन-कर महात्मा बू अली सीना ने सोचा कि जब आपकी पत्नि ही

आपके बारे मे इस तरह की अशिष्ट बाते कहती है तो न जाने आपका आध्यात्मिक-पद क्या होगा। मैंने तो आप की बहुत प्रशंसा सुनी है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि आप एक साधारण आदमी है। फिर उन्होंने सोचा कि अब जब यहाँ तक आ ही गया हूँ तो आपके दर्शन करके ही जाऊँगा। अत' महात्मा खिर-कानी की खोज मे जंगल की तरफ चल दिए। बसती से बाहर थोडी दूर ही गए थे तो देखते क्या है कि आप एक शेर की कमर पर लकडियाँ लादे चले आ रहे है। यह देखकर महात्मा बू अली सीना को बडा आश्चर्य हुआ उन्होने आपके चरणो मे प्रणाम करके निवेदन किया कि ईश्वर ने तो आपको इतना ऊँचा पद प्रदान किया है और आपकी पत्नि आपके बारे मे बहुत बुरी-बुरी बाते कहती है। आखिर इसका क्या कारण है। आपने उत्तर दिया कि मैं ऐसी बकरी का बोझ सहन न कर सकूं तो फिर यह शेर मेरा बोझ कैसे उठा सकता है। फिर आप महात्मा बू अली सीना को अपने घर ले गए और कुछ देर बात-चीत करने के बाद बोले कि अब इजाजत दीजिए, क्योकि मैं दीवार बनाने के लिए मिट्टी भिगो चुका हूँ। यह कह कर आप दीवार पर जा बैठे और दीवार बनाने लगे। उस समय आप के हाथ से बसूली छूट कर जमीन पर गिर गई और जब महात्मा बू अली सीना उठा कर देने के लिये आगे बढे तो वह खुद-ब-खुद जमीन से उठकर आपके हाथ में पहुँच गई। यह चमत्कार देखकर महात्मा बू अली सीना को विश्वास हो गया कि आप पहुँचे हुए महापुरुष है और वह आपके श्रद्धालुओ मे सम्मिलित हो गए।

हालाँकि सूफी-सतो के यहाँ चमत्कार दिखाना वर्जित है, परन्तु आदमियों के दिमाग से गलत-फहमी हटाने के लिए

अथवा जनहित मे कभी-कभी कोई तमाशा दिखा देते है। महात्मा बू अली सीना ने भी आपकी पत्नि,द्वारा आपकी निन्दा सुन कर आपके महापुरुष होने पर शका की थी और आपको एक साधारण मनुष्य समझा था। इस गलत-फहमी को दूर करने के लिए और उनके हृदय में विश्वास जगा कर अपने सत्सग का लाभ उठाने के लिए आपको शेर पर लकडियाँ लाद कर लाने और बसूली के चमत्कार दिखाने पडे।

एक मनुष्य ने संत खिरकानी से निवेदन किया कि अपनी गुदडी मुझे पहना दीजिए ताकि मैं भी आप जैसा बन जाऊँ। आपने पूछा—क्या कोई औरत मर्दाने कपड़े पहन कर मर्द बन सकती है। उसने कहा—कभी नही। आपने फरमाया कि जब यह सम्भव नही है तो फिर तुम मेरी गुदडी पहन कर मुझ जैसे किस तरह बन सकते हो। यह उत्तर सुन कर वह मनुष्य बहुत लज्जित हुआ।

एक बार सुलतान महमूद गजनवी ने अपने प्रिय दास अयाज से वायदा किया था कि मैं तुझे अपने शाही वस्त्र पहना कर अपने स्थान पर बैठा दूंगा और तेरे वस्त्र पहन कर स्वय दास का स्थान ले लूंगा। जिस समय सुलतान महमूद गजनवी सन्त खिरकानी के दर्शनो के लिए खिरकान पहुँचा तो दूत से कहा—सूफी सन्त अबुलहसन से कहो कि सुलतान महमूद आपके दर्शन करने के लिए उपस्थित हुए है। अत· आप उनके डेरे तक चलने का कष्ट करे। और यदि वह आने से इन्कार करे तो यह आयत पढ देना—अल्लाह और उसके पैगम्बर की आधीनता स्वीकार करने और आज्ञा पालन करने के साथ ही अपने देश के बादशाह की भी आधीनता स्वीकार करो और उसकी आज्ञा पालन करते रहो। दूत ने जब आपको

सुलतान महमूद का सन्देश दिया तो आपने सुलतान के डेरे पर चलने के लिए मना कर दिया। तो दूत ने ऊपर लिखी आयत पढी। आपने उत्तर दिया कि महमूद से कह देना कि मैं तो ईश्वर की आधीनता और आज्ञा पालन मे इतना सलग्न हूँ कि पैगम्बर की आधीनता और आज्ञा पालन करने के लिए ईश्वर से विमुख होने में शर्म महसूस करता हूँ। ऐसी स्थिति में देश के बादशाह की आधीनता और आज्ञा पालन का तो प्रश्न ही नही उठता। आपके यह वचन जब दूत ने महमूद गजनवी को सुनाए तो उसने कहा कि मैं तो उन्हे एक साधारण महात्मा समझता था, परन्तु मालूम होता है कि वह एक पूर्ण-पुरुष है। अतः हम स्वयं ही उनके दर्शनो के लिए चलेगे। उस समय महमूद ने अयाज को अपने वस्त्र पहनाए और स्वयं अयाज के वस्त्र पहने तथा दस दासियो को मर्दाने वस्त्र पहनाए और स्वय दास की तरह उन दासियो मे शामिल होकर दर्शनो के लिए सन्त खिरकानी के आश्रम पर पहुँच गया। सन्त खिरकानी ने उसके सलाम का जवाब तो दिया परन्तु उसके आदर सत्कार के लिए खड़े नही हुए। और महमूद, जो उस समय दास की वेश-भूषा मे था, से बाते करने लगे। परन्तु अयाज की तरफ बिल्कुल ध्यान नही दिया यद्यपि उसने वस्त्राभूषण पहन रखे थे और प्रकट मे बादशाह दीख रहा था। जब महमूद ने पूछा कि आपने बादशाह का आदर-सत्कार क्यो नही किया तो आपने कहा कि यह सब कुछ जो दीख रहा है एक भ्रम है। इस पर महमूद ने जवाब दिया कि यह भ्रमजाल ऐसा तो नही जिसमें आप जैसे महापुरुष फँस जाएँ। यह सुन कर आपने महमूद का हाथ पकड लिया और कहा कि पहले इन अज्ञानियो को बाहर निकाल दो फिर तुम से बातचीत

करूँगा। अतः महमूद के इशारे पर तमाम दासियां और अयाज बाहर चले गये। इसके बाद महमूद ने विनय की कि सूफी-संत महाराज बायजीद बिस्तानी की कोई बात बताइए। आपने कहा कि महात्मा बायजीद कहा करते थे कि जिसने मेरे दर्शन कर लिए उसका कल्याण हो गया। इस पर महमूद ने पूछा क्या उसका पद हजरत मुहम्मद साहब से भी ऊँचा था। क्योकि हुजूर को अबुजवल और अबुलहब जैसे मनुष्यो ने देखा फिर भी उनको दुर्भाग्य से मुक्ति न मिल सकी। आपने फरमाया कि ऐ महमूद धृष्टता मत कर और शिष्टता को ध्यान मे रख कर बात मुँह से निकाल। अरे, हुजूर को चार खलिफाओ तथा दूसरे कुछेक साथियो के अतिरिक्त किसी ने नही देखा, जिसकी गवाह वह आयत है—ऐ पैगम्बर, आपको देखते है जो आपकी तरफ दृष्टि करते है, यद्यपि वह आपको नही देखते। यह सुन कर महमूद बहुत लज्जित हुआ। पैगम्बरो और अवतारो को देखा तो उसके समय के बहुत से मनुष्यो ने देखा था परन्तु उनको देखकर पहचानने वाले तो गिने चुने व्यक्ति ही थे। फिर उसने कहा कि मुझे कोई शिक्षाप्रद बात बताइए। आपने कहा—शास्त्रो मे मना की हुई बातो से परहेज करो, सामूहिक नमाज अदा करते रहो, उदारता, अनुग्रह तथा प्रेम को अपने व्यवहार का आधार बना लो। इसके बाद महमूद ने आप से अशीर्वाद देने और ईश्वर से प्रार्थना करने का निवेदन किया। चलते समय महमूद ने अशर्फियो की एक थैली आपको भेट की तो आपने जौ की रूखी-सूखी रोटी उसके सामने रख कर कहा कि इन्हें खाओ। महमूद ने जब एक टुकडा तोड कर मुंह मे रखा और देर तक चबाने के बावजूद भी जब वह गले से न उतरा तो आपने कहा कि शायद ग्रास तुम्हारे गले मे अटकता

है। उसने कहा—हाँ। तो बोले कि तुम्हारी यह इच्छा है कि अशर्फियो की थैली इसी तरह मेरे गले मे अटक जाय। इसको वापस ले लो क्योकि मै ससारी-धन-दौलत को त्याग चुका हूँ। महमूद के बहुत आग्रह करने पर भी आपने उसमे से कुछ न लिया। फिर महमूद ने निवेदन किया कि मुझ को प्रसाद-स्वरूप कोई चीज देने की कृपा कीजिए। इस पर आपने उसको अपना एक वस्त्र दे दिया। जब महमूद विदा होने लगा तो बोला—हजरत, आपका आश्रय तो बहुत सुन्दर है। इस पर आपने फरमाया कि ईश्वर ने तुम्हें इतना बडा साम्राज्य प्रदान किया है फिर भी तुम्हारे अन्दर लोभ-लालच बाकी है और इस झोपडी की भी इच्छा करते हो। यह सुन कर महमूद बहुत लज्जित हुआ। जब वह चलने लगा तो आप उसके आदर-सत्कार के लिए खडे हो गए। यह देखकर उसने पूछा कि जब मैं आया था, उस समय तो आदर-सत्कार नही किया था, फिर अब क्यो खडे हो गए। आपने कहा कि उस समय तुम्हारे अन्दर राजसी अहकार था और तुम मेरी परीक्षा लेने आए थे, परन्तु अब तुम विनम्रता और दीनता की दशा में वापस जा रहे हो और साधुता का सूर्य तुम्हारे माथे पर प्रकाशमान है। इसके बाद महमूद गजनवी विदा हो गया।

एक रात आपने लोगो से कहा कि इस समय अमुक स्थान पर एक काफिला लूट कर डाकुओं ने बहुत से आदमियो को कत्ल कर दिया है। उसी रात दुर्भाग्यवश किसी ने आपके पुत्र को आपके घर के पास कत्ल करके और उसका सिर काट कर घर की चौखट पर रख दिया परन्तु आपको जरा भी खबर न हुई। सुबह जब लोगो को मालूम हुआ कि आपके पुत्र का वध हो गया है तो वह आपके पास आए और पूछा कि यह क्या

रहस्य है कि एक बहुत दूर के स्थान पर गैरो के वध का तो आपको पता चल गया परन्तु अपने ही घर के दरवाजे पर अपने ही पुत्र की हत्या की खबर न हो सकी। आपने फरमाया—जिस समय काफिला लूटा गया और लोगो का कत्ल हुआ उस समय तमाम पर्दे मेरे सामने से उठा दिए गये थे और जिस समय लडके को कत्ल किया गया उस समय पर्दे गिरा दिए गये थे जिसके कारण मुझे उसके कत्ल की खबर न हो सकी।

एक बार आपको और आश्रम मे रह रहे शिष्यों को छ: दिन तक खाना नही मिला। सातवे दिन एक आदमी बहुत सा खाने का सामान लेकर आया और आपके दरवाजे पर आवाज दी कि मैं यह चीजे सूफियो के लिए लाया हूँ। आपने शिष्यो से फरमाया कि मुझ मे तो सूफी होने की योग्यता नही है। अत: तुम मे से जो सूफी हो वह जाकर ले ले। परन्तु किसी ने अपने सूफी होने का दावा नही किया और सब लोग भूखे बैठे रहे।

एक दिन कोई सूफी-महात्मा हवा मे उड़ता हुआ आपके सामने आकर उतरा और पृथ्वी पर पैर पटक कर कहने लगा कि मैं अपने समय का जुनैद और शिबली हूँ। आपने खड़े हो कर पृथ्वी पर पैर पटके और कहा कि मैं भी अपने समय का ईश्वर हूँ। इस सम्बन्ध मे सूफी-सन्त महात्मा अत्तर कहते है कि इस वचन का अरथ भी वही है जो हम सूफी-सन्त महात्मा मन्सूर-अल-हल्लाज के वचन "अनल-हक" (मैं ईश्वर हूँ) के सम्बन्ध मे निवेदन कर चुके है कि वह भगवत-लीनता की अवस्था मे थे और यदि इस "लयता' की अवस्था मे सन्त कोई शास्त्र-विरुद्ध बात कह दे या कर्म कर दे तो उनको बुरा-

भला न कहना चाहिए क्योंकि इस अवस्था मे उनके मुख से ईश्वर ही बोलता है और उनके शरीर से ईश्वर ही कर्म करता है।

गुरु-सम्मान

महात्मा अब्दुला निसारी कहा करते थे कि एक बार मुझे सिपाहियो ने कैद कर लिया और मेरे पैरो मे जंजीरे बाँध कर शहर बलख की तरफ ले चले। मैं रास्ते में यह सोचता जा रहा था कि हे ईश्वर, मुझे यह किस पाप की सजा मिली है। इतने मे हम लोग शहर मे पहुँच गए। वहाँ मैंने देखा कि लोग छतो पर मुझे मारने के लिए हाथो मे पत्थर लिए खडे है। मैं अपने पाप के बारे मे सोच ही रहा था कि मुझे आकाशवाणी सुनाई दी कि अमुक दिन तूने सन्त अबुल हसन खिरकानी का आसन बिछाते समय उस पर अपना पाँव रख दिया था। यह उसी पाप की सजा है। मैंने सच्चे दिल से मन-ही-मन में उस पाप की माँफी माँगी और आइन्दा ख्याल रखने की प्रतीज्ञा की। महात्मा निसारी आगे कहते है कि मैने जैसे ही माफी माँगी और प्रतीज्ञा की ऐसे ही मैंने देखा कि लोग चाहने पर भी मुझ को पत्थर नही मार पा रहे है तथा सिपाहियो ने भी उसी समय मेरे पैरों की जंजीरे खोल दी और मुझे मुक्त कर दिया।

शिष्य का सम्मान

एक बार महात्मा अबू सईद और सन्त अबुल हसन ने अपनी-अपनी आन्तिरिक अवस्थाओ को आपस में बदलने का विचार किया और दोनो महात्मा आपस में गले मिले। थोड़ी देर में ही दोनो की आन्तरिक अवस्थाएँ आपस मे बदल गईं।

महात्मा अबू सईद अपने घर जाकर रात भर घुटनो पर सिर झुकाए रोते रहे और इधर सन्त खिरकानी रात भर आनन्दातिरेक मे जो्र-जोर से ईश्वर का नाम पुकारते रहे। सुबह को महात्मा अबू सईद ने सन्त खिरकानी के पास आकर निवेदन किया कि मेरी आन्तरिक अवस्था मुझे वापस कर दीजिए और अपनी आन्तरिक अवस्था मुझ से ले लीजिए। क्योकि मुझ मे यह दुःख और कष्ट सहन करने की सामर्थ्य नही है। आपने कहा बहुत अच्छा। दोनो महात्मा फिर गले मिले और अपनी-अपनी आन्तरिक अवस्थाएँ फिर वापस ले ली। चलते समय महात्मा अबू सईद ने सन्त अबुल हसन खिरकानी के आश्रम की चौखट पर नतमस्तक होकर प्रणाम् किया, जिसका अर्थ था कि मैं आपके समान नही हूँ। इस तरह महात्मा अबू सईद ने सन्त अबुल हसन खिरकानी का सम्मान किया। सन्त अबुल हसन ने भी महात्मा अबू सईद का मान रखने के लिए अपने आश्रम का वह दरवाजा ईट चिनवा कर बन्द करवा दिया ताकि जिस जगह महात्मा अबू सईद ने सिर झुकाया था वहाँ किसी आदमी का आश्रम मे आते-जाते पॉव न पड़ जाय, तथा आश्रम मे दूसरी जगह दरवाजा बनवा लिया।

महात्मा अबू सईद महात्मा अबुल हसन खिरकानी को गुरु मानते थे और वो श्रद्धाभाव से उनका मान-सम्मान करते थे। और सन्त खिरकानी भी महात्मा अबू सईद का बड़ा सम्मान करते थे और उनका बडा ख्याल रखते थे। एक बार आपने महात्मा अबू सईद से कहा कि मैंने आज तुम्हे इस युग का संरक्षक नियुक्त कर दिया क्योकि बहुत समय से मैं यह प्रार्थना किया करता था कि हे ईश्वर मुझे कोई ऐसा पुत्र दे दे

जो मेरे समान रहस्य जानने वाला हो और अब ईश्वर ने कृपा करके मुझे तुम जैसा महा पुरुष प्रदान कर दिया है।

गुरु-कृपा

महात्मा अबू सईद ने सन्त अबुल हसन खिरकानी के सामने कभी कोई बात नही कही। और जब लोगों ने इसका कारण पूछा तो बोले कि गुरु के सामने बात न कहना ही शिष्टता है क्योकि समुद्र के सामने नदियो का कोई महत्व नही होता। फिर भाव-विभोर होकर कहा खिरकान आने के समय मै एक पत्थर की तरह था, परन्तु सन्त अबुल हसन की तवज्जेह ने मुझको बहुमूल्य मोती बना दिया।

माता-पिता की सेवा का रहस्य

सूफी-सन्त अबुल हसन खिरकानी के एक और भाई थे। अतः यदि आप रात को भजन-पूजन में लगे होते तो दूसरे भाई पूरी रात माॅ की सेवा सुश्रुषा करते रहते। और जब आपके भाई रात को भजन-पूजन करते तो आप माॅ की सेवा करते। एक बार जब आपके भाई की बारी माँ की सेवा करने की थी तो उन्होंने आप से कहा कि यदि आज मेरे बजाय आप माँ की सेवा मे रह जाएँ तो मैं रात भर भजन-पूजन कर लूं। आपने उनकी बात मान ली और माँ की सेवा में रह गए। परन्तु उसी रात भजन-पूजन शुरू करते ही आपके भाई को यह आवाज सुनाई दी कि हमने तुम्हारे भाई को क्षमा करने के साथ तुम्हे भी उनके माध्यम से क्षमा कर दिया। यह सुन कर उन्हें आश्चर्य हुआ और ईश्वर से विनय की—या अल्लाह, मैं तो तेरा भजन-पूजन कर रहा हूँ और वह माॅ की सेवा कर

रहा है, फिर इसकी क्या वजह है कि मुझ को क्षमा करने के बजाए उसको क्षमा करके मुझे उसके माध्यम से क्षमा किया गया। आवाज आई कि हमे तेरे भजन-पूजन की जरूरत नही बल्कि वृद्ध माॅ-बाप की सेवा-सुश्रुषा रूपी-भजन-पूजन से हम प्रसन्न होते है।

जीवन व्यतीत करने का रहस्य

आप कहा करते थे कि जीवन इस तरह व्यतीत करना चाहिए कि कर्म-पत्र लिखने वाले देवता भी मुअत्तल (सस्पैंड) होकर रह जाएँ। और ईश्वर के अतिरिक्त किसी दूसरे पर कर्म प्रकट न हो सके। यदि इस तरह जीवन व्यतीत न कर सको तो कम से कम इस तरह जीवन व्यतीत करो कि कर्म-पत्र लिखने वाले देवताओ को रात मे छुट्टी मिल जाय और पूरी रात ईश्वर के सिवा किसी दूसरे को तुम्हारे कर्मो का पता न चल सके। यदि वह भी न कर सको तो जीवन व्यतीत करने का सबसे तुच्छ तरीका यह है कि जब कर्म-पत्र लिखने वाले देवता ईश्वर के दरबार मे उपस्थित हो तो विनय करे कि हे ईश्वर, तेरे अमुक भक्त ने नेकी के अतिरिक्त कोई बुरा काम नही किया।

ज्ञान

आप कहा करते थे कि ज्ञान दो प्रकार का होता है—एक बाह्य और दूसरा आन्तरिक। बाह्य ज्ञान का सम्बन्ध विद्वानो से है और आन्तरिक ज्ञान सन्त-महात्माओ को प्राप्त होता है। परन्तु आन्तरिक ज्ञान से भी श्रेष्ठ वह ज्ञान है जिसका सम्बन्ध ईश्वर के रहस्यो से है और ससार को इस ज्ञान की हवा भी नही लग सकती।

सूफी-संतों-भक्तों का रहस्य

आप कहा करते थे :—

—ईश्वर-भक्तो का रहस्य यह है कि न तो वह इस लोक और न परलोक मे किसी पर अपने को प्रकट करे और न ईश्वर उन पर किसी और को प्रकट होने दे।

—ईश्वर ने अपने भक्तो के हृदय पर ऐसा बोझ रख दिया है कि यदि उसका एक कण भी ससार पर प्रकट हो जाय तो उसका विनाश हो जाय। परन्तु चूँकि ईश्वर स्वय उनके हृदयों की देखभाल करता रहता है इसलिए वह इस बोझ को उठाने के योग्य बने रहते है। और यदि ईश्वर उनकी देखभाल करना बन्द कर दे तो उस बोझ मे दब कर उनके अंग-अग चूर-चूर हो जाएँ।

—जब ईश्वर के भक्त उसको पुकारते है तो चरिन्दे और परिन्दे (चरने और उडने वाले जीव-जन्तु) खामोश हो जाते है। और कभी ऐसा भी होता है कि जब वह पक्षी ईश्वर के जाप मे सलग्न होते है तो पूरा जगल भय से काँप जाता है।

—भक्तो पर तीन समय ऐसे आते है जब देवता भी भयभीत हो जाते है। पहला—प्राण हरते समय यमराज। दूसरा—कर्म-पत्र मे कर्मो को लिखते समय विधाता। और तीसरा—मृत्यु के पश्चात् प्रश्न पूछने के समय धर्मराज।

—ईश्वर की कृपा के पश्चात् भक्त को ऐसी वाक-सिद्धि प्रदान कर दी जाती है कि वह जो कुछ भी जुबान से निकाल देता है वह बात पूरी हो जाती है।

—भक्तो के दुख और सुख का सम्बन्ध ईश्वर से होता

है, ससार से नही। ईश्वर-मिलन उनके लिए सुख और ईश्वर से विछोह दुख होता है। अन्यथा सासारिक सुख-दुख उन पर प्रभाव नही डालते और वह उनसे बेपरवाह (उदासीन) रहते हैं।

—ईश्वर ने कुछ भक्तो को ऐसी शक्ति प्रदान की है जो एक रात और दिन मे दूर से दूर तीर्थ की यात्रा करके लौट भी आते है। और कोई-कोई भक्त एक क्षण मे वह दूरी तय कर लेते हैं।

—कुछ भक्तो को ईश्वर उस स्थान पर पहुँचा देता है जहाँ से वह तमाम स्थानो को देखते रहते है और कुछ साधको को वह पद प्रदान कर देता है कि वह परलोक मे लिखे जाने वाले कर्म-पत्रो को भी देख सकते है।

—ईश्वर-भक्त वह है जो ससार से इस तरह अलग हो जाएँ कि ससार वालो को पता न चल सके। क्योकि ससार से सम्बन्ध रखने पर ससार को उनकी खबर रहेगी।

—सत-जन अपने आध्यात्मिक-ज्ञान के अनुसार ससारियो से ऊँचे घाट का वार्तालाप नही करते, बल्कि ससारियो के ज्ञान के अनुसार उनसे बातचीत करते है। क्योकि ऊँचे घाट की बातो को ससार वाले नही समझ सकते।

—फकीर वही है जो इहलोक और परलोक दोनो से बेपरवाह हो जाय। क्योकि यह दोनो चीजे फुक्र (दैन्य, भक्ति) से नीची श्रेणी की हैं। और हृदय का इन दोनो से किसी तरह का सम्बन्ध नही।

—साहबे-हाल (ईश्वर-मिलन की अवस्था वाला साधक)

खुद भी अपने "हाल" (ईश्वर-मिलन की अवस्था) से बेखबर होता है। क्योकि जिस "हाल" की उसे खबर हो जाय उसे किसी तरह भी "हाल" नही कहा जा सकता। बल्कि उसे "हाल" न कहकर उस अवस्था का ज्ञान कहा जाएगा—

अब होश में कुछ होश नहीं क्या बयां करूँ
क्या-क्या नज़ारे आए नज़र बेखुदी के बाद
—ग़ाफ़िल बरनी

—मस्त लोग वही है जो प्रेम की मदिरा पीकर मदहोश हो जाते है।

—जब मैंने भक्तो की महानता का अनुमान लगाने के लिए आकाश की ओर देखा तो पता चला कि वहाँ तमाम सूफी-सन्त-महात्मा बेपरवाह है। और यही बेपरवाही उनकी महानता की पराकाष्ठा है। और यह महान पद उस समय प्राप्त होता है जब साधक अच्छी तरह ईश्वर की पवित्रता और निर्मलता का दर्शन कर लेता है। आशय यह है कि जब साधक दुख-सुख, स्वर्ग-नर्क, पाप-पुण्य आदि हर प्रकार की मलिनता से बेपरवाह (उदासीन) होकर सच्चे दिल से ईश्वर का भजन-पूजन केवल ईश्वर के लिए करता है तब उसे यह सर्वोच्च पद (ईश्वर-दर्शन या ईश्वर-मिलन) प्राप्त होता है। इसी बात को सन्त तुलसीदास जी ने यूं कहा है—

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

—ईश्वर सूफियो के हृदय को प्रकाश की दृष्टि प्रदान करता है और उस दृष्टि मे उस समय तक वढ़ोत्तरी होती रहती है जब तक वह दृष्टि पूर्णरूप से ईश्वर-स्वरूप नही बन जाती।

—जिस तरह दिन के लिए सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता होती है, सतो को सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता नही रहती। और जिस तरह रात को चाँद-तारो के प्रकाश की आवश्यकता होती है, सत इन चाँद-तारों से बेपरवाह रहते है, क्योकि वह स्वय सूरज और चाँद-तारो से अधिक प्रकाशमान होते हैं।

—सतो के हृदय मिट जाते है, उनके शरीरो का विनाश हो जाता है और उनकी रूहे जल जाती है। अर्थात् वह जीवित भी अस्तित्वहीन हो जाते है—

जीते जी जो मर-मिटे वो उस तत को पाय।
ग़ाफ़िल जीते-जी मगर बिरला ही मर पाय॥

—जौ की रोटी खाने और टाट या ऊन के कपड़े पहनने ही से सूफी नही बन सकता। क्योकि यदि सूफी बनना इसी पर निर्भर होता तो तमाम ऊन वाले और जौ खाने वाले जानवर सूफी बन जाया करते। बल्कि सूफी वह है जिसके हृदय मे सच्चाई और कर्म मे पवित्रता हो।

—सत केवल ईश्वर के रहस्य को जानने वाले ही को देखते हैं जिस तरह तुम्हारी स्त्री को कोई ग़ैर (जो तुम्हारा परिचित न हो) नही देख सकता।

ईश्वर-दर्शन का रहस्य

आपने फरमाया कि जब हजरत मूसा ही से यह कहा गया कि "तू हमे हरगिज (कदापि) नही देख सकता", तो फिर उसका दर्शन करने की किस मे सामर्थ्य है। और "तू हरगिज

नही देख सकेगा" कह कर उन लोगो की जुबान बन्द कर दी गई जो उसके दर्शन के इच्छुक रहते है।

यही सत्य है कि ईश्वर का दर्शन नही हो सकता, हाँ उसकी विभूतियो, अथवा शक्तियो यथा विष्णु, ब्रह्मा, महेश, देवी, देवताओ का दर्शन हो सकता है और भक्तो को इन्ही का दर्शन होता भी है। क्योकि उसका दर्शन करने की किसी मे सामर्थ्य नही है। भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिव्य नेत्र देकर अपना विराट-रूप दिखाया। परन्तु दिव्य नेत्र मिलने के बाव-जूद अर्जुन उस रूप को अधिक समय तक न देख सका था और फिर श्री भगवान से "कृष्ण-रूप" मे आने के लिए प्रार्थना करने लगा। और विराट्-रूप भी ईश्वर का पर्दे ही मे एक रूप था— ईश्वर पूर्णरूप से प्रकट नही हुए थे। ऋषि-मुनियो ने वहुत जोर मारा तो उसे करोडो सूर्यो से भी अधिक प्रकाशवान कहा। जब हम एक सूर्य की ओर ही नही देख सकते तो यदि ईश्वर अपने करोड़ो सूर्यो से भी अधिक प्रकाशवान रूप मे प्रकट हो जाय तो क्या हम उसकी ओर देख पायेगे। सत अबुल हसन खिरकानी ने इसी तथ्य की ओर इशारा किया है। इसकी पुष्टि श्री कबीर दास जी, जो पूर्ण सत थे, के जगत प्रसिद्ध इन दो दोहो से भी होती है। पहला दोहा है—

गुरु गोबिन्द दोऊ खड़े काके लागूँ पाय।
बलिहारी गुरु आपने जिन गोबिन्द दियो मिलाय॥

इस दोहे से साफ प्रकट है कि गुरु के साथ ईश्वर भी श्री कबीरदास जी के सामने प्रत्यक्ष खड़े है तभी तो वह इस असमंजस में है कि पहले किस के चरण-स्पर्श करूँ। और फिर

वह निर्णय गुरु के पक्ष मे करते है जिनकी कृपा से ईश्वर का दर्शन सम्भव हुआ। परन्तु एक दूसरे दोहे मे कहते है—

जा मरनें से जग डरै मोहि अति आनन्द
कब मरिहों कब पाइहों पूरन ब्रह्मानन्द॥

इस दोहे मे वह कहते है कि वह पूर्णब्रह्म से मिलने के इन्तजार में हैं—"कब मरिहो कब पाइहो पूरन ब्रह्मानन्द"—मानो यह जीवन या अस्तित्व उनके और ईश्वर-मिलन के बीच मे पर्दा बना हुआ है, और वह इस इन्तजार मे है कि कब यह पर्दा मध्य से हटे और कव वह अपने प्रिय के पूर्ण दर्शन प्राप्त करे। अब, प्रथम दोहे के वर्णन के अनुसार यदि उन्हे पूर्णब्रह्म के दर्शन हो जाते, जिनके कि वह पाय-लगना चाहते थे तो दूसरे दोहे के वर्णन के अनुसार उन्हे कोई इन्तजार नही होता, परन्तु चूंकि प्रथम दोहे वाले "गोबिन्द" के दर्शन के बाद भी उन्हे दूसरे दोहे वाले "पूर्ण-ब्रह्म" का दर्शन प्राप्त करने की इच्छा शेष है—कब मरिहो कब पाइहो पूरन-ब्रह्मानन्द—तो उन्हे जो दर्शन प्राप्त हुआ वह ईश्वर की विभूति अथवा शक्ति का या ईश्वर के किसी विग्रह का था, और उसके दर्शन करने के बाद भी सत कबीर के हृदय मे ईश्वर के दर्शन की अभिलाषा रह गई। इससे भी इसी तथ्य की पुष्टि होती है कि ईश्वर का दर्शन किसी को भी कम से कम जीवन मे तो हो नही सकता। हाँ, उसकी विभूतियो का दर्शन सम्भव है। और भक्तो को विभूतियो ही का दर्शन होता है जिसे वह ईश्वर-दर्शन कहते है। अत सूफियो के यहाँ ईश्वर-दर्शन के लिए 'मुशाहिदा' शब्द प्रयुक्त होता है, जिसके अर्थ है—ईश्वर की विभूतियो का दर्शन।

प्रश्न-उत्तर

आपने एक वार प्रश्न किया—ऐ लोगो, तुम्हारा उस साधक के वारे मे क्या विचार है जिसको आवादी और वीराना कुछ भी अच्छा न लगता हो। फिर स्वयं ही उत्तर दिया—याद रखो, ईश्वर ने ऐसे साधक को वह महान पद प्रदान किया है कि प्रलय में उसके हृदय से ऐसा प्रकाश फैलेगा कि आवादी और वीराना सव प्रकाशित हो जायेगे और ईश्वर उसके माध्यम से तमाम प्राणियो को क्षमा प्रदान कर देगा, यद्यपि वह मनुष्य किसी की सिफारिश नही करेगा।

आपने एक मनुष्य से पूछा—क्या हजरत खिज्र से मिलना चाहते हो। (हजरत खिज्र = वह फरिश्ता जो ईश्वरीय-मार्ग प्रदर्शक है।) उस मनुष्य ने कहा—हाँ। आपने कहा—तुमने तो साठ वर्ष के जीवन को व्यर्थ ही गँवा दिया है। अत: अव तुम्हें इतने अधिक भजन-पूजन करने की आवश्यकता है जो तुम्हारी इस हानि की भरपाई कर सके। क्योकि हजरत खिज्र को और तुमको ईश्वर ने निर्मित किया है और तुम्हें सृष्टि को छोड़कर सृष्टा की तरफ ध्यान देना चाहिए। और मेरी दशा तो यह है कि जव से मुझे ईश्वर-दर्शन प्राप्त हुआ है मुझे कभी संसार की सगत की इच्छा नही हुई।

एक खुरासानी हज के लिए जा रहा था तो आपने प्रश्न किया—कहाँ जाने का विचार है। उसने उत्तर दिया—मक्का-मोज्जमा का। आपने पूछा—वहाँ क्यो जा रहे हो। उसने निवेदन किया—खुदा से मिलने की इच्छा में जा रहा हूँ। आपने कहा—क्या खुरासान मे खुदा नही है। फिर वोले—अरे, हुजूर अकरम (अर्थात हजरत मुहम्मद साहव) ने यह तो

फरमाया है कि "ज्ञान प्राप्त करो चाहे वह चीन मे हो" (अर्थात चाहे कितनी ही दूर क्यो न जाना पड़े)। लेकिन यह नही फरमाया कि खुदा की तलाश मे एक जगह से दूसरी जगह तक जाते फिरो।

जिस जगह भी हमने सिजदा कर दिया।
बन गई काबे का वो ही आस्ताँ[1] ॥
—गाफिल बरनी

एक बार लोगो ने आपसे यह प्रश्न किया क्या आपको मृत्यु से भय नही लगता। आपने उत्तर दिया—मृर्द मौत से नही डरा करते। क्योकि मनुष्य के लिए ईश्वर द्वारा निर्मित कोई भी दुख, मेरे दुख के सामने कोई महत्व नही रखता। और सुख और वैभव का प्रत्येक वायदा जो मनुष्य से किया गया है मेरी आशा के सामने निरर्थक है। यदि तुमसे यह प्रश्न किया जाय कि अबुलहसन सेजो फैज (आध्यात्मिक लाभ) तुम्हे प्राप्त हुआ है उसके बदले मे क्या चाहते हो, तो तुम उसके बदले मे क्या माँगोगे। इस पर उन मनुष्यो ने अपनी-अपनी इच्छाओ के अनुसार उत्तर दिए। परन्तु आपने कहा कि यदि मुझ से यह प्रश्न किया जाय कि तुम मनुष्य-मात्र के प्रेम के बदले मे क्या मुआवजा चाहते हो तो मैं उत्तर दूंगा कि मैं उन सब को चाहता हूँ।

एक बार आपने एक शिष्य से पूछा कि सबमे अच्छी वस्तु कौन-सी है। उसने उत्तर दिया कि मुझे मालूम नही। आपने कहा कि तुम जैसे अज्ञानी को तो बहुत अधिक भयभीत रहना चाहिए। तुम्हे पता होना चाहिए कि सबसे अच्छी वस्तु है। जिसमे कोई बुराई न हो।

टिप्पणी—१ दरवाजे की चौखट का पत्थर

एक बार आपने एक विद्वान से प्रश्न किया—क्या तुम ईश्वर के भक्त हो और क्या ईश्वर भी तुमसे प्रेम करता है। उसने उत्तर दिया कि मैं ईश्वर से प्रेम करता हूँ। आपने कहा कि यदि ऐसा है तो उसके गुणो को धारण क्यो नही करते, क्योकि भक्ति का वास्तविक अर्थ यह होता है कि भक्त जिसकी भक्ति करे उसके गुण उसमे आ जाने चाहिए । यदि ईश्वर के गुण भक्त में उत्तर आएँ तो समझो भक्ति सच्ची है, नही तो वह भक्त छली कपटी है, पाखण्डी है।

जब लोगो ने आपसे यह कहा कि सूफी-सत महात्मा जुनैद संसार में होश सहित आए और होश ही के साथ चले गए, तथा सूफी-सत महात्मा शिबली मदहोश आए और मदहोश ही लौट गए। तो आपने कहा कि इन दोनो से पूछा जाय कि तुम ससार मे किस तरह आए और किस तरह वापस हुए तो वह कुछ भी न बता सकेंगे। क्योकि उन दोनो मे से कोई भी नही जानता कि वह किस तरह आया और किस तरह वापस हो गया। जब आपने यह कहा तो उसी समय आकाशवाणी हुई कि ऐ अबुल हसब, तूने बिलकुल सही कहा, क्योकि जो ईश्वर को जान जाता है उसको ईश्वर के अतिरिक्त कुछ दिखाई नही देता, यहाँ तक कि उसे अपनी खबर भी नही रहती। जब लोगो ने इस आकाशवाणी का अर्थ पूछा तो आपने कहा कि जीवन-को नामुरादी (कामना पूरी न होने की अवस्था) मे व्यतीत करने को "आराधना कहते है। लोगो ने प्रश्न किया कि हम क्या चीजे गहण करे जिसके कारण हममें जागति पैदा हो जाय। आपने कहा आयु को एक साँस सेअधिक मत समझो। फिर लोगो ने पूछा कि फुक्र (दैन्य, भक्ति) का क्या लक्षण है। आपने कहा—हृदय पर ऐसा रंग चढ़ जाय जिस पर दूसरा कोई रंग न चढ सके।

अपने बारे में रहस्योद्‌घाटन

—ईश्वर ने मुझे ऐसे पाँव प्रदान किए है जिनसे मैं आकाश से पाताल तक पहुँच गया। परन्तु मुझे यह पता न चल सका कि मैं कहाँ और किधर गया। तत्पश्चात् आकाश-वाणी हुई कि जिसके पाँव और यात्रा ऐसे हो, जाहिर है कि वह कहाँ तक पहुँच सकता है। मैंने दिल मे कहा कि अजीब लम्बी और अजीब छोटी यात्रा है कि मैं गया भी और यात्रा भी की परन्तु फिर भी अपनी जगह विद्यमान हूँ।

—यद्यपि मैं अनपढ हूँ परन्तु ईश्वर ने अपनी कृपा से मुझे समस्त विद्याओ का जानकार बना दिया है। और मैं उसको धन्यवाद देता हूँ कि उसने अपनी यथार्थता मे मुझे विलीन कर लिया है, और यह दिखाई देने वाला शरीर केवल भ्रम मात्र है क्योकि वास्तव मे मेरा अस्तित्व समाप्त हो चुका है ।

—ईश्वर ने मुझे वह दर्द प्रदान किया है कि यदि एक बूद भी दिल से निकल पड़े तो प्रलय के तूफान से भी भयानक तूफान आ जाय।

—अपने शिष्यों से बोले कि आन्तरिक तपस्या करने वाले महात्माओ के ऊपर जितने अनुग्रह और कृपा की गई है, उसने अकेले तुम्हारे गुरु के ऊपर हुई है।

—मैं रात की नमाज के बाद उस समय तक आराम नही करता जब तक दिन भर का हिसाब ईश्वर को नही दे लेता।

—एकान्त के समय कभी ईश्वर मुझे ऐसी शक्ति प्रदान कर देता है कि यदि मैं चाहूँ तो एक इशारे मे आकाश को

पकड़ कर खीच लूँ और यदि चाहूँ तो पलक झपकने के समय में पाताल की यात्रा कर आऊँ।

—मेरा प्रत्येक कर्म एक चमत्कार है। जब मैं हाथ फैलाता हूँ तो हवा मेरे हाथ मे सोने का कण प्रतीत होती है, जबकि मैं चमत्कार दिखाने की इच्छा से हवा में हाथ नही फैलाता। क्योकि जो महात्मा चमत्कार दिखाने की इच्छा करता है उसके लिए ईश्वर चमत्कार का द्वार बन्द कर देता है।

—लोग तो अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बड़ी-बडी तपस्या करते हैं, परन्तु ईश्वर ने अपनी कृपा ही से मुझे लक्ष्य पर पहुँचा दिया।

जब मैं माँ के गर्भ मे चार महीने का था, उस समय से इस समय तक की तमाम बाते मुझे याद है। और जब मर जाऊँगा तो प्रलय तक का हाल लोगो को बताता रहूँगा।

—ईश्वर ने सब चीजे मेरे सम्मुख कर दी हैं। यदि इस किनारे से लेकर उस किनारे तक किसी की उगली में फाँस चुभ जाय तो मुझे उसका हाल मालूम रहता है।

—यदि मैं उन रहस्यो को जो मेरे और ईश्वर के मध्य हैं, लोगो पर प्रकट कर दूं तो किसी को विश्वास नही आ सकता। और ईश्वर की जो कृपाएँ मेरे ऊपर हुई हैं यदि उनको प्रकट कर दूं तो रुई की तरह तमाम प्राणियो के दिल जल उठे।

—मुझे लज्जा आती है कि सुधवुध रखते हुए ईश्वर के सामने खडे होकर कुछ और बोलूं।

—ईश्वर ने मेरे लिए एक ऐसा "वक्त (ईश्वर-मिलन के समय को सूफियो की भाषा मे "वक्त कहते हैं) निश्चित

किया है कि यह वक्त और परलोक दोनो उसकी अभिलाषा करते हैं।

मैं स्वर्ग और नर्क दोनो से वेपरवाह होकर (अर्थात स्वर्ग पाने और नर्क से बचने की इच्छा त्याग कर, नि.स्वार्थ-भाव से) केवल ईश्वर का भजन-पूजन करता हूँ। और नर्क आदि से नही बल्कि ईश्वर ही से डरता हूँ।

—मैं प्रत्येक मनुष्य से ईश्वर की विशेष बातें इसलिए नही कहता क्योकि वह उसके रहस्यो से परिचित नही और अपने-आप से इसलिए वर्णन नही करता क्योकि मुझमे अहंकार पैदा होने का भय है। और एक कारण यह भी है कि ईश्वर ने मेरी जुवान को वह शक्ति भी प्रदान नही की जिसके द्वारा मैं उसके भेदो का ज्यो का त्यो वर्णन कर सकूँ।

मैं तो माँ के गर्भ ही मे जल कर राख हो चुका था और पैदा होने के समय जला और पिघला हुआ पैदा हुआ और जवानी से पहले ही बूढा हो गया।

पूरी सृष्टि एक नाव है और मैं उसका मल्लाह हूँ और मैं हमेशा उसी में रहता हूँ।

—ईश्वर ने कृपा करके मुझे ऐसी दिव्य-दृष्टि प्रदान की है जिसके द्वारा मैं समस्त सृष्टि का दर्शन करता हूँ।

—यदि मैं सर्व-साधारण के सामने ईश्वर की कृपा के छोटे-से भाग को भी प्रकट कर दूं तो सब लोग मुझे पागल कहने लगेंगे।

—मैं रात-दिन उसी के कार्य मे जीवन-व्यतीत करता रहा, जिसके कारण मेरा चिन्तन दृष्टि मे वदल गया, फिर प्रसन्नता, फिर भय और फिर मैं उस पद तक पहुँच गया कि मेरा चिन्तन ज्ञान और फिर अध्यात्म-ज्ञान वन गया। और

इसके वाद जब मेरा ध्यान प्राणियो पर कृपा की तरफ गया तो मैंने अपने से वडा किसी को भी प्राणियो के लिए दया भाव रखने वाला नहीं पाया। उस समय मेरी जुवान से निकला-काश, समस्त प्राणियो के बजाय केवल मुझे मौत आ जाती और प्रलय मे समस्त प्राणियो का हिसाब केवल मुझ से लिया जाता और जो लोग सजा पाने के अधिकारी होते उनके पापों के वदले मे केवल मुझे सजा दे दी जाती।

परमेश्वर की मुझसे यह प्रतीज्ञा है कि मैं तुझको अपने अच्छे भक्तो से मिलवाऊँगा और हत-भागियों (अर्थात जो ईश्वर-भक्त नही है) की सूरत भी तुझे दिखाई नही पड़ेगी।

—मैं पचास वर्ष से इस तरह ईश्वर से वार्तालाप में रत हूँ कि मेरे हृदय और जिव्हा को भी इसकी खबर नही है। और तिहत्तर (७३) वर्ष तक मैंने इस ढंग से जीवन व्यतीत किया है कि कभी एक साष्टांग-प्रणाम भी शास्त्र-विरूद्ध नही किया और एक क्षण के लिए भी मन की इच्छा पूरी नही की।

—ईश्वर ने मुझसे कहा कि यदि तू दुख-दर्द लेकर मेरे सामने आया तो मै तुझे प्रसन्न कर दूँगा, यदि ईश्वर-चिन्तन और प्रार्थना के साथ उपस्थित होगा तो तुझे अध्यात्म-ज्ञान की दौलत से मालामाल कर दूँगा, और यदि अहंभाव को त्याग कर आयेगा तो तेरे मन को तेरा सेवक बना दूँगा।

—एक वार ईश्वर ने इहलोक और परलोक के खजाने मेरे सामने पेश कर दिए। परन्तु मैंने कहा कि मैं इन पर मोहित नही हो सकता। फिर ईश्वर ने मुझसे कहा कि ऐ अवुलहसन, इहलोक और परलोक मे तेरा कोई हिस्सा नही वल्कि इन दोनों के वदले "मैं तेरे लिए हूँ।

—ससार त्यागने के बाद न तो मैने कभी किसी की तरफ देखा और न ईश्वर से वार्तालाप करने के बाद किसी से वार्तालाप किया। (इसका अर्थ यह है कि ईश्वर-दर्शन के बाद ससार मे जिसे भी देखा वह ईश्वर ही नजर आया, और ईश्वर से वार्तालाप करने के बाद अन्य जिससे भी वार्तालाप किया तो ऐसा प्रतीत हुआ मानो ईश्वर ही से वार्तालाप कर रहा हूँ—सूफियो के यहाँ ससार-त्याग का अर्थ है ससार को संसार न समझ कर ईश्वर समझना। और यही वास्तविक संन्यास है।)

—ईश्वर ने जो महानता मुझे प्रदान की हैं, संसार उससे परिचित नही है।

—ससार मेरी प्रशंसा करने मे इसलिए असमर्थ है कि वह जो कुछ भी मेरी प्रशसा मे कहेगा मैं उसके उलट हूं।

—जब मैंने अपने अस्तित्व पर नजर डाली तब मुझे अपने अनस्तित्व का पता चला। और जब अनस्तित्व पर नजर डाली तो ईश्वर ने कृपा करके अपने स्वरूप का दर्शन करा दिया। और जब मुझे इस घटना से आश्चर्य हुआ तो आकाशवाणी हुई—मेरे (ईश्वर के) अस्तित्व को स्वीकार कर। मैंने विनती की—हे ईश्वर, तेरे अतिरिक्त तेरे अस्तित्व को कौन स्वीकार कर सकता है। परन्तु जब ईश्वर ने अपनी कृपा से यह मार्ग खोल दिया तो मै धीरे-धीरे इस मार्ग के प्रकाश मे नास्तिकता से प्रमाण तक पहुँच गया। अर्थात् ईश्वर का साक्षात्कार होने से मुझे विश्वास हो गया कि ईश्वर का अस्तित्व है और मेरी नास्तिकता समाप्त हो गई।

—जब मेरा हृदय खुदी (अहं) से घृणा करने लगा तो मैंने अपने आप को पानी मे गिरा दिया परन्तु डूब न सका, फिर आग में झोक दिया परन्तु जल न सका, फिर अपने आपको समाप्त करने के विचार से पूरे चार महीने दस दिन तक कुछ नही खाया परन्तु फिर भी मर न सका। और जब मैंने विनम्रता को अपना लिया तो ईश्वर ने मुझे महानता प्रदान करके उन आध्यात्मिक ऊँचे-ऊँचे पदो पर पहुँचा दिया जिनको शब्दो में व्यक्त करना असम्भव है। इसका आशय यह है कि जब साधक अपने अह (खुदी) को समाप्त कर देता है तो अमरत्व प्राप्त कर लेता है। और जब विनम्रता (ईश्वर की प्रसन्नता में प्रसन्न रहने) को ग्रहण कर लेता है तो अति सूक्ष्म अध्यात्म-ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

—मैंने ठहर कर ध्यान से पृथ्वी और आकाश के समस्त प्राणियो के धर्मों को देखा। परन्तु उनके कर्म मेरी दृष्टि मे निरर्थक सिद्ध हुए क्योकि मुझे उनकी वास्तविकता से पूरी तरह परिचित कर दिया गया था। उस समय मुझे यह आकाशवाणी सुनाई दी कि ऐ अबुल हसन, जिस तरह तमाम प्राणियो के कर्म तेरी दृष्टि मे तुच्छ है, इसी तरह हमारी दृष्टि मे तेरे कर्मों का भी कुछ मूल्य नहीं।

—जब तक मैंने ईश्वर के अतिरिक्त दूसरो पर भरोसा किया मेरे कर्मो मे पवित्रता और सच्चाई नही आ सकी। और जब मैंने संसार को नमस्ते करके केवल ईश्वर की तरफ देखा तो मेरी कोशिश के बगैर ही मेरे कर्मो मे पवित्रता और सच्चाई आ गई। और उसकी बेनियाजी (किसी चीज की चाह और परवाह न करना) के दर्शन के बाद मुझे पता चला कि उसके

सामने पूरी सृष्टि का ज्ञान कण भर मूल्य नही रखता और उसकी कृपा के दर्शन से मालूम हुआ कि वह इतना बडा कृपालु है कि पूरी सृष्टि के पाप भी उसकी कृपा के सामने बहुत छोटे है।

—मैं वर्षों ईश्वर के रहस्यो मे इतना आश्चर्य-चकित रहा कि मेरी बुद्धि मारी गई। इसके बावजूद भी ससार मुझे बुद्धिमान समझता रहा।

—ईश्वर ने मुझे ऐसी वस्तु प्रदान की है जिसकी वजह से मैं मुर्दा हो चुका हूँ और इसके बाद वह जीवन प्रदान किया जाएगा जिसमें मृत्यु की कल्पना तक न होगी।

—यदि मैं विद्वानो के सामने एक वाक्य भी मुँह से निकाल दूं तो वह प्रवचन करना और उपदेश देना त्याग दे और कभी मंच पर न चढे।

—मैंने ईश्वर और ससार से इस तरह सुलह करली है कि कभी लडाई नही करूँगा।

—ईश्वर ने मुझे सत बायजीद से भी अधिक ऊँचे पद प्रदान किए है क्योकि सत बायजीद तो यह कहते है कि मैं न एक स्थान पर वास करने वाला हूँ और न यात्री। और मेरा कहना यह है कि मैं ईश्वर की सत्ता ही मे वास करता हूँ और उसकी सत्ता ही मे यात्रा करता हूँ।

—जिस दिन से ईश्वर ने मेरे अहं को दूर कर दिया है स्वयं स्वर्ग मेरा इच्छुक है और नर्क मुझ से दूर भागता है। और जिस स्थान पर ईश्वर ने मुझे पहुँचा दिया है यदि स्वर्ग

और नर्क उस स्थान से होकर गुजरें तो दोनों अपने वासियों सहित इसमें विलीन हो जाएँ।

—संसार तो वह बातें करता है जिनका सम्बन्ध सृष्टा और सृष्टि से है, परन्तु मैं वह बात कहता हूं जो ईश्वर अबुल हसन के साथ करता है।

—चूंकि मेरे माता-पिता हजरत आदिम (आदि पुरुष) के वंशज थे इसलिए उन्हें आदमी कहा जाता है। परन्तु मेरा वास-स्थान वहाँ है जहाँ न आदम है न आदमी।

—जिसने मुझे हर हाल में जीवित पाया है वह केवल संत बायजीद हैं।

—एक बार आपने यह आयत पढ़ी—"तेरे रब की गिरफ्त (पकड़) बहुत सख्त है"। परन्तु आपने कहा कि मेरी गिरफ्त उसकी गिरफ्त से भी अधिक सख्त है। इसलिए कि वह तो संसार को पकड़ता है और मैंने उसका दामन पकड़ रखा है।

—मेरे दिल में इश्क का ऐसा गम है कि पूरी दुनिया में कोई भी उसकी तह तक नहीं पहुँच सकता। भक्त मीरा ने इसी बात को यूं कहा है—हेरी मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय।

—कयामत में प्राणियों का एक दूसरे से सम्बन्ध समाप्त हो जायगा, परन्तु मेरा जो सम्बन्ध ईश्वर से कायम है वह समाप्त नहीं होगा।

—मैं ईश्वर से कहता हूं कि मुझे वह पद प्रदान न कर

जिसमे तेरे सिवा मेरी खुदी (अह) का अस्तित्व बाकी रह जाय।

—जब तक मुझे पूर्ण विश्वास नही हो गया कि मेरा खाना-पीना-वस्त्र आदि ईश्वर के पास है, उस समय तक मैं अपनी कोशिश से पीछे नही हटा। और जिस समय तक यह विश्वास नही हो गया कि ससार कोई वस्तु नही दे सकता, उस समय तक संसार से मुंह नही मोडा।

—मैंने बहुत से महात्माओ की सेवा मे समय व्यतीत किया परन्तु किसी को अपना गुरु इसलिए नही बनाया कि मेरा गुरु केवल परमेश्वर है।

—जब मैंने ईश्वर की "अद्वैतता" पर बोलना आरम्भ किया तो मैंने देखा कि ईश्वर पृथ्वी और आकाश मे और पृथ्वी और आकाश ईश्वर मे समाए हुए है, परन्तु संसार को इसका बिलकुल ज्ञान नहीं।

—मुझे शिष्य बनाने की इच्छा नही क्योकि मै गुरु होने का दावा नही करता। बल्कि मैं तो हर समय "ईश्वर बहुत है" कहा करता हूँ।

—मैं ईश्वर के अतिरिक्त किसी को अपने हृदय मे स्थान नही देता और यदि कोई विचार आ भी जाता है तो तुरन्त निकाल फेकता हूँ।

—मैंने पचास वर्ष इस तरह व्यतीत किए है कि पूर्ण रूप से ईश्वर के साथ रहा और ससार के लिए इसमे कोई ध्यान नही था। रात की नमाज़ से लेकर प्रात·काल तक "कयाम की अवस्था" मे (ईश्वर मे वास करना) रहा और

उस समय मैं कभी पॉव फैला कर नहीं बैठा। तब कही यह पद प्राप्त हुआ कि लोग तो वह समझते है कि मैं सोया हुआ हूँ, परन्तु उस समय मै स्वर्ग और नर्क की सैर करता रहता हूँ। लोक-परलोक मेरे लिए एक हो चुके है क्योकि मैं सारे समय ईश्वर के सत्सग में रहता हूँ।

— मै चालीस (४०) वर्ष से खाने-पीने का कोई प्रबन्ध नही करता। केवल अतिथि के खाने का प्रबन्ध करता हूँ और उसकी बदौलत मै स्वय भी खा-पी लेता हूँ।

— मेरा मन एक घूंट ठडा पानी का इच्छुक है परन्तु मैने उसे वचित कर रखा है।

— मैंने सत्तर (७०) वर्ष ईश्वर के सत्सग में इस तरह व्यतीत किए है कि इस समय तक मैने एक क्षण भी कभी मन की बात नही मानी। चालीस वर्ष तक आपको बैगन खाने की इच्छा रही परन्तु अपने नही खाए और जब एक दिन आपकी माँ ने आग्रह पूर्वक खिला दिए तो उसी रात किसी ने आपके सुपुत्र की हत्या करके शव घर के दरवाज़े की चौखट पर डाल दिया। और जब आपको इसकी खबर हुई तो अपनी मॉ से कहा कि मैंने आपको पहले ही मना किया था कि मेरा सम्बन्ध ईश्वर के साथ है। अब आपने अपने आग्रह का नतीजा देख लिया।

— ससार से मैं चार सौ दीनार का कर्जमन्द होकर जाना पसन्द करता हूँ बजाय इसके कि किसी ज़रूरत मन्द को मॉगने पर कुछ न दूं। आशय यह है कि यदि कर्ज़ भी लेना पड़े तो कर्ज लेकर भी ज़रूरतमन्द की मदद करनी चाहिए। हाँ

कर्ज की सीमा अपने लिए निर्धारित कर लेनी चाहिए, जैसे सन्त ख़िरकानी ने अपने लिए चार सौ दीनार तक कर्ज़ लेने की सीमा बताई है। सूफी-सन्त महात्मा बख्तियार काकी को उनके गुरु ने पाँच सौ रुपये तक कर्ज़ लेने की आज्ञा दे रखी थी।

— जब कयामत मे मुझे प्रश्न होगा कि दुनिया से क्या लेकर आया है तो मै विनयपूर्वक कहूँगा कि तूने संसार मे कुत्ते को मेरा साथी बना दिया था और मै हर क्षण उसकी निगरानी मे लगा रहता था ताकि वह मुझे और दूसरे लोगो को काट न ले। और तूने मुझे अशुद्धता और अपवित्रता से भरपूर अर्थात मलिन स्वभाव और प्रकृति प्रदान की थी जिनकी निर्मलता के लिए मैंने सब आयु लगा दी।

— लोग तो यह कहते रहते हैं कि हे ईश्वर, मृत्यु के समय कृपा करके हमारी सहायता करना। परन्तु मैं यह कहता हूँ कि हे ईश्वर, हरक्षण और हर घडी कृपा करके हमारी सहायता कर और मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर।

— एक बार मैंने स्वप्न में ईश्वर से विनम्रतापूर्वक कहा कि मैने तेरे प्रेम में साठ (६०) वर्ष व्यतीत कर दिए और आज तक तेरी आस लगाए हूँ। इस पर जवाब मिला कि तू केवल साठ (६०) वर्ष ही से हमारे इश्क़ मे गिरफ्तार है और हम तुझको आदि काल से अपना प्रिय बनाए हुए हैं।

— एक बार स्वप्न में मुझसे ईश्वर ने कहा—क्या तू यह चाहता है कि मैं तेरा बन जाऊँ। मैंने विनती की—नही। फिर प्रश्न हुआ—क्या तेरी यह इच्छा है कि तू मेरा हो जाय।

मैंने कहा—नही। फिर ईश्वर ने कहा—पूर्वकाल के भक्तों को तो यह इच्छा रही कि मैं उनका हो जाऊँ, फिर तुझे यह इच्छा क्यो नही है। मैंने विनयपूर्वक कहा—हे ईश्वर, जो अधिकार तू मुझे प्रदान करना चाहता है उसमें भी तेरा कोई रहस्य अवश्य होना क्योकि तू कभी किसी की इच्छानुसार काम नहीं करता।

— जब मैंने ईश्वर से प्रार्थना की कि मुझे मेरा असली रूप दिखा दे, तो मैंने देखा कि मैं टाट के कपड़े पहने हुए दीन-हीन दशा मे हूँ। और जब मैंने गौर से देख लेने के बाद पूछा—क्या मेरा वास्तविक रूप यही है। तो आवाज़ आई—हाँ, तेरी हैसियत यही है। फिर जब मैंने कहा कि मेरी भक्ति, प्रेम, भय और विनम्रता कहाँ चले गए। तो आवाज आई कि वह सब कुछ तो हमारा था, तेरी असली हकीकत तो यही है।

— हर सुबह विद्वान अपनी विद्या की बढ़ोत्तरी की और तपस्वी अपनी तपस्या मे वढ़ोत्तरी की कामना करते है। परन्तु मै हर सुबह ईश्वर से ऐसी वस्तु माँगता हूँ जिससे धर्म परायण भाइयो को प्रसन्नता प्राप्त हो सके।

आकाश-वाणियां

एक वार आपने आकाश-वाणी सुनी कि ऐ अबुल हसन, तू नक़ीरीन (क़ब्र में सवाल-जवाब करने और कष्ट देने वाले दो फरिश्तो) से क्यो नहीं डरता। आपने कहा कि जिस तरह वीर पुरुष ऊँट की घटी से भयभीत नही होता, उसी तरह मै भी मुर्दों से भयभीत नही होता। फिर आवाज आई कि तू कयामत (प्रलय) से और उसके

भीषण कष्टो से भयभीत क्यो नही होता। आपने उत्तर दिया कि जब तू मुझे पृथ्वी से उठाकर प्रलय-क्षेत्र मे खडा करेगा तो मैं अबुल हसन-रूपी-वस्त्र उतार कर ईश्वर-तत्व मे गोता लगाऊंगा ताकि ईश्वर के अतिरिक्त कुछ बाकी न रहे। और जब अबुलहसन होगा ही नही तो फरिश्ते किसको कष्ट देगे।

मुझे ईश्वर की तरफ से आती हुई यह आवाज सुनाई देती है कि तू हमारा है और हम तेरे है। परन्तु मैं जवाब देता हूँ कि तू सर्व शक्तिमान है और मैं एक दीन-हीन तेरा दास। (सन्त तुलसीदास जी ने भी अपने एक भजन मे इसी बात को यूँ कहा है—"तू दयालु दीन हो, तू दानि हो भिखारी)

एक बार मैंने यह आवाज सुनी कि ईमान क्या चीज है। मैंने उत्तर दिया कि ईमान वही है जो तूने मुझे प्रदान किया है।

एक बार मैंने ईश्वर से विनती की कि मुझे दुनिया से उठा लिया जाय। तो आवाज आई कि ऐ अबुलहसन, हम तुझे इसी प्रकार जीवित रखेगे ताकि हमारे प्रिय भक्त तेरे दर्शन कर सकें। और जो तेरे दर्शन से वचित रह जाएँ वह तेरा नाम सुन कर तुझसे गायबाना (अनुपस्थिति मे) सम्बन्ध रख सके। और अध्यात्म-लाभ प्राप्त कर सके। क्योकि हमने तुझे अपनी पवित्रता से निर्मित किया है, इसलिए तुझसे अपवित्र अर्थात मलिन हृदय वाले मनुष्य मुलाकात नही कर सकते।

मैंने एक बार यह आवाज़ सुनी कि ऐ अबुलहसन, मेरी आज्ञाओ का पालन करता रह। मैं ही वह जीवित रहने वाला हूँ जिसकी कभी मृत्यु नही और मै तुझे भी अमरता प्रदान कर दूंगा। मेरी निषिद्ध की हुई चीजो से बच क्योकि मेरा साम्राज्य

अविनाशी है और मैं तुझको ऐसा लोक प्रदान कर दूंगा जो अनश्वर होगा।

मैंने यह आकाश-वाणी सुनी कि संसार हमसे स्वर्ग माँगता है यद्यपि उसने अभी तक विश्वास प्रदान करने का शुक्र भी अदा नही किया। तात्पर्य यह है कि ईश्वर की देन और कृपा के लिए धन्यवाद दिए बगैर मनुष्य को चाहिए कि स्वर्ग को पाने की प्रार्थना न करे क्योकि इसके बगैर स्वर्ग कभी नही मिलता। और सच्चे श्रद्धा-भाव तथा पूर्ण विश्वास से ईश्वरीय-मार्ग पर चलने का नाम ईश्वर की देन और कृपा के लिए धन्यवाद देना है।

एक रात भजन-पूजन करते समय आपने यह आवाज सुनी कि ऐ अबुलहसन, क्या तेरी यह इच्छा है कि तेरे सम्बन्ध मे जो कुछ हम जानते है उसको संसार को बतादे। आपने उत्तर दिया कि ऐ खुदा, क्या तू चाहता है कि तेरी कृपा से मैं जैसा तेरा दर्शन करता हूँ और तेरी दया से जो कुछ तेरे रहस्य मैं जानता हूँ, उन्हे संसार पर प्रकट करदूं। आवाज आई—अच्छा रहने दे, न मैं तेरा राज ससार पर खोलूंगा और न तू मेरा राज़ संसार पर खोल।

प्रार्थनाएँ

एक वार आपने प्रार्थना की—हे ईश्वर, मेरे प्राण हरने के लिए यमदूत को मेरे पास न भेजना क्योकि वह प्राण न तो मुझे यमदूत ने प्रदान किए है और न मैं इन्हे उसके सुपुर्द करने को तैयार हूँ। बल्कि यह प्राण तेरी अमानत (धरोहर) हैं और तुझको ही वापस करना चाहता हूँ।

आप इस तरह प्रार्थना किया करते थे—ऐ अल्लाह, मुझे तपस्या-व-भक्ति, ज्ञान-व-तसव्वुफ (सूफी धर्म) का बिलकुल भरोसा नही और न मै स्वयं को ज्ञानी-व-तपस्वी और भक्त-व-सूफी समझता हूँ। ऐ अल्लाह, तू अद्वितीय है और मैं तेरी अद्वितीयता के सामने तुच्छ प्राणी हूँ।

मै यह प्रार्थना करता रहता हूँ कि तमाम प्राणियो को दुख तकलीफ से मुक्ति देकर मुझे अनन्त दुख प्रदान कर दे और इतनी सहन शक्ति देदे कि मै उस दुख के बोझ को सम्भाल सकूँ।

दुख देने वाले से सब प्राणी दूर भागते हैं, और ऐ अल्लाह, मैं तुझे सदा दुख देता रहता हूँ फिर भी तू मेरे समीप है। तेरी इस कृपा के लिए मैं तेरा किसी प्रकार भी धन्यवाद नही दे सकता। हे ईश्वर, मैंने अपनी हर वस्तु तेरे ऊपर निछावर करदी यहाँ तक कि जिस वस्तु पर तेरा अधिकार था उसकी भी बलि देदी। अब तो यह इच्छा है कि मेरे अस्तित्व को समाप्त करदे ताकि तू ही तू बाकी रह जाय।

हे ईश्वर, मेरा अस्तित्व केवल तेरे लिए है। अतः मुझे किसी दूसरे के जाल में मत फाँसना।

हे ईश्वर, बहुत-से साधक उपासना और आधीनता (शरणागति) को, बहुत-से तपस्या और तीर्थ को और बहुत-से ज्ञान और विज्ञान को पसन्द करते है। परन्तु मुझे ऐसा बना दे कि मैं तेरे सिवा किसी और वस्तु को पसन्द न करूँ।

हे ईश्वर, मुझे ऐसे मनुष्य से मिलादे जो तेरा नाम सच्चे दिल से लेता हो ताकि मैं भी उसके सत्सग से आध्यात्मिक-लाभ पा सकूँ।

हे ईश्वर, हर मनुष्य को यह सामर्थ्य प्रदान करदे कि अपने कर्मों के फल को महत्व न देते हुए सच्चे दिल से ईश्वर-भजन में तल्लीन होने का अर्थ भी यही है कि ईश्वर-के-मार्ग पर चलता हुआ संसार के कर्तव्य निष्काम-भाव से निभाता रहे—और वही बात गीता में "निष्काम-कर्म-योग" के नाम से कही गई है।)

वाणी

—जब तक तुम्हारा दिल मुर्दा है शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। और मुर्दा है वह दिल जिसमें ईश्वर के अतिरिक्त किसी और का प्रेम वास करता हो, चाहे वह कितना ही भजन-पूजन क्यों न करता हो।

—चमत्कार का अर्थ यह है कि यदि महात्मा पत्थर से प्रश्न करे तो पत्थर उसको उत्तर दे।

—ईश्वर ने प्रत्येक प्राणी के लिए एक आरम्भ और एक पराकाष्ठा निश्चित की है।

—हर भजन-पूजन का फल निर्धारित है, परन्तु संतों के भजन-पूजन का फल निश्चित नहीं है, और नहीं उनके बारे में कोई बता सकता है। बल्कि ईश्वर उन पर जितनी कृपा करना चाहेगा कर देगा। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि जिस भजन-पूजन का फल ईश्वर की कृपा पर आधारित हो उसके बराबर कौन-सा भजन-पूजन हो सकता है। (मैं, गाफिल वरनी, इस सम्बन्ध में अर्ज करता हूँ—अतः साधकों को चाहिए कि ईश्वर के प्यारे बन कर, अर्थात पूर्ण श्रद्धा-ध्येय से हर समय उसके भजन-पूजन में संलग्न रहे। हर समय ईश्वर के भजन-पूजन में लगे रहने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि संसार के

काम छोड कर, आसन पर बैठ जाएँ और हर समय भजन-पूजन करते रहे। बल्कि इसका तात्पर्य यह है कि नियमित सन्ध्या-वन्दन, पूजा-पाठ, ध्यान आदि करने के बाद शेष समय मे जो भी अन्य सासारिक कार्य करे उसे ईश्वर ही का काम समझ कर पूरी ईमानदारी और श्रद्धाभाव से करे—जिससे मिले तो ऐसा समझ कर मिले मानो स्वय ईश्वर ही से मिल रहे है, जिसको देखे तो समझे मानो ईश्वर ही को देख रहे है, खाएँ-पिएँ तो समझे कि ईश्वर का काम कर रहे हैं। सूफी-संत महात्मा जुनैद ने तो सोने (नीद) को भी ईश्वर का काम कहा है, अतः सोएँ तो समझे कि मैं यह भी ईश्वर ही का काम कर रहा हूँ, आदि आदि। इस प्रकार जीवन-यापन करने से आप हर समय ईश्वर का भजन-पूजन ही करते रहेगे।)

—ईश्वर अपने प्यारे भक्तो को उस स्थान मे रखता है जहाँ अन्य प्राणियो की पहुँच नही हो सकती।

—जो लोग ईश्वर के सामने पृथ्वी और, आकाश और पर्वतो के समान स्थिर होकर खडे नही होते उन्हे महापुरुष नही कहा जा सकता बल्कि वह मुर्दा है।

—भला-मानस वही है जो स्वय को भला कह कर प्रकट न करे, क्योकि भलाई केवल ईश्वर का गुण है।

—काश स्वर्ग ओर नरक का अस्तित्व न होता, ताकि यह मालूम हो सकता कि तेरे भक्तो की संख्या कितनी है और नर्क से बचने तथा स्वर्ग को पाने के उद्देश्य से कितने मनुष्य तेरा भजन-पूजन करते है।

—ईश्वर तक पहुँचने के लिए असख्य मार्ग हैं, अर्थात ईश्वर ने जितने प्राणी पैदा किए है उतने ही ईश्वर तक पहुँचने

के मार्ग भी हैं। और हर प्राणी अपनी सामर्थ्य के अनुसार उन मार्गो पर चलता रहता है। मैंने हर मार्ग पर चलकर देख लिया, परन्तु किसी मार्ग को गलत नही पाया। फिर मैंने ईश्वर से प्रार्थना की कि मुझे ऐसा मार्ग बता दे जिसमे तेरे और मेरे सिवा कोई और न हो। अत उसने वह मार्ग मुझको प्रदान कर दिया। परन्तु उस मार्ग पर चलने की किसी दूसरे मे सामर्थ्य नही है।

—वीर पुरुष वही है जिसको ससार कायर समझता है, और जो संसार की दृष्टि मे वीर होता है वह वास्तव मे कायर है। (महात्मा गाँधी का "अहिंसा" का सिद्धान्त इसी तथ्य पर आश्रित है।)

—केवल आध्यात्मिक मजिलो को पार कर लेने से ही ईश्वर का दर्शन नही मिलता। बल्कि साधक ने जो कुछ ईश्वर से लिया है उसको वापस करदे, अर्थात ईश्वर मे विलीन हो जाय क्योकि अस्तित्वहीन होने के बाद ही ईश्वर-तत्व का ज्ञान हो सकता है।

—वृत और उपासना का नियमानुसार पालन करने वाले तो बहुत होते है, परन्तु भक्त वही है जो साठ (६०) वर्ष का जीवन ऐसे व्यतीत करदे कि उसके कर्म-पत्र मे कुछ भी न लिखा जाय। (संत कबीरदासजी ने इसे यूँ कहा है–"दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यो की त्यों धर दीनी चदरिया।") और यह पद प्राप्त कर लेने के बाद भी ईश्वर से लज्जित रहते हुए विनम्रतापूर्वक व्यवहार करे।

जब भक्ति करते-करते आपका हृदय नदी की लहरो की तरह हो जायगा तो उसमे से एक आग प्रकट होगी और जब

तुम स्वयं को उसमे झोक कर राख बन जाओगे तो तुम्हारी राख से एक पेड निकलेगा और उसमे फलों की बजाय अनन्त जीवन निकलेगा और उसको खाते ही तुम ईश्वर मे मिल कर एकमेक हो जाओगे ।

—ईश्वर ने ऐसे ऐसे मनुष्य पैदा किए हैं जिनके हृदय ईश्वर के साथ एकत्व प्राप्त करने के फलस्वरूप तेज से इस प्रकार प्रकाशित हो गए हैं कि पृथ्वी और आकाश की समस्त चीजे उस तेज मे से गुजरे तो वह उन सब को जला कर भस्म करदे ।

—जो रहस्य सतों के हृदय में छिपे रहते हैं यदि वह उन मे से एक रहस्य भी प्रकट करदे तो आकाश और पृथ्वी के सारे जड़ चेतन परेशान हो जाये ।

—ईश्वर के ऐसे भक्त भी है कि जब वह लिहाफ ओढ लेंट जाते है तो चाँद-तारो की रफ्तार तक उनको दिखाई देती रहती है । देवदूत भी, जो प्राणियो को नेकी और वदी की खवर लेकर आकाश पर जाते हैं, उन्हे दिखाई देते रहते हैं । अर्थात ईश्वर अपनी कृपा से समस्त पर्दे (आवरण) उनकी दृष्टि से उठा देता है

—मित्र मित्र के पास पहुँच कर स्वय भी तन्मयता मे खो जाता है ।

—जिसके हृदय मे क्षमा पाने की इच्छा हो वह मित्रता (भक्ति) के योग्य नही । (अर्थात् भक्त वही है जिसके हृदय मे कोई इच्छा न हो । भक्ति के बदले मे अपने पापो को क्षमा कर देने की इच्छा करना, या कोई अन्य फल प्राप्ति की इच्छा

करना, भक्ति नही बल्कि व्यापार है। भक्ति तो केवल भक्ति के लिए करनी चाहिए निर्मल नि:स्वार्थ, निष्काम भाव से की गई भक्ति ही भक्ति कहलाती है।

—ईश्वर के अतिरिक्त ससार मे किसी से कोई सम्बन्ध न रखो क्योकि केवल मित्र से सम्बन्ध रखा जाता है और ईश्वर से बढकर कोई मित्र नही हो सकता।

—जो मनुष्य कुछ न जानने के बावजूद यह कहते है कि हम कुछ जानते है, वह वास्तव मे कुछ भी नही जानते। और जब यह समझ लेते है कि हम कुछ भी नही जानते उस समय ईश्वर हर वस्तु का ज्ञान उन्हे करा देता है और अध्यात्म-ज्ञान के सर्वोच्च पद उनको प्रदान करता है।

—अपनी बुद्धि और कल्पना से ईश्वर को कोई नही पहचान सकता। बल्कि वह जितना भी उसे जान ले यही विचार करे—काश, मैं ईश्वर को इससे भी अधिक जान सकता।

—नेक मडण्पो को मृत्यु से पहले ही ईश्वर की तरफ उन्मुख हो जाना चाहिए।

—सबसे अच्छा बीमार हृदय वहाँ है जो ईश्वर की याद मे बीमार हो। क्योकि जो उसकी याद मे बीमार होता है स्वस्थ भी हो जाता है।

—सच्चे हृदय से भजन-पूजन करने वालो को ईश्वर अपनी कृपा से उन तमाम वस्तुओ की वास्तविकता का दर्शन करा देता है जो दर्शन के योग्य होती है, और वह बाते सुनवा देता है जो सुनने के योग्य होती हैं।

—ईश्वर की राह मे एक ऐसा बाजार भी है जिसको "सन्तो का बाजार" कहा जाता है। इसमे ऐसी सुन्दर-सुन्दर वस्तुएँ है कि साधक वहाँ पहुँच कर ठहर जाते है। वह सुन्दर वस्तुएँ यह है—चमत्कार, अधीनता, शरणागति, अभ्यास, भजन-पूजन, तपस्या।

—इस लोक और परलोक के सुख-आराम ऐसी चीजे हैं कि उनमे पड जाने वाला ईश्वर से दूर हो जाता है और कभी उसका मिलन प्राप्त नही कर सकता। अत. साधक को चाहिए ससार से विमुख होकर ईश्वर की याद मे एकान्तवास ग्रहण करे। और सिजदे मे गिरकर कृपा के सिन्धु को सिद्ध कर ले। ईश्वर के अतिरिक्त हर वस्तु को इस तरह अनदेखा करता जाय कि उसके "एकत्व" मे विलीन होकर अपने अस्तित्व को समाप्त कर दे।

—ससार चाहने वालो पर ससार राज्य करता है और ससार-त्यागी ससार पर राज्य करता है।

—जब अल्लाह नमाज के वक्तो से पहले नमाज अदा करने की तुम से इच्छा नही करता तो फिर तुम भी रिज्क (खाने-पीने के पदार्थ आदि) की आवश्यकता से पहले इच्छा न करो।

—असीम प्रयास और प्रयत्न करने पर भी तुम्हे समझना चाहिए कि तुम ईश्वर के योग्य नही हो और न तुम्हे इस तरह का दावा करना चाहिए वर्ना दलील के बाद तुम्हारा दावा गलत साबित होगा।

—तुम जो चाहो ईश्वर से माँगो परन्तु नफ्स (वासनामय-मन) के दास न बनो और न सम्मान, प्रतिष्ठा, वैभव

आदि प्रतिष्ठित पदों के गुलाम बनो, क्योकि कयामत-क्षेत्र मे जगत ही जगत का दुश्मन होगा। परन्तु अबुलहसन का दुश्मन ईश्वर है, और वह जिसका दुश्मन हो जाए उसका फैसला कभी नही हो सकता—

नहीं करता है ऐसी दुश्मनी दुश्मन भी दुश्मन से
हमारे साथ दोस्तों ने दोस्ती की है।
—गाफ़िल बरनी

(सूफियो के यहाँ ईश्वर को दोस्त अर्थात् अभिन्न मित्र मानते है और पूर्ण-सन्त को "वली" कहते है। वली के अर्थ हैं—ईश्वर का दोस्त।)

—यदि तुम ईश्वर के अतिरिक्त दूसरी चीजो के इच्छुक हो तो ईश्वर-भक्ति के मार्ग मे अपने महान साहसी होने का प्रमाण दो। क्योकि महान साहसी को ही ईश्वर हर चीज प्रदान करता है। (शास्त्रो मे भी आया है कि वीर ही वसुन्धरा को भोगते है।)

—मनुष्यो की यह इच्छा रहती है कि ससार से परलोक के योग्य कोई वस्तु ले जाएँ। परन्तु फनाइयत (ईश्वर मे लय होकर अपने अस्तित्व को समाप्त कर देना) के सिवाय परलोक के योग्य कोई वस्तु नही।

—इमाम (धर्म-नायक) वही है जिसने राहे तय करली हो।

—मनुष्य को कम से कम इतना ईश्वर-सुमिरन अवश्य करना चाहिए कि शास्त्र की तमाम आज्ञाओ का पूर्णरूप से पालन होता रहे। और इतना ज्ञान पर्याप्त है कि यह पता चल जाए कि करने योग्य कौन से कर्म हैं न करने योग्य कौन से कर्म

हैं। विश्वास इतना काफी है जिससे वह ज्ञान हो सके कि जितना रिज्क (अन्न-जल आदि) भाग्य मे लिखा जा चुका है अवश्य मिलकर रहेगा। और इतनी तपस्या पर्याप्त है कि अपने निर्धारित रिज्क पर सन्तोष करते हुए अधिक की इच्छा शेप न रहे।

—यदि तुम पृथ्वी और आकाश और ईश्वर के स्वरूप के द्वारा ईश्वर को जानना चाहोगे तब भी उसे नही जान सकते। हाँ, विश्वास का प्रकाश हृदय मे लेकर यदि उसको जानना चाहोगे तो उस तक पहुँच जाओगे। सन्त कबीर ने भी कहा है—"मैं (ईश्वर) तो हूँ विश्वास मे"।

—झरने के बजाय नदी मे से गुजरने पर भी पानी के बजाय खूने-जिगर पीते रहो ताकि तुम्हारे बाद आने वालो को यह पता चल सके कि हम से पहले इस मार्ग से कोई दिलजला (प्रेमी) गुजरा है।

—नेकियो के वर्णन के समय एक सफेद बादल बरसता रहता है और ईश्वर के वर्णन के समय हरे रग का बादल प्रेम की वर्षा करता रहता है। परन्तु नेकियो का वर्णन सर्व-साधारण के लिए कृपा और साधको के लिए गफलत (असाव-धानी, बेसुधी) है।

यात्रा पाँच प्रकार की होती हे—पहली, पैरो से यात्रा करना। दूसरी, अन्त.करण से यात्रा करना। तीसरी, हिम्मत से यात्रा करना। चौथी, दर्शन के द्वारा यात्रा करना। और पाँचवी, मन की लयता के साथ यात्रा करना।

—हजारो साधक शास्त्रानुसार ईश्वर के मार्ग पर चलते हैं तब कही उनमे से केवल एक साधक ऐसा निकलता है जिसकी परिक्रमा शास्त्र भी करने लगते हैं।

—ईश्वर ने सन्तो के लिए निनन्यानवे (९९) लोको की रचना की है। जिनमे से केवल एक लोक का विस्तार बैकुण्ठ से पाताल तक है। शेष अट्ठानवे (९८) लोको का हाल वर्णन करने के लिए किसी मे मुँह खोलने की ताकत नही।

—जिसको ईश्वर मजिल पर पहुँचाना चाहता है उसके लिए मार्ग की लम्बाई समाप्त हो जाती है।

—ईश्वर मनुष्यो को अपनी ओर आने का निमन्त्रण देकर जिस पर चाहता है अपनी कृपा से मार्ग को खोल देता है।

—अध्यात्म-ज्ञान के द्वारा भी कोई मल्लाह अपनी नाव को डूबने से नही बचा सकता। हजारो आए और डूबते चले गए। केवल एक ईश्वर का अस्तित्व शेष रह गया।

—ईश्वर तक पहुँचने के लिए एक हजार मजिले (पडाव) है। जिनमे सबसे पहली मजिल चमत्कार अर्थात् सिद्धियाँ है। और इस मजिल से कम सामर्थ्यवान साधक आगे नही बढ़ सकते और अगली मंजिलो से वचित रह जाते है। (सिद्धियाँ मनोमय कोश में आनी आरम्भ हो जाती है। और यदि साधक मनोमय कोश को पार नही करेगा तो आगे के विज्ञानमय कोश और आनन्दमय कोश मे कैसे पहुँचेगा। और जब उन तक पहुँचेगा ही नही तो उन्हे पार करके धुर-लक्ष्य को कैसे प्राप्त करेगा—इसी तरफ इशारा है।)

—हिदायत (मार्ग-प्रदर्शन) और जलालत (पथ-भ्रष्टता) दो अलग-अलग मार्ग है। हिदायत का मार्ग तो ईश्वर तक पहुँचा देता है, परन्तु जलालत का मार्ग बन्दे से ईश्वर की ओर जाता है। अतः जो मनुष्य यह दावा करता है कि मैं ईश्वर

तक पहुँच गया वह झूठा है, और जो यह कहता है कि मुझे ईश्वर तक पहुँचाया गया है, वह अपने वचन मे एक सीमा तक सच्चा है। (अर्थात् साधक गुरु की हिदायत के अनुसार चलता हुआ ही ईश्वर तक पहुँच सकता है, अपने बलबूते पर कोई उस तक नही पहुँच सकता।)

—ईश्वर को पा लेने वाला स्वयं शेष नही रहता, परन्तु कभी नाश भी नही होता।

—ईश्वर ने ऐसे महापुरुष भी पैदा किए है जिनके हृदय इतने विशाल है कि पूरब और पश्चिम की विशालता भी उनके सामने तुच्छ है।

—तीन चीजो की सुरक्षा बहुत मुश्किल है—पहली, मनुष्यों से ईश्वर के रहस्य की सुरक्षा। दूसरी, मनुष्यो की बुराई करने से ज़ीभ की सुरक्षा। और तीसरी, कर्म की पवित्रता और निर्मलता की सुरक्षा।

—ईश्वर और साधक के बीच मे सबसे बडी रुकावट नफ्स (वासनामय-मन) है और जितने महात्मा भूतकाल मे हो गए है उन सबको नफ्स से शिकायत रही।

—धर्म की जितनी हानि लोभी-लालची मनुष्य, पाखण्डी महात्मा और कर्महीन तपस्वी-सन्यासी करते है उतनी हानि शैतान भी नही करता।

—सबसे श्रेष्ठ कर्म भगवत-स्मरण, उदारता, सयम और सन्तो का सत्सग हैं।

—यदि तुम दुनिया वालो की निगाहो से एक हजार

मील दूर भी भागना चाहोगे तो यह भी बहुत बड़ा भजन-पूजन है और इसमें बहुत से लाभ छिपे हुए हैं।

—एक सूफी-संत के दर्शन का पुण्य एक सौ हज (तीर्थ) के बराबर और हजार अशर्फियाँ दान देने से भी श्रेष्ठ है। और जिसको सन्त के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो जाय, उस पर ईश्वर की कृपा है। सन्त तुलसीदास जी ने भी कहा है—

अब मोहि भा भरोस हनुमंता।
बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता॥

—साधक जब मार्ग में दस पड़ावों पर जहर खा लेता है तब कहीं ग्यारहवें पड़ाव पर "शुक्र" (ईश्वर की मर्जी में सन्तुष्टी) प्राप्त करने का सौभाग्य मिलता है। और जब तक ईश्वर तुम्हे खोज की सामर्थ्य प्रदान न कर दे तब तक ईश्वर की खोज से बचो, क्योंकि ईश्वर द्वारा सामर्थ्य दिए जाने के बगैर यदि कोई जीवन भर भी उसकी खोज करता रहे तब भी उसे नहीं पा सकता।

—लाभदायक और हितकारी ज्ञान वही है जिस पर आचरण किया जाय। और शुभ कर्म वह है जिसे करना तुम्हारा कर्त्तव्य बना दिया जाय।

—ज्ञानी हृदय के प्रकाश के द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार करते है, और भक्त-जन विश्वास के प्रकाश के द्वारा ईश्वर का दर्शन करते हैं और जवाँ-मर्द (वीर पुरुष) निरीक्षण के द्वारा दर्शन करते हैं। जब लोगों ने पूछा कि आपने ईश्वर को कहाँ देखा तो उत्तर दिया कि जिस स्थान पर मैं खुद को नही देखता वहाँ ईश्वर को देखता हूँ।

—अक्सर मनुष्य ने दावा तो कर दिया परन्तु यह नही सोचा कि यह दावा खुद इस बात की दलील है कि उन्हे परम-तत्व का ज्ञान प्राप्त नही हुआ, वल्कि यह दावा खुद उनके लिए पर्दा वन गया।

—सत्य और मिथ्या का विचार करने वाले ईश्वर-भक्त नही हो सकते।

—यद्यपि कर्म करना अच्छी बात है, परन्तु इतनी जान-कारी होनी आवश्यक है कि कर्म करने वाले तुम स्वय हो या तुम्हारे रूप मे कोई दूसरा कर्म कर रहा है। क्योकि कर्म वही अच्छा है जिसका करने वाला तुम्हारे रूप मे कोई दूसरा न हो, बल्कि वह कर्म तुम स्वय कर रहे हो। उदाहरण के लिए ऐसे समझो जैसे कोई व्यापारी अपने मालिक के धन से व्यापार करता हो और जब उसका मालिक वह धन-सम्पत्ति वापस लेले तो वह मनुष्य निर्धन होकर रह जाय।

—ईश्वर को हर जगह ऐसे उपस्थित समझो कि तुम्हारा अस्तित्व शेष न रहे, क्योकि तुम अपने अस्तित्व के बोध के रहने तक ईश्वर-दर्शन से वंचित रहोगे।

—भजन-पूजन या तो शारीरिक होता है या मौखिक, या हृदय से उसकी आधीनता और शरणागति।

—अध्यात्म-ज्ञान वाह्य भजन-पूजन और धार्मिक-भेष बनाने से प्राप्त नही होता। और जो लोग ऐसा मानते हैं कि तत्व-ज्ञान बाह्य-भजन-पूजन और भेष बनाने से प्राप्त हो जाता है वह परीक्षा मे लिप्त हैं।

—नफ्स (वासनामय-मन) की एक इच्छा पूरी करने

वाले को ईश्वर के मार्ग मे हजारो दुखो को सहन करना पड़ता है।

—ससार मे रिज्क बाँटते समय ईश्वर ने भक्तो को दुख-दर्द प्रदान किया और उन्होने सहर्ष उसे स्वीकार भी कर लिया।

—सन्त-जन ससार से घृणा करके ईश्वर-भजन मे मगन रहते है और अपना "हाल" (आध्यात्मिक-अवस्था) कभी ससार पर प्रकट नही होने देते। और जब संसार वाले उनके आध्यात्मिक-पद को पहचान कर उन्हे प्रसिद्ध करते है, उनकी मान-प्रतिष्ठा करते है तो उनका आनन्द बेनमक के खाने जैसा हो जाता है।

—ईश्वर की ओर से जो कुछ मिल जाए उसमे सन्तोष करना और ईश्वर का कृतज्ञ रहना एक हजार अच्छी से अच्छी पूजाओ से भी श्रेष्ठ है।

—यदि ईश्वर की कृपाओ के समुद्र की एक बूंद भी किसी पर टपक जाए तो दुनिया मे न तो किसी चीज की इच्छा बाकी रहे, न किसी से बात करने को दिल चाहे, और न किसी का बात करना अच्छा लगे।

—ससार में किसी से बैर करना सबसे बुरी बात है।

—वृत और उपासना यद्यपि श्रेष्ठ कर्म है, परन्तु घमण्ड, अभिमान और अहकार को हृदय से निकाल देना उनसे से भी अधिक श्रेष्ठ कर्म है।

—चालीस वर्ष तक भजन-पूजन करना आवश्यक है— दस वर्ष तो इसलिए कि वाणी मे सच्चाई और विनम्रता पैदा हो जाए, दस वर्ष इसलिए कि शरीर का वढ़ा हुआ माँस कम

हो जाए, दस वर्ष इसलिए कि ईश्वर से दिली-लगाव पैदा हो जाए, और दस वर्ष इसलिए कि तमाम "हाल" (समस्त आध्यात्मिक अवस्थाएँ) सही हो जाएँ और सुधर जाएँ। और जब साधक इस प्रकार चालीस वर्ष तक भजन-पूजन करेगा तो वह सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक-पद प्राप्त कर लेगा।

—ससार मे सबसे विनम्रता से व्यवहार करो, पूर्ण श्रद्धा और विश्वास से शास्त्रो की आज्ञा का पालन करते रहो, और जीवन को सत्यता और पवित्रता के साथ ईश्वर-भजन मे व्यतीत करो। चूंकि ईश्वर स्वय भी सत्य और पवित्र है इसलिए सच्चे और पवित्र मनुष्यो को प्यार करता है। परन्तु यह मार्ग मस्तो और दीवानो का मार्ग है।

—मृत्यु से पहले तीन चीजे प्राप्त करलो–पहली यह कि ईश्वर के प्रेम मे इतना रोओ कि आँखो से आसुओ के बजाय खून बहने लगे। दूसरी यह कि ईश्वर से इतना भयभीत रहो कि पेशाब की बजाय खून आने लगे। और तीसरी यह कि ईश्-वर की आज्ञाओ का पालन करते हुए भजन-पूजन मे इतना रात्रि-जागरण करो कि सारा शरीर पिघल जाए।

—ईश्वर को इस तरह याद करो कि फिर दुबारा याद न करना पड़े। (अर्थात ईश्वर को किसी समय भी मत भूलो-न जागते मे न सोते में न रात मे) सोते समय भी ईश्वर-सुमिरन बना रहे, इसका सरल उपाय है–

"सोते समय करो फिर साधक हिरदै में ऐसा दृढ ध्यान।
मात-रूप में बैठे हैं खुद सिरहाने सद्‌गुरु भगवान ॥
मेरा सिर है, गोद में उनकी, सुला रहे वो थपक-दुलार।

परम शान्ती मन में छाई है हिरदै में आनन्द अपार ।।
रहे नींद आने तक दिल में प्रेम भाव से यही विचार ।
ताकि नींद में भी हे साधक टूटे ना साधन का तार ।।
—ग़ाफ़िल बरनी ('नित-चर्या' से)

—एक बार "अल्लाह" कहने से इस तरह जीभ जल जाती है कि दुबारा "अल्लाह" नही कह सकता और जब तुम उसको दुबारा "अल्लाह" कहते सुनो तो समझ लो कि वह ईश्वर का कीर्तन कर रहा है जो उसकी जीभ के द्वारा हो रहा है ।

—यदि तुम्हारे हृदय मे ईश्वर की याद विद्यमान है तो तुम्हे संसार की कोई चीज नुकसान नही पहुँचा सकती। और यदि तुम्हारे दिल मे ईश्वर की याद विद्यमान नहीं है तो महात्माओं का भेप वनाना भी लाभदायक नही हो सकता।

—सत्यता से परम-तत्व का साक्षात्कार करने का नाम "वका" है। ("वका"सूफियो के यहाँ उस आध्यात्मिक अवस्था को कहते है जिसमे साधक अपनी आत्मा को परमात्मा की सत्ता में विलीन करके परमात्मा के साथ एकमेक हो जाता है और उसी में वास करने लगता है—और तभी उसका वास्तविक जीवन आरम्भ होता है। इस अवस्था से पहले जीवित होते हुए भी वह मृत समान होता है क्योकि उसे संसार मे सही-रूप से जीवन यापन करना नही आता जिसके कारण वह स्वयं भी अशान्त रहता है तथा सही व्यवहार करना न आने के कारण दूसरों की शान्ति भी भग करता रहता है।)

—संसार को ईश्वर ने अपनी कृपा से तो अवगत करा दिया, यदि अपने "स्वरूप" के दर्शन भी करा देता तो साधक

आश्चर्य के समुद्र में इस तरह डूब जाते कि उसका नाम भी याद न रहता।

—ऐसे मनुष्यों का सग ग्रहण करो जो प्रेम की अग्नि मे जल कर भस्म हो चुके हो और दुख के समुद्र मे गर्क हों।

—दरबेश वही है जिसमें गति और स्थिरता बाकी न रहे। और जिसे सुख-दुख का ज्ञान न हो।

—लोग सुबह और शाम भजन-पूजन करने ही से ईश्वर की खोज का दावा कर बैठते है। परन्तु वास्तव मे उसकी खोज करने वाले वह है जो हर क्षण उसकी तलाश मे रहे।—

उसी की याद उसी का जिक्र अब दिन रात रहते है।
रहा कुछ दोस्तो हमको न सुबह-ओ-शाम का बन्धन॥
—गाफिल बरनी

—इस तरह मौन धारण करो कि सिवाय अल्लाह-अल्लाह के (अर्थात राम-नाम के अतिरिक्त) और कुछ मुँह से न निकले, और हृदय मे ईश्वर-चिन्तन के अतिरिक्त और कोई चिन्तन शेष न रहे। और संसार के सारे कामो से अलग होकर अपनी इन्द्रियो को ईश्वर के ध्यान मे लगाए रखो ताकि तुम्हारा हर काम-काज पवित्रता पर आधारित हो और उसके भजन-पूजन के अतिरिक्त किसी अन्य का भजन-पूज न करो।

—जीवन-भर ससार के भजन-पूजन से क्षण-भर का ईश्वर-भजन श्रेष्ठ है।

—आचरण का उदाहरण सिह जैसा हैं। जब मनुष्य अपना पैर सिह की गरदन पर रखता है तो वह सिह लोमडी

की तरह हो जाता है। इसी तरह जब आचरण पर अधिकार और नियंत्रण कर लिया जाय तो आचरण सरल हो जाता है।

—स्वर्ग में प्रवेश पाने का रास्ता निकट है परन्तु ईश्वर-मिलन का मार्ग दूर है।

—दिन में तीन हजार बार मर कर जीवित होना चाहिए तव कही सम्भव है कि ऐसा अमर जीवन प्राप्त हो जाए जिसके बाद मृत्यु न हो।

—जव तुम ईश्वर के मार्ग मे अपना अस्तित्व मिटा दोगे तो तुम्हे ऐसा अस्तित्व मिलेगा जो मिटने वाला नही। (यही फना और वका है।)

—मनुष्य के लिए ईश्वर की तरफ जाने वाला एक ऐसा मार्ग है जिससे अध्यात्म-ज्ञान और साक्षात्कार का सौभाग्य प्राप्त होता है। और इसी मार्ग से ईश्वर अपने आपको साधक पर प्रकट कर देता है। यह ऐसा महान पद है जिसको शब्दो में वर्णन करना सम्भव नही।

–ईश्वर अपनी कृपा अपने भक्तो के लिए सुरक्षित रखता है और सुख-आराम अपने सांसारिक मनुष्यो के लिए छोड देता है।

—ईश्वर की मित्रता इसलिए आवश्यक है कि जब यात्री उस स्थान पर पहुँचता है जहाँ उसका मित्र मौजूद हो तो वह मार्ग के तमाम दुख-दर्दो को भूल जाता है और उसके हृदय मे ढाढस बंध जाता है। अत जव तुम महा-न्याय के दिन (कयामत में) इस तरह यात्री बन कर पहुँचोगे जहाँ ईश्वर तुम्हारा मित्र होगा तो तुम्हे प्रसन्नता प्राप्त होगी।

—जो मनुष्य ससार के साथ दया और प्रेम से व्यवहार नही करते उनके हृदय मे ससार के लिए मित्रता का भाव भी नही रह पाता।

—जो लोग अपने जीवन को ईश्वर की आज्ञा पालन में व्यतीत नही करते वह आसानी के साथ सिरात का पुल पार नही कर सकते। (सिरात का पुल—नर्क के ऊपर बना हुआ पुल, जो वाल से भी अधिक बारीक है और तलवार की धार से अधिक तेज है। इस्लाम के विश्वास के अनुसार इस पुल को मरने के बाद सभी को पार करना होता है। ईश्वर-भक्त व नेक मनुष्य इसे पार कर जाते है और पापी मनुष्य नर्क में गिर पड़ते है।)

—जिस स्वास में साधक ईश्वर से प्रसन्न हो जाय वह स्वास वर्षों के बृत और उपासना से श्रेष्ठ है।

—सृष्टि का हर प्राणी और हर वस्तु साधक के लिए एक माया-जाल है और न जाने वह इसमे कब फँस जाय।

—जो साधक किसी दिन किसी प्राणी को कष्ट देता है तो ईश्वर उसका उस दिन का भजन-पूजन स्वीकार नही करता।

—जो मनुष्य ससार मे सतो, पैगम्बरो, और ईश्वर से शर्म करता है, परलोक मे ईश्वर उससे शर्म करता है।

—तीन प्रकार के मनुष्यो को ईश्वर-मिलन प्राप्त होता है। पहला, विरक्त ज्ञानी, दूसरे, साहब-सज्जादा को (जिसके माथे पर सिजदे का निशान हो अर्थात निर्मल मन और पूर्ण

श्रद्धा-विश्वास से भजन-पूजन करने वाले को)। और तीसरे, जीविका को धर्मानुसार और पवित्रता से अर्जित करने वाले को।

—यदि तुमने जीवन मे एक वार भी ईश्वर को अप्रसन्न किया है तो जीवन-भर उससे क्षमा याचना करते रहो। क्योकि यदि वह अपनी कृपा से क्षमा भी करदे तो भी तुम्हारे हृदय में सदैव वह पश्चाताप रहना चाहिए कि तुमने ईश्वर को अप्रसन्न किया है।

—करने योग्य सगत वही है जो आँख से अन्धी, कान से वहरी और जीभ से गूँगी हो। अर्थात ऐसे मनुष्य की संगत करनी चाहिए जो अपनी आँख से ईश्वर के अतिरिक्त किसी को न देखता हो, जो अपने कानो से ईश्वर के गुणानुवाद के अतिरिक्त अन्य वात को न सुनता हो, और जीभ से ईश्वर के गुणानुवाद के अतिरिक्त कुछ न कहता है। तथा संगत करने वाला अपनी आँख से उस महापुरुष के अतिरिक्त किसी को न देखे, अपने कानों से उस महापुरुष की वात के अतिरिक्त किसी की वात न सुने और अपनी जीभ से उस महापुरुष के अतिरिक्त किसी का जिक्र न करे।)

—अफसोस है उस पक्षी पर जो अपने घोसले से दाने की खोज मे निकल कर घोसले का रास्ता भूल जाय और हर तरफ भटकता फिरे।

—वास्तव मे गरीव वही है जिसका संसार मे कोई साथी न हो। परन्तु मैं अपने आपको गरीव इसलिए नही कहता कि न तो मैं ससार और ससार वालो के अनुकूल हूँ और न

ससार ही मेरे अनुकूल है। (अर्थात मै गरीब नही हूँ क्योकि मेरा साथी ईश्वर है।)

—सत-जन ससार और सासारिक धन-सम्पत्ति से प्रसन्न नही हुआ करते।

–ईश्वर अपने भक्तो को तीन पद प्रदान करता है-पहला यह कि वह ईश्वर-दर्शन करने का गौरव प्राप्त करके "ईश्वर-ईश्वर" कहता रहे। दूसरा यह कि वह आनन्दातिरेक की अवस्था (वज्द) मे ईश्वर को पुकारता फिरे। और तीसरा यह कि वह ईश्वर की जीभ बन कर "ईश्वर-ईश्वर कहे।

—भक्त चार चीजो के द्वारा ईश्वर के साथ व्यवहार करता है—पहली, शरीर के द्वारा। दूसरी, हृदय के द्वारा। तीसरी जीभ के द्वारा। और चौथी, धन के द्वारा। परन्तु यदि भक्त केवल शरीर के द्वारा ईश्वर का आज्ञा पालन और जीभ से उसके नाम का जाप करना तो उसके लिए लाभदायक न होता क्योकि हृदय को उसके सुपुर्द करना और धन-सम्पत्ति को उसके मार्ग मे व्यय करना अति आवश्यक है। और जब इन चारो वस्तुओ को उसके मार्ग मे लगादे तो ईश्वर से यह चार वस्तुएँ माँगे-प्रेम, भय, भक्ति और धर्मानुसार जीवन।

—ईश्वर ने प्रत्येक मनुष्य को किसी न किसी काम मे व्यस्त करके अपने से अलग कर दिया। परन्तु भक्ति यह है कि तुम सारी चीजो को छोड़कर ईश्वर को इस तरह पकड़ लो कि वह तुम्हे अपने से अलग ही न कर सके। (भक्त सूरदासजी तो ईश्वर को चुनौती ही दे बैठते है—

बाँह छुड़ाए जात हो निर्बल जान के मोय।
हृदय में से जाओगे सबल जानुँगा तोय॥

—पृथ्वी पर चलने-फिरने वाले मनुष्य मृत है और जमीन में दफ्न हुए बहुत-से लोग जीवित हैं।

—जिसका हृदय ईश्वर के शौक की अग्नि मे जल जाता है उसको प्रेम उठा कर ले जाता है और उससे पृथ्वी और आकाश को भर देता है। अतः यदि तुम यह चाहते हो कि देखने, सुनने और चखने वाले बन जाओ तो वहाँ उपस्थित रहो। परन्तु वहाँ उपस्थित रहने के लिए पवित्रता, निर्मलता और भक्ति की आवश्यकता है। (अर्थात संतो के सत्सग में जो मनुष्य मन-क्रम-वचन से पवित्र मन और भक्तिभाव से उपस्थित रहता है उसे वहाँ देखने को ईश्वर-दर्शन, सुनने को ईश्वर के रहस्य और चखने को आनन्दमय कोश का प्रेमामृत प्राप्त हो जाता है।

—भक्ति और पापो की बात छोड़कर कृपा के समुद्र और निर्मलता की नदी मे इस तरह गोता लगाओ कि अपने अस्तित्व को मिटा कर ईश्वर के अस्तित्व मे उभरो।

—ईश्वर-रूपी नदी मे मनुष्य का विश्वास घास-फूस की तरह कोई महत्व नही रखता क्योकि हवा उसको किनारे पर फेंक देती है।

—विद्वान विद्या को, भक्त भक्ति का और तपस्वी तपस्या को अध्यात्म-ज्ञान प्राप्त करने का साधन समझ कर ईश्वर के सामने पेश करते हैं, परन्तु यह सब चीजे व्यर्थ हैं क्योकि ईश्वर-प्राप्ति का साधन केवल पवित्रता अर्थात निर्मलता है और ईश्वर पवित्रता (निर्मलता) को ही पसन्द करता है।

—जिसका जीवन ईश्वर की भक्ति मे व्यतीत नही होता वह अपने मन, हृदय और आत्मा पर अधिकार नही रख सकता।

—शिष्य अपने गुरु की जितनी सेवा करता है उतने ही उसके अध्यात्म पद बढ़ते चले जाते है।

—साधारण लोग तो नदी मे मछली पकड़ते है परन्तु भक्त सूखे में मछली पकडते है। साधारण लोग तो सूखे मे सोते हैं परन्तु भक्त नदी मे आराम करते है। (गीता मे इसी बात को यूं कहा गया है कि जो साधारण मनुष्य के लिए दिन है वही भक्तों के लिए रात है और जो साधारण मनुष्य के लिए रात है वही भक्तो के लिए दिन है।)

—ससार मे एक हजार इच्छाओ की बलि चढ़ा देने के बाद परलोक मे एक इच्छा पूरी होती है और एक हजार जहर के कड़वे घूंट पी लेने के बाद शरबत के एक घूंट पीने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

—हजारो नायक कब्रो मे जा सोए परन्तु धर्म-नायक होने के योग्य एक भी न बन सका।

—फना (ईश्वर मे लयता), बका (ईश्वर मे वास), दर्शन और पवित्रता (निर्मलता), यह चार चीजे मृत्यु मे छिपी हुई है। (अर्थात साधक जब तक भक्ति मे लीन होकर अपने अस्तित्व को समाप्त नही कर देता जब तक यह चार चीजें उसे प्राप्त नही होती, क्योकि ईश्वर के दर्शन हो जाने के बाद ईश्वर के अतिरिक्त कुछ बाकी नही रहता जिससे साधक का अस्तित्व प्रकट हो सके—उसका हर कर्म ईश्वर द्वारा

चालित होता है। अतः इस अवस्था में वह जीवित भी मृत समान होता है।)

—संसार मे मनुष्यता के साथ जीवन यापन करने वालो को दुख-तकलीफ नही होती।

—व्रत और उपासना को नियमानुसार करने वाला ससार के निकट होता है। अध्यात्म-ज्ञान से सत्य तक एक हजार पडाव है, और सत्य से परम-सत्य तक ऐसे पड़ाव है कि हर पड़ाव से गुजरने के लिए अनन्त आयु और पैगम्बरो के हृदय जैसी शुद्धता और पवित्रता (निर्मलता) की आवश्यकता है।

—हृदय तीन प्रकार के होते है—पहला, खाली हृदय जो फुक्र (दैन्य) का घर है। दूसरा, ईश्वर की कृपा का इच्छुक हृदय जो ईश्वर का सिंहासन है । और तीसरा, अवशिष्ट (वाकी, वचा हुआ) हृदय जो ईश्वर का वास-स्थान है।

—भजन:पूजन करने वाले तो बहुत है, परन्तु भजन-पूजन को ससार से अपने साथ ले जाने वाले वहुत कम। और उनसे भी कम वो है जो भजन-पूजन करके ईश्वर को अर्पण कर देते है। परन्तु वास्तविक भक्ति यही है कि सांसारिक जीवन मे किए हुए भजन-पूजन को मृत्यु के समय अपने साथ ले जाए।

—प्रेम के समुद्र मे ससार का प्रवेश नही और एक स्थान ऐसा भी है जिसमे मनुष्य के ज्ञान और विज्ञान (इल्म-व-कमाल का प्रवेश नही। (जव साधक आनन्दमय कोश मे प्रवेश करता है तो उसका ज्ञान-विज्ञान सव विज्ञानमय कोश में पीछे ही रह जाता है। इसी तथ्य की ओर इशारा है।

—अज्ञानी है वह मनुष्य जो ईश्वर को तर्क के द्वारा पहचानना चाहते है, क्योकि ईश्वर को केवल उसकी कृपा से पहचानने की आवश्यकता है। और अध्यात्म-ज्ञान के लिए तमाम तर्क व्यर्थ हैं।

—ईश्वर को प्राप्त कर लेने के बाद प्रेमी स्वय गुम हो जाते है।

—लोहे-महफूज (वह पटिया जिस पर मनुष्य के सम्पूर्ण कर्म लिखे होते है और जिसमें कोई हेर-फेर नही हो सकता) की चीजे सांसारिक मनुष्यो के लिए है। उनका सम्बन्ध ईश्वर भक्तो से नही है, क्योकि ईश्वर अपने भक्तो को वह दिव्य वस्तुएँ प्रदान करता है जो लोहे-महफूज मे नही है।

—संसार मे दुख-तकलीफ सहन करते रहो, हो सकता है कि इसके बदले मे सद्गति प्राप्त हो जाए। और ससार मे रोते रहो ताकि परलोक मे मुस्करा सको और वहाँ तुम से यह कहा जाय कि क्योकि तुम ससार मे रोते रहे इसलिए आज तुम्हे प्रसन्नता प्रदान की जाती है जो हमेशा हमेशा कायम रहेगी।

—तमाम पैगम्बर और संत जीवन-भर इस दुख मे दुखी रहे कि काश ईश्वर को जान सकते। क्योकि जिस तरह ईश्वर को वास्तव मे जानना चाहिए था जीवन मे उस तरह न जान सके। (इसी बात को सत कबीर ने इस तरह कहा है—

जा मरन से जग डरै मोहि अति आनन्द।
कब मरिहों कब पाइहों पूरन ब्रह्मानन्द॥

अर्थात् जीवन मे तो ईश्वर के पूर्ण स्वरूप का दर्शन कर न पाए, अब मृत्यु के पश्चात् उसके पूर्ण स्वरूप के दर्शन की आशा है।)

—प्रेम की पराकाष्ठा यह है कि यदि संसार के तमाम समुद्रो का पानी भी प्रेम करने वाले के हलक मे उड़ेल दिया जाय तब भी उसकी प्यास न बुझ सके तथा और पीने की इच्छा बाकी रहे—

महफिल में छलकता है पैमाने पे पैमाना।
प्यासा है मगर साक़ी फिर भी तेरा दीवाना॥

—ग़ाफ़िल बरनी

—ईश्वर से सम्बन्ध तोडकर अपनी सिद्धियो और चमत्कारो पर अभिमान न करो।

—सच्ची भक्ति तो यह है कि यदि ईश्वर किसी साधक को एक सिद्धि और उसके साथी दूसरे साधक भाई को एक हजार सिद्धियाँ प्रदान कर दे तब भी वह अपनी एक सिद्धि को त्याग की भावना के अन्तर्गत अपने भाई को भेट कर दे।

—अपनी सामर्थ्य के अनुसार अतिथि का सत्कार करते रहो, क्योकि यदि अतिथि को लोक-परलोक के दिव्य भोजन भी खिला दोगे तब भी अतिथि-सत्कार का कर्त्तव्य पूरा नहीं हो सकता।

—किसी सन्त-महात्मा के दर्शन के लिए पूरब से पश्चिम तक यात्रा करने के कष्टो का फल उसके दर्शन के फल से कम है।

—साधक के लिए हर जगह मस्जिद है और हर दिन शुक्रवार है और हर महीना रमजान का महीना है। (मुसलमान भाई शुक्रवार को सामूहिक नमाज अदा करते है और रमजान के महीने मे रोजे (वृत) रखते है। सन्त खिरकानी कहते है कि साधक के लिए मस्जिद या मन्दिर ही नही बल्कि हर स्थान पूजा-स्थल है और उसे चाहिए कि कही भी बैठकर ध्यान-भजन-पूजा कर ले। शुक्रवार ही नही बल्कि प्रत्येक दिन सामूहिक ध्यान-भजन-पूजा करना चाहिए। और रमजान के महीने का वर्ष भर इन्तजार करने के बजाय हर महीना रोजा रखने का महीना है।)

—आप कहा करते थे कि मरने के बाद भी मैं अपने शिष्यो और अनुयायियो की उनके मृत्यु के समय सहायता करूँगा और जिस समय यमदूत उनके प्राणो को हरना चाहेगा तो मैं अपनी कब्र से हाथ निकाल कर उनके मुख पर ईश्वरीय-आनन्द का छीटा मार दूंगा ताकि अन्तिम समय के कष्टो के कारण वह ईश्वर का सुमिरन करना न भूले।

महाप्रयाण

जब आपको यह निश्चय हो गया कि अब मेरा ससार से कूच करने का समय आ गया है तो आपने कहा—काश, मेरा हृदय चीरकर संसार को दिखाया जाता तो उनको यह हकीकत (सत्य) मालूम हो जाती कि ईश्वर की मूर्ति-पूजा सही नही।

फिर लोगो से कहा कि मुझे जमीन से तीन गज नीचे दफन करना क्योकि इस शहर खिरकान की जमीन शहर

बिस्ताम की पवित्र जमीन से अधिक ऊँची है और आदर और शिष्टता तथा सदाचार की माँग यह है कि मेरी समाधि सूफी-सन्त महात्मा बायजीद बिस्तामी की समाधि से ऊँची न हो। अतः इस वसीअत के अनुसार आपको दफ्न कर दिया गया। परन्तु आपकी मृत्यु के दूसरे ही दिन एक बिजली-सी चमकी और लोगो ने देखा कि एक सफेद पत्थर आपकी समाधि पर रखा हुआ है और पास ही जमीन पर शेर के पैरो के ताजा निशान हैं। इससे यह अनुमान लगाया गया कि यह पत्थर शेर ने ही लाकर रखा है। और कुछ लोग कहते है कि आपकी समाधि के आस-पास शेर को घूमते हुए भी देखा गया। परन्तु जन-साधारण मे यही विश्वास प्रसिद्ध है कि आपकी समाधि पर जो भी प्रार्थना की जाएगी वह अवश्य स्वीकार होगी, और बहुत से अनुभव भी इस बात के साक्षी है।

आपके परलोक सिधारने के पश्चात् कुछ लोगो ने स्वप्न मे देखकर आप से प्रश्न किया कि ईश्वर ने आपके साथ कैसा व्यवहार किया। आपने कहा—मेरा कर्म-पत्र मेरे हाथ मे दे दिया गया। इस पर मैंने विनय की कि तू मुझे कर्म-पत्र मे क्यों उलझाना चाहता है, जबकि मेरे कर्म करने से पहले ही तू मुझ से अच्छी प्रकार परिचित था कि मैं किस प्रकार के कर्म करूँगा। अतः मेरा कर्म-पत्र फरिश्तों को देकर मुझे इस झंझट से मुक्त कर दे ताकि मैं हर समय तुझ से बात करता रहूँ और तेरा भजन-पूजन करता रहूँ।

सफलता की कुञ्जी

सूफी महात्मा मुहम्मद-बिन-हुसैन कहते हैं कि एक बार मैं बहुत बीमार हुआ तो मैं इस विचार से बहुत भयभीत हुआ

कि अब मेरी मृत्यु हो जाएगी। उस समय एक दिन सन्त खिरकानी मुझे देखने और मेरा हाल पूछने आए और मुझे परेशान देखकर बोले कि परेशानी की कोई बात नही। तुम शीघ्र स्वस्थ हो जाओगे। मैंने कहा कि बीमारी का नही बल्कि मृत्यु का भय है। आपने कहा—मौत से भयभीत नही होना चाहिए क्योकि यदि मैं तुम से बीस वर्ष पहले भी मर जाऊँगा तब भी तुम्हारी मृत्यु के समय तुम्हारे पास आ जाऊँगा। इसलिए तुम मौत से मत डरो। इसके बाद मै स्वस्थ हो गया। महात्मा मुहम्मद-बिन-हुसैन के पुत्र फरमाते है कि जब सन्त अबुल हसन खिरकानी के परलोक सिधारने के ठीक बीस वर्ष बाद मेरे पिता की मृत्यु का समय आया तो वह अन्तिम समय मे इस तरह खड़े हो गए जैसे कोई किसी के आदर-सत्कार के लिए खडा हो जाता है, फिर "आलेकुम अस्सलाम" कहा। और जब मैंने पूछा कि आपके सामने कौन है जिसको आप सलाम कर रहे है, तो बोले कि मेरे सत्गुरु महाराज सन्त अबुल हसन खिरकानी ने मेरे अन्तिम समय आने का वादा किया था, अतः वह तशरीफ ले आए है और बहुत मे अन्य सूफी-सन्त भी आपके साथ हैं, और मुझ से कह रहे हैं कि मौत से मत डरो। इतना कहते ही उनका देहावसान हो गया। यह कथा इस रहस्य की ओर इशारा करती है कि गुरु चाहे ससार मे हो या न हो, हर समय अपने शिष्यो की, अपने अनुयायियो की रक्षा करते रहते है। अतः साधको को अपने गुरु पर पूर्ण श्रद्धा-विश्वास रखना चाहिए—यही साधना में सफलता की कुन्जी है।

सहायक पुस्तकों और ग्रन्थों की सूची

१. तज़किरातुल-औलिला — हजरत शेख फरीदुद्दीन अत्तार
अनुवादक — मौलाना कारी मौहम्मद आदिल खान
प्रकाशक — कुतुबखाना इशाअत, चूड़ीवालान, दिल्ली

२. कश्फुल-महजूब — हजरत शेख अली हिजवीरी दाता गज बख्श
अनुवादक — मियाँ तुफैल मौहम्मद
प्रकाशक — मरकजी मकतबा इस्लामी, दिल्ली–६

३. सूफीमत साधना और साहित्य — प्रो० रामपूजन तिवारी
प्रकाशक — ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी

४ हयाते-तैयबा
ख्वाजा हाजी शरीफ जिन्दनी — अल्लामा अखलाक हुसैन देहलवी
प्रकाशक — कुतुबखाना अन्जुमन तरक्की-ए-उर्दू, उर्दू बाजार, जामा मस्जिद, दिल्ली

५. सन्तमहात्मा ओ का जीवन चरित्र संग्रह — बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स,
प्रकाशक एवं मुद्रक इलाहाबाद

६ श्रीमद्भगवत गीता तत्व — टीकाकार : ब्रह्मलीन संत
विवेचनी हिन्दी टीका सहित श्री जयदयाल गोयन्दका
प्रकाशक — गीता प्रेस, गोरखपुर

७ श्री भागवत सुधा-सागर
प्रकाशक — गीता प्रेस, गोरखपुर

८. हज़रत मौलाना शाह फज्ल अहमद खाँ रायपुरी— बाल कुमार खरे
प्रकाशक — सर्वोदय साहित्य प्रकाशन, वाराणसी